अध्याय १५

महाप्रभु द्वारा सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर प्रसाद स्वीकार करना

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में इस अध्याय का सारांश इस प्रकार दिया है : रथयात्रा उत्सव के बाद श्री अद्वैत आचार्य प्रभु ने पुष्पों तथा तुलसी दल से श्री चैतन्य महाप्रभु की पूजा की। बदले में श्री चैतन्य महाप्रभु ने भी थाल में बचे फूलों तथा तुलसीदल से अद्वैत आचार्य की पूजा *योऽसि सोऽसि नमोऽस्तु ते* (आप जैसे भी हों—मैं आपका आदर करता हूँ) मन्त्र पढ़कर की। इसके बाद अद्वैत आचार्य प्रभु ने श्री चैतन्य महाप्रभु को प्रसाद ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया। जब श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके भक्तों ने नन्दोत्सव मनाया, तब महाप्रभु ने ग्वालबाल का वेश धारण किया। इस तरह यह उत्सव अत्यन्त उल्लासपूर्ण रहा। इसके बाद महाप्रभु तथा उनके भक्तों ने विजयदशमी उत्सव मनाया—वह दिन जिस दिन भगवान् रामचन्द्र ने लंका को जीता था। इसमें सारे भक्त भगवान् रामचन्द्र के सैनिक बन गये और श्री चैतन्य महाप्रभु ने हनुमान के आवेश में विविध दिव्य आनन्ददायक कार्यकलाप कर दिखाये। तत्पश्चात् महाप्रभु तथा उनके भक्तों ने विविध अन्य उत्सव सम्पन्न किये।

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने सभी भक्तों से बंगाल लौट जाने को कहा। उन्होंने नित्यानन्द प्रभु को बंगाल में प्रचार-कार्य के लिए भेजा तथा उनके साथ रामदास, गदाधर दास तथा अन्य कुछ भक्तों को भी भेजा। इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने बड़ी नम्रता सहित श्रीवास ठाकुर के हाथ अपनी माता के

लिए थोड़ा-सा जगन्नाथजी का प्रसाद तथा उनका वस्त्र भेजा। जब महाप्रभु ने राघव पण्डित, वासुदेव दत्त, कुलीन ग्राम के निवासियों तथा अन्य भक्तों को विदाई दी तो उन्होंने उनके दिव्य गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। रामानन्द वसु तथा सत्यराज खान ने कुछ प्रश्न पूछे और श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें आदेश दिया कि सभी गृहस्थ भक्तों को निरन्तर भगवन्नाम का कीर्तन करने वाले वैष्णवों की सेवा में ही लगना चाहिए। उन्होंने खण्ड के वैष्णवों को भी निर्देश दिया। इसी तरह सार्वभौम भट्टाचार्य तथा विद्यावाचस्पति को भी उपदेश दिया और भगवान् रामचन्द्र के चरणकमलों में दृढ़ श्रद्धा के लिए मुरारि गुप्त की प्रशंसा की। वासुदेव दत्त की विनीत प्रार्थना पर विचार करते हुए उन्होंने यह सिद्ध किया कि भगवान् श्रीकृष्ण समस्त बद्धजीवों का उद्धार करने में समर्थ हैं।

तत्पश्चात् जब श्री चैतन्य महाप्रभु सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर प्रसाद ग्रहण कर रहे थे, तो सार्वभौम के दामाद अमोघ ने उनकी आलोचना करके परिवार में उत्पात खड़ा कर दिया। अगले ही दिन उसे विसूचिका रोग (हैजा) हो गया। तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने दया करके उसे बचाया और उसे भगवान् कृष्ण के नाम-कीर्तन के प्रति जाग्रत किया।

सार्वभौम-गृहे भुञ्जन्स्व-निन्दकममोघकम् ।
अङ्गी-कुर्वन्स्फुटां चक्रे गौरः स्वां भक्त-वश्यताम् ॥ १ ॥

सार्वभौम-गृहे—सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर; **भुञ्जन्**—प्रसाद ग्रहण करते समय; **स्व-निन्दकम्**—उनकी निन्दा करने वाले व्यक्ति को; **अमोघकम्**—अमोघ नामक; **अङ्गी-कुर्वन्**—स्वीकार करके; **स्फुटाम्**—प्रकट किया; **चक्रे**—बनाया; **गौरः**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **स्वाम्**—अपने आपको; **भक्त-वश्यताम्**—अपने भक्तों का कृतज्ञ।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर प्रसाद ग्रहण कर रहे थे, तब अमोघ ने उनकी आलोचना की। फिर भी महाप्रभु ने

अमोघ को स्वीकार करके दिखला दिया कि वे अपने भक्तों के कितने कृतज्ञ हैं।

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥२॥

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २ ॥

जय जय—जय हो; **श्री-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत चन्द्र प्रभु की जय हो; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! नित्यानन्द प्रभु की जय हो! अद्वैतचन्द्र की जय हो तथा चैतन्य महाप्रभु के समस्त भक्तों की जय हो!

जय श्री-चैतन्य-चरितामृत-स्रोता-गण ।
चैतन्य-चरितामृत——याँर प्राण-धन ॥३॥

जय श्री-चैतन्य-चरितामृत-स्रोता-गण ।
चैतन्य-चरितामृत——याँर प्राण-धन ॥ ३ ॥

जय—जय जय; **श्री-चैतन्य-चरितामृत-श्रोता-गण**—*श्री चैतन्य चरितामृत* के श्रोताओं की; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत;* **याँर**—जिनका; **प्राण-धन**—प्राण तथा आत्मा।

अनुवाद

श्री चैतन्य-चरितामृत के श्रोताओं की जय हो, जिन्होंने इसे अपना प्राण तथा आत्मा मान रखा है!

एइ-मत महाप्रभु भक्त-गण-सङ्गे ।
नीलाचले रहि' करे नृत्य-गीत-रङ्गे ॥४॥

एइ-मत महाप्रभु भक्त-गण-सङ्गे ।
नीलाचले रहि' करे नृत्य-गीत-रङ्गे ॥ ४ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **भक्त-गण-सङ्गे**—अपने भक्तों के साथ; **नीलाचले रहि'**—नीलाचल, जगन्नाथ पुरी में ठहरकर; **करे**—किया; **नृत्य-गीत-रङ्गे**—अति प्रसन्न होकर गायन तथा नृत्य।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ पुरी में रहते हुए अपने भक्तों के साथ निरन्तर कीर्तन और नर्तन का आनन्द लेते रहे।

প্রথমাবসরে জগন্নাথ-দরশন ।
নৃত্য-গীত করে দণ্ড-পরণাম, স্তবন ॥৫॥

प्रथमावसरे जगन्नाथ-दरशन ।
नृत्य-गीत करे दण्ड-परणाम, स्तवन ॥५॥

प्रथम-अवसरे—दिन के आरम्भ में; **जगन्नाथ-दरशन**—प्रभु जगन्नाथ के दर्शन करके; **नृत्य-गीत करे**—नृत्य और गायन किया; **दण्ड-परणाम**—दण्डवत् प्रणाम किया; **स्तवन**—प्रार्थना (स्तुति) की।

अनुवाद

दिन आरम्भ होते ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने मन्दिर में भगवान् जगन्नाथ के अर्चाविग्रह के दर्शन किये, उन्हें नमस्कार किया, उनकी स्तुति की और उनके समक्ष नाचा-गाया।

'উপল-ভোগ' লাগিলে করে বাহিরে বিজয় ।
হরিদাস মিলি' আইসে আপন নিলয় ॥৬॥

'उपल-भोग' लागिले करे बाहिरे विजय ।
हरिदास मिलि' आइसे आपन निलय ॥६॥

उपल-भोग लागिले—उपल भोग लगाते समय; **करे बाहिरे विजय**—वे बाहर खड़े रहे; **हरिदास मिलि'**—हरिदास ठाकुर से मिलकर; **आइसे**—वापस आये; **आपन निलय**—अपने घर को।

अनुवाद

मन्दिर में जाने के बाद, श्री चैतन्य महाप्रभु उपलभोग के समय मन्दिर

के बाहर रहते थे। तब वे हरिदास ठाकुर से मिलने जाते और फिर अपने निवासस्थान लौट आते थे।

तात्पर्य

दोपहर के समय जब *भोग-वर्धन-खण्ड* नामक स्थान में *उपलभोग* अर्पित किया जाता, तब श्री चैतन्य महाप्रभु मन्दिर के बाहर चले जाते। बाहर जाने के पूर्व वे गरुड़ स्तम्भ के पास खड़े होकर नमस्कार और प्रार्थना करते थे। बाद में सिद्धबकुल जाते, जहाँ हरिदास ठाकुर रहते थे। हरिदास ठाकुर से भेंट करने के बाद वे काशी मिश्र के घर लौट आते जहाँ पर वे रह रहे थे।

ঘরে বসি' করে প্রভু নাম সঙ্কীর্তন ।
অদ্বৈত আসিয়া করে প্রভুর পূজন ॥৭॥

घरे वसि' करे प्रभु नाम सङ्कीर्तन ।
अद्वैत आसिया करे प्रभुर पूजन ॥७॥

घरे वसि'—अपने कमरे में बैठकर; **करे**—करते; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **नाम सङ्कीर्तन**—माला पर जप; **अद्वैत**—अद्वैत आचार्य ने आकर; **आसिया**—आकर; **करे**—की; **प्रभुर पूजन**—महाप्रभु की पूजा।

अनुवाद

महाप्रभु अपने कमरे में बैठकर माला पर जप करते और अद्वैत प्रभु वहाँ पर महाप्रभु की पूजा करने आया करते।

সুগন্ধি-সলিলে দেন পাদ্য, আচমন ।
সর্বাঙ্গে লেপয়ে প্রভুর সুগন্ধি চন্দন ॥৮॥

सुगन्धि-सलिले देन पाद्य, आचमन ।
सर्वाङ्गे लेपये प्रभुर सुगन्धि चन्दन ॥८॥

सु-गन्धि-सलिले—सुगन्धित जल; **देन**—दिया; **पाद्य**—पाँव धोने के लिए जल; **आचमन**—मुख धोकर; **सर्व-अङ्गे**—सारे शरीर पर; **लेपये**—लगाया; **प्रभुर**—महाप्रभु के; **सु-गन्धि चन्दन**—सुगन्धित चन्दन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की पूजा करते समय अद्वैत आचार्य उन्हें मुँह तथा

पाँव धोने के लिए सुगन्धित जल दिया करते। फिर अद्वैत आचार्य महाप्रभु के पूरे शरीर में सुगन्धित चन्दन का लेप किया करते।

गले माला देन, माथाय तुलसी-मञ्जरी ।
योड़-हाते स्तुति करे पदे नमस्करि' ॥ ९ ॥

गले माला देन, माथाय तुलसी-मञ्जरी ।
योड़-हाते स्तुति करे पदे नमस्करि' ॥ ९ ॥

गले—गले में; **माला**—माला; **देन**—पहनाते; **माथाय**—सिर पर; **तुलसी-मञ्जरी**—तुलसी मंजरी; **योड़-हाते**—दोनों हाथ जोड़कर; **स्तुति करे**—स्तुति करते; **पदे**—चरणकमलों पर; **नमस्करि'**—नमस्कार करके।

अनुवाद

श्री अद्वैत आचार्य महाप्रभु के गले में फूल की माला और सिर पर तुलसी की मंजरी चढ़ाया करते थे। फिर हाथ जोड़कर उन्हें नमस्कार करते और उनकी स्तुति करते थे।

पूजा-पात्रे पुष्प-तुलसी शेष ये आछिल ।
सेइ सब लञा प्रभु आचार्ये पूजिल ॥ १० ॥

पूजा-पात्रे पुष्प-तुलसी शेष ये आछिल ।
सेइ सब लञा प्रभु आचार्ये पूजिल ॥ १० ॥

पूजा-पात्रे—पूजा के फूल और तुलसी दल वाली प्लेट पर; **पुष्प-तुलसी**—पुष्प और तुलसी; **शेष**—शेष (बाकी); **ये आछिल**—जो कुछ वहाँ थे; **सेइ सब**—वे सब; **लञा**—लेकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **आचार्ये पूजिल**—अद्वैत आचार्य की पूजा की।

अनुवाद

इस तरह अद्वैत आचार्य द्वारा पूजे जाने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु थाल में बचे फूलों तथा तुलसी मंजरी एवं जो कुछ सामग्री बची होती, उससे अद्वैत आचार्य की पूजा करते।

"योऽसि सोऽसि नमोऽस्तु ते" एई मन्त्र पड़े ।
मुख-वाद्य करि' प्रभु हासाय आचार्येरे ॥ ११ ॥

"ग्रोऽसि सोऽसि नमोऽस्तु ते" एइ मन्त्र पड़े ।
मुख-वाद्य करि' प्रभु हासाय आचार्य्येर ॥ ११ ॥

ग्रः असि—आप जो कुछ भी हैं; **सः असि**—आप वही हैं; **नमः अस्तु ते**—मैं आपको नमस्कार करता हूँ; **एइ मन्त्र पड़े**—यह मंत्र पढ़ते; **मुख-वाद्य करि'**—मुख में कुछ ध्वनि करके; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हासाय**—हँसाते; **आचार्य्येर**—अद्वैत आचार्य को।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु "आप जैसे भी हो, हो। लेकिन मैं आपको नमस्कार करता हूँ"—इस मन्त्र का उच्चारण करके अद्वैत आचार्य की पूजा करते थे। इसके अतिरिक्त भी महाप्रभु अपने मुँह के भीतर कुछ ध्वनि करते, जिससे अद्वैत आचार्य को हँसी आ जाती।

এই-মত অন্যোন্যে করেন নমস্কার ।
প্রভুরে নিমন্ত্রণ করে আচার্য বার বার ॥ ১২ ॥
एइ-मत अन्योन्ये करेन नमस्कार ।
प्रभुरे निमन्त्रण करे आचार्य्य बार बार ॥ १२ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **अन्योन्ये**—एक दूसरे को; **करेन**—करते थे; **नमस्कार**—सादर नमस्कार; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **निमन्त्रण**—निमंत्रण; **करे**—देते थे; **आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य; **बार बार**—बारम्बार।

अनुवाद

इस तरह अद्वैत आचार्य तथा श्री चैतन्य महाप्रभु एक-दूसरे को सादर नमस्कार करते थे। तब अद्वैत आचार्य श्री चैतन्य महाप्रभु को बारम्बार अपने यहाँ आने का निमन्त्रण देते।

আচার্যের নিমন্ত্রণ—আশ্চর্য-কথন ।
বিস্তারি' বর্ণিয়াছেন দাস-বৃন্দাবন ॥ ১৩ ॥
आचार्य्येर निमन्त्रण—आश्चर्य्य-कथन ।
विस्तारि' वर्णियाछेन दास-वृन्दावन ॥ १३ ॥

आचार्य्येर निमन्त्रण—अद्वैत आचार्य का निमंत्रण; **आश्चर्य्य-कथन**—आश्चर्यजनक कथा;

विस्तारि'—बहुत स्पष्ट रूप से; **वर्णियाछेन**—वर्णन किया है; **दास-वृन्दावन**—वृन्दावन दास ठाकुर।

अनुवाद

श्री अद्वैत आचार्य का निमन्त्रण दूसरी अद्भुत कथा है। इसका विस्तृत स्पष्ट वर्णन वृन्दावन दास ठाकुर ने किया है।

पुनरुक्ति हय, ताहा ना कैलुँ वर्णन ।
आर भक्त-गण करे प्रभुरे निमन्त्रण ॥ १४॥

पुनरुक्ति हय, ताहा ना कैलुँ वर्णन ।
आर भक्त-गण करे प्रभुरे निमन्त्रण ॥ १४॥

पुनः-उक्ति—दोहराना; **हय**—है; **ताहा**—वह; **ना**—नहीं; **कैलुँ**—मैंने किया; **वर्णन**—वर्णन; **आर भक्त-गण**—अन्य भक्त; **करे**—करते; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **निमन्त्रण**—निमंत्रण।

अनुवाद

चूँकि अद्वैत आचार्य के निमन्त्रण का वर्णन श्रील वृन्दावन दास ठाकुर कर चुके हैं, अतएव मैं इस कथा को नहीं दुहराऊँगा। किन्तु मैं यह कहूँगा कि अन्य भक्तों ने भी महाप्रभु को निमन्त्रण दिये।

एक एक दिन एक एक भक्त-गृहे महोत्सव ।
प्रभु-सङ्गे ताहाँ भोजन करे भक्त सब ॥ १५॥

एक एक दिन एक एक भक्त-गृहे महोत्सव ।
प्रभु-सङ्गे ताहाँ भोजन करे भक्त सब ॥ १५॥

एक एक दिन—प्रतिदिन; **एक एक भक्त-गृहे**—एक के बाद दूसरे भक्त के घर में; **महोत्सव**—महोत्सव; **प्रभु-सङ्गे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **ताहाँ**—वहाँ; **भोजन**—भोजन; **करे**—किया; **भक्त**—भक्तों ने; **सब**—सभी।

अनुवाद

प्रतिदिन एक के बाद दूसरा भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु तथा अन्य भक्तों को भोजन के लिए निमन्त्रण देता और अपने यहाँ उत्सव मनाता।

চারি-মাস রহিলা সবে মহাপ্রভু-সঙ্গে ।
জগন্নাথের নানা যাত্রা দেখে মহা-রঙ্গে ॥ ১৬॥

চারি-মাস রহিলা সবে মহাপ্রভু-সঙ্গে ।
জগন্নাথের নানা যাত্রা দেখে মহা-রঙ্গে ॥ ১৬ ॥

চারি-মাস—चार मास; **রহিলা**—रहे; **সবে**—सारे भक्त; **মহাপ্রভু-সঙ্গে**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **জগন্নাথের**—भगवान् जगन्नाथ के; **নানা যাত্রা**—कई यात्रा उत्सव; **দেখে**—उन्होंने देखे; **মহা-রঙ্গে**—अत्यन्त आनन्द के साथ।

अनुवाद

सारे भक्त लगातार चार मास तक जगन्नाथ पुरी में रहे और उन्होंने बड़े ही उत्साह के साथ भगवान् जगन्नाथ के सारे उत्सव मनाये।

কৃষ্ণ-জন্ম-যাত্রা-দিনে নন্দ-মহোৎসব ।
গোপ-বেশ হৈলা প্রভু লঞা ভক্ত সব ॥ ১৭॥

কৃষ্ণ-জন্ম-যাত্রা-দিনে নন্দ-মহোৎসব ।
গোপ-বেশ হৈলা প্রভু লঞা ভক্ত সব ॥ ১৭ ॥

কৃষ্ণ-জন্ম-যাত্রা—कृष्ण जन्म का उत्सव; **দিনে**—के दिन पर; **নন্দ-মহোৎসব**—कृष्ण के पिता नन्द महाराज द्वारा आयोजित उत्सव; **গোপ-বেশ হৈলা**—ग्वाल बाल की वेशभूषा अपनाई; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **লঞা**—लेकर; **ভক্ত সব**—सभी भक्तों को।

अनुवाद

भक्तों ने कृष्ण जन्माष्टमी उत्सव भी मनाया, जिसे नन्द महोत्सव भी कहा जाता है। इस अवसर पर श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके भक्तों ने ग्वालों का वेश धारण किया।

দধি-দুগ্ধ-ভার সবে নিজ-স্কন্ধে করি' ।
মহোৎসব-স্থানে আইলা বলি 'হরি' 'হরি' ॥ ১৮॥

দধি-দুগ্ধ-ভার সবে নিজ-স্কন্ধে করি' ।
মহোৎসব-স্থানে আইলা বলি 'হরি' 'হরি' ॥ ১৮ ॥

দধি-দুগ্ধ—दही एवं दूध के; **ভার**—पात्र; **সবে**—वे सब; **নিজ-স্কন্ধে**—अपने कन्धों

पर; **करि'**—रखकर; **महोत्सव-स्थाने**—महोत्सव स्थान पर; **आइला**—आये; **बलि हरि हरि**—"हरि हरि" बोलते हुए।

अनुवाद

ग्वालों का वेश धारण करके तथा कंधे में बहँगी पर दूध तथा दही के बर्तन लेकर सारे भक्त 'हरि' 'हरि' का उच्चारण करते हुए महोत्सव-स्थल पर आये।

कानाञि-खुटिया आछेन 'नन्द'-वेश धरि' ।
जगन्नाथ-माहाति हञाछेन 'व्रजेश्वरी' ॥ १९॥

कानाञि-खुटिया आछेन 'नन्द'-वेश धरि' ।
जगन्नाथ-माहाति हञाछेन 'व्रजेश्वरी' ॥ १९॥

कानाञि-खुटिया—कानाइ खुटिया; **आछेन**—है; **नन्द-वेश धरि'**—नन्द महाराज का वेश धारण करके; **जगन्नाथ-माहाति**—जगन्नाथ माहाति; **हञाछेन**—था; **व्रजेश्वरी**—माता यशोदा।

अनुवाद

कानाइ खुटिया ने नन्द महाराज का वेश बनाया और जगन्नाथ माहाति ने माता यशोदा का वेश बना लिया।

आपने प्रतापरुद्र, आर मिश्र-काशी ।
सार्वभौम, आर पड़िछा-पात्र तुलसी ॥ २०॥

आपने प्रतापरुद्र, आर मिश्र-काशी ।
सार्वभौम, आर पड़िछा-पात्र तुलसी ॥ २०॥

आपने प्रतापरुद्र—राजा प्रतापरुद्र स्वयं; **आर**—और; **मिश्र-काशी**—काशी मिश्र; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **आर**—और; **पड़िछा-पात्र तुलसी**—पड़िचापात्र तुलसी, मन्दिर का अध्यक्ष।

अनुवाद

उस समय काशी मिश्र, सार्वभौम भट्टाचार्य तथा तुलसी पड़िछापात्र समेत राजा प्रतापरुद्र भी वहाँ उपस्थित थे।

ইঁহা-সবা লঞা প্রভু করে নৃত্য-রঙ্গ ।
দধি-দুগ্ধ হরিদ্রা-জলে ভরে সবার অঙ্গ ॥২১॥

ইঁহা-সবা লঞা প্রভু করে নৃত্য-রঙ্গ ।
দধি-দুগ্ধ হরিদ্রা-জলে ভরে সবার অঙ্গ ॥ ২১ ॥

ইঁহা-সবা লঞা—उन सबको लेकर; **প্রভু**—भगवान् चैतन्य महाप्रभु ने; **করে নৃত্য-রঙ্গ**—प्रसन्न होकर नृत्य किया; **দধি**—दही; **দুগ্ধ**—दूध; **হরিদ্রা**—हल्दी; **জলে**—जल से; **ভরে**—सरोबार कर दिये; **সবার**—उन सबके; **অঙ্গ**—शरीर।

अनुवाद

सदैव की तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने उल्लासपूर्वक नृत्य किया। सारे लोग दूध, दही तथा हल्दी के पीले जल से सराबोर हो गये।

অদ্বৈত কহে,—সত্য কহি, না করিহ কোপ ।
লগুড় ফিরাইতে পার, তবে জানি গোপ ॥২২॥

অদ্বৈত কহে,—সত্য কহি, না করিহ কোপ ।
লগুড় ফিরাইতে পার, তবে জানি গোপ ॥ ২২ ॥

অদ্বৈত কহে—अद्वैत आचार्य ने कहा; **সত্য কহি**—मैं सत्य कहता हूँ; **না করিহ কোপ**—कृपया क्रुद्ध न हो; **লগুড়**—डंडा; **দণ্ড**; **ফিরাইতে পার**—यदि आप घुमा सकते हो; **তবে জানি**—तब मैं समझूँगा; **গোপ**—ग्वाल बाल।

अनुवाद

तभी श्रील अद्वैत आचार्य ने कहा, "आप नाराज न हों। मैं सच कह रहा हूँ। यदि आप इस लाठी को चन্द্राकार रूप में घुमा सको, तो मैं समझूँगा कि आप ग्वाले हो।"

তবে লগুড় লঞা প্রভু ফিরাইতে লাগিলা ।
বার বার আকাশে ফেলি' লুফিয়া ধরিলা ॥২৩॥

তবে লগুড় লঞা প্রভু ফিরাইতে লাগিলা ।
বার বার আকাশে ফেলি' লুফিয়া ধরিলা ॥ ২৩ ॥

তবে—तब; **লগুড়**—छड़ी; **লঞা**—लेकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ফিরাইতে**

लागिला—घुमाने लगे; **बार बार**—बारम्बार; **आकाशे**—आकाश में; **फेलि'**—फेंकते हुए; **लुफिया**—उन्होंने फिर; **धरिला**—पकड़ लिया।

अनुवाद

अद्वैत आचार्य की चुनौती को स्वीकार करके श्री चैतन्य महाप्रभु ने बड़ी-सी लाठी ली और वे उसे चारों ओर घुमाने लगे। वे बार-बार लाठी को आकाश में उछालते और गिरते समय पकड़ लेते।

शिरेर उपरे, पृष्ठे, सम्मुखे, दुइ-पाशे ।
पाद-मध्ये फिराय लगुड़,—देखि' लोक हासे ॥२४॥

शिरेर उपरे, पृष्ठे, सम्मुखे, दुइ-पाशे ।
पाद-मध्ये फिराय लगुड़,—देखि' लोक हासे ॥ २४॥

शिरेर उपरे—सिर के ऊपर; **पृष्ठे**—पीठ के पीछे; **सम्मुखे**—सामने; **दुइ-पाशे**—दोनों ओर; **पाद-मध्ये**—दोनों पाँवों के बीच; **फिराय**—चारों ओर घुमाया; **लगुड़**—छड़ी को; **देखि'**—देखकर; **लोक हासे**—सारे लोग हँसने लगे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु अपनी लाठी को घुमाते और उछालते और कभी-कभी अपने सिर पर ले जाते, कभी पीठ पीछे, कभी सामने, कभी बगल में और कभी दोनों पाँवों के बीच। यह देखकर सारे लोग हँसने लगे।

अलात-चक्रेर प्राय लगुड़ फिराय ।
देखि' सर्व-लोक-चित्ते चमत्कार पाय ॥२५॥

अलात-चक्रेर प्राय लगुड़ फिराय ।
देखि' सर्व-लोक-चित्ते चमत्कार पाय ॥ २५॥

अलात-चक्रेर—जलती मशाल का चक्र; **प्राय**—की भाँति; **लगुड़ फिराय**—छड़ी को घुमाइ; **देखि'**—देखकर; **सर्व-लोक**—सभी लोग; **चित्ते**—मन में; **चमत्कार पाय**—अत्यन्त चकित हो गये।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु लाठी को अग्निबाण (अलातचक्र) की तरह घुमा रहे थे, तो देखने वालों के हृदय चमत्कृत हो गये।

এই-মত নিত্যানন্দ ফিরায় লগুড় ।
কে বুঝিবে তাঁহা দুঁহার গোপ-ভাব গূঢ় ॥২৬॥

एइ-मत नित्यानन्द फिराय लगुड़ ।
के बुझिबे ताँहा दुँहार गोप-भाव गूढ़ ॥ २६ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु ने; **फिराय लगुड़**—छड़ी को घुमाइ; **के**—कौन; **बुझिबे**—समझेगा; **ताँहा**—वहाँ; **दुँहार**—उन दोनों का; **गोप-भाव**—ग्वाल-भाव; **गूढ़**—बहुत गहरा।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु ने भी लाठी घुमाई। कौन समझ सकता है कि वे ग्वालों के भाव में कितने गहरे डूब गये थे?

প্রতাপরুদ্রের আজ্ঞায় পড়িছা-তুলসী ।
জগন্নাথের প্রসাদ-বস্ত্র এক লঞা আসি ॥২৭॥

प्रतापरुद्रेर आज्ञाय पड़िछा-तुलसी ।
जगन्नाथेर प्रसाद-वस्त्र एक लञा आसि ॥ २७॥

प्रतापरुद्रेर—राजा प्रतापरुद्र की; **आज्ञाय**—आज्ञा पाकर; **पड़िछा-तुलसी**—मन्दिर का अध्यक्ष तुलसी; **जगन्नाथेर**—भगवान् जगन्नाथ का; **प्रसाद-वस्त्र**—उपयोग किया हुआ वस्त्र; **एक**—एक; **लञा**—लेकर; **आसि**—आया।

अनुवाद

महाराज प्रतापरुद्र की आज्ञा पाकर मन्दिर का निरीक्षक तुलसी भगवान् जगन्नाथ के उतारे वस्त्रों में से एक वस्त्र ले आया।

বহু-মূল্য বস্ত্র প্রভু-মস্তকে বান্ধিল ।
আচার্যাদি প্রভুর গণেরে পরাইল ॥২৮॥

बहु-मूल्य वस्त्र प्रभु-मस्तके बान्धिल ।
आचार्य्यादि प्रभुर गणेरे पराइल ॥ २८ ॥

बहु-मूल्य—बहुत मूल्यवान; **वस्त्र**—वस्त्र; **प्रभु-मस्तके**—श्री चैतन्य महाप्रभु के सिर पर; **बान्धिल**—लपेट दिया; **आचार्य्य-आदि**—अद्वैत आचार्य आदि; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **गणेरे**—साथियों पर; **पराइल**—रखा।

अनुवाद

यह बहुमूल्य वस्त्र श्री चैतन्य महाप्रभु के सिर पर लपेट दिया गया। अद्वैत आचार्य आदि दूसरे भक्तों ने भी अपने सिरों पर इसी तरह वस्त्र लपेट लिये।

कानाঞि-খুটিয়া, জগন্নাথ,—দুই-জন ।
আবেশে বিলাইল ঘরে ছিল যত ধন ॥২৯॥

कानाञि-खुटिया, जगन्नाथ,—दुइ-जन ।
आवेशे विलाइल घरे छिल यत धन ॥ २९ ॥

कानाञि-खुटिया—कानाइ खुटिया; **जगन्नाथ**—जगन्नाथ माहाति; **दुइ-जन**—दो व्यक्ति; **आवेशे**—प्रेमावेश में; **विलाइल**—बाँट दिया; **घरे**—घर पर; **छिल**—था; **यत**—सभी; **धन**—धन।

अनुवाद

कानाइ खुटिया जिसने भावावेश में नन्द महाराज का और जगन्नाथ माहाति जिसने माता यशोदा का वेश धरा था, घर में संचित सारे धन को बाँट दिया।

দেখি' মহাপ্রভু বড় সন্তোষ পাইলা ।
মাতা-পিতা-জ্ঞানে দুঁহে নমস্কার কৈলা ॥৩০॥

देखि' महाप्रभु बड़ सन्तोष पाइला ।
माता-पिता-ज्ञाने दुँहे नमस्कार कैला ॥ ३० ॥

देखि'—देखकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **बड़**—बहुत; **सन्तोष**—सन्तोष; **पाइला**—पाया; **माता-पिता-ज्ञाने**—माता-पिता मानकर; **दुँहे**—दोनों को; **नमस्कार कैला**—नमस्कार किया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु यह देखकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। उन्होंने उन दोनों को अपना पिता तथा माता के रूप में स्वीकार करके नमस्कार किया।

পরম-আবেশে প্রভু আইলা নিজ-ঘর ।
এই-মত লীলা করে গৌরাঙ্গ-সুন্দর ॥৩১॥

परम-आवेशे प्रभु आइला निज-घर ।
एइ-मत लीला करे गौराङ्ग-सुन्दर ॥ ३१ ॥

परम-आवेशे—महान् भावावेश में; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—लौट गये; **निज-घर**—अपने निवास-स्थान को; **एइ-मत**—इस प्रकार; **लीला**—लीलाएँ; **करे**—कीं; **गौराङ्ग-सुन्दर**—श्री चैतन्य महाप्रभु।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु परम आवेश में अपने निवासस्थान पर लौट आये। इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने, जो गौरांग सुन्दर के नाम से जाने जाते थे, विविध लीलाएँ कीं।

বিজয়া-দশমী—লঙ্কা-বিজয়ের দিনে ।
বানর-সৈন্য কৈলা প্রভু লঞা ভক্ত-গণে ॥৩২॥

বিজয়া-দশমী—লঙ্কা-বিজয়ের দিনে ।
বানর-সৈন্য কৈলা প্রভু লঞা ভক্ত-গণে ॥ ৩২ ॥

বিজয়া—বিজয়; **দশমী**—দশমী; **লঙ্কা-বিজয়ের দিনে**—লংকা পর বিজয় পানে কা উৎসব দিন; **বানর-সৈন্য**—বানর সেনা; **কৈলা**—বনাই; **প্রভু**—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু নে; **লঞা ভক্ত-গণে**—সভী ভক্তোং কো লেকর।

অনুবাদ

লंका पर श्री रामचन्द्र की विजय का उत्सव, विजयादशमी मनाने के दिन श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने सारे भक्तों को वानर सैनिकों का वेश धारण कराया।

হনুমানাবেশে প্রভু বৃক্ষ-শাখা লঞা ।
লঙ্কা-গড়ে চড়ি' ফেলে গড় ভাঙ্গিয়া ॥৩৩॥

হনুমানাবেশে প্রভু বৃক্ষ-শাখা লঞা ।
লঙ্কা-গড়ে চড়ি' ফেলে গড় ভাঙ্গিয়া ॥ ৩৩ ॥

হনুমান্-আবেশে—হনুমান के भाव में; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **বৃক্ষ-শাখা লঞা**—एक वृक्ष की बड़ी शाखा लेकर; **লঙ্কা-গড়ে**—लंका के किले पर; **চড়ি'**—चढ़कर; **ফেলে**—तोड़ दिया; **গড়**—किले को; **ভাঙ্গিয়া**—ध्वस्त करके।

अनुवाद

हनुमान के आवेश में श्री चैतन्य महाप्रभु ने एक विशाल वृक्ष की शाखा ले ली और लंका गढ़ की दीवालों पर चढ़कर वे उसे तहस-नहस करने लगे।

'কাহাঁরে রাব্ণা' প্রভু কহে ক্রোধাবেশে ।
'জগন্মাতা হরে পাপী, মারিমু সবংশে' ॥৩৪॥

'काहाँरे राव्णा' प्रभु कहे क्रोधावेशे ।
'जगन्माता हरे पापी, मारिमु सवंशे' ॥ ३४॥

काहाँरे राव्णा—दुष्ट रावण कहाँ है; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कहे**—कहा; **क्रोध-आवेशे**—क्रोध में आकर; **जगत्-माता**—जगत् माता; **हरे**—अपहरण किया; **पापी**—पापी; **मारिमु**—मैं मारूँगा; **स-वंशे**—उसके सारे परिवार सहित।

अनुवाद

हनुमान के भावावेश में श्री चैतन्य महाप्रभु ने क्रुद्ध होकर कहा, "कहाँ है वह धूर्त रावण? उसने जगन्माता सीताजी का अपहरण किया है। अब मैं उसे तथा उसके सारे परिवार को मार डालूँगा।"

গোসাঞির আবেশ দেখি' লোকে চমৎকার ।
সর্ব-লোক 'জয়' 'জয়' বলে বার বার ॥৩৫॥

गोसाञिर आवेश देखि' लोके चमत्कार ।
सर्व-लोक 'जय' 'जय' बले बार बार ॥ ३५॥

गोसाञिर—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **आवेश**—भावावेश; **देखि'**—देखकर; **लोके**—सभी लोग; **चमत्कार**—चकित रह गये; **सर्व-लोक**—सभी लोग; **जय जय**—जय जयकार; **बले**—बोलने लगे; **बार बार**—बारम्बार।

अनुवाद

सारे लोग श्री चैतन्य महाप्रभु का आवेश देखकर अचम्भित हो गये और बारम्बार "जय हो! जय हो!" का घोष करने लगे।

এই-মত রাস-যাত্রা, আর দীপাবলী ।
উত্থান-দ্বাদশী যাত্রা দেখিলা সকলি ॥৩৬॥

এइ-মত রাস-য়াত্রা, আর দীপাবলী ।
উত্থান-দ্বাদশী য়াত্রা দেখিলা সকলি ॥ ३६ ॥

এइ-মত—इस प्रकार; **রাস-য়াত্রা**—भगवान् कृष्ण का रास-नृत्य; **আর**—और; **দীপ-আবলী**—दीपावली का दिन जब दियों की पँक्तियाँ जलाई जाती हैं; **উত্থান-দ্বাদশী-য়াত্রা**—उत्थान द्वादशी उत्सव; **দেখিলা সকলি**—उन सबने भाग लिया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके सारे भक्तों ने रास-यात्रा, दीपावली तथा उत्थान द्वादशी इन सभी उत्सवों में भाग लिया।

तात्पर्य

दीपावली उत्सव कार्तिक मास (अक्टूबर-नवम्बर) की अँधेरी रात (अमावस्या) में पड़ता है। रासयात्रा अर्थात् भगवान् कृष्ण का रासनृत्य उसी मास की पूर्णिमा की रात्री को होता है। उत्थान द्वादशी उसी मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी के एक दिन बाद पड़ती है। श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों ने इन सारे उत्सवों में भाग लिया।

এক-দিন মহাপ্রভু নিত্যানন্দে লঞা ।
দুই ভাই যুক্তি কৈল নিভৃতে বসিয়া ॥৩৭॥

এক-দিন মহাপ্রভু নিত্যানন্দে লঞা ।
দুই ভাই য়ুক্তি কৈল নিভৃতে বসিয়া ॥ ३७ ॥

এক-দিন—एक दिन; **মহাপ্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **নিত্যানন্দে লঞা**—नित्यानन्द प्रभु को लेकर; **দুই ভাই**—दोनों भाइयों ने; **য়ুক্তি কৈল**—आपस में विचारविमर्श किया; **নিভৃতে বসিয়া**—किसी एकान्त स्थान में बैठकर।

अनुवाद

एक दिन श्री चैतन्य महाप्रभु तथा नित्यानन्द प्रभु दोनों भाइयों ने एकान्त स्थान में बैठकर परस्पर विचार-विमर्श किया।

किवा युक्ति कैल दुँहे, केह नाहि जाने ।
फले अनुमान पाछे कैल भक्त-गणे ॥ ३८ ॥

किबा युक्ति कैल दुँहे, केह नाहि जाने ।
फले अनुमान पाछे कैल भक्त-गणे ॥ ३८ ॥

किबा युक्ति कैल—क्या विचार-विमर्श किया; **दुँहे**—उन दोनों ने; **केह नाहि जाने**—कोई नहीं जानता; **फले**—उसके परिणाम से; **अनुमान**—अनुमान; **पाछे**—बाद में; **कैल**—लगाया; **भक्त-गणे**—सभी भक्तों ने।

अनुवाद

यह कोई नहीं जान पाया कि दोनों भाइयों ने परस्पर क्या बातें कीं, किन्तु बाद में सभी भक्तों ने अनुमान लगा लिया कि उनका विषय क्या था।

तबे महाप्रभु सब भक्ते बोलाइल ।
गौड़-देशे याह सबे विदाय करिल ॥ ३९ ॥

तबे महाप्रभु सब भक्ते बोलाइल ।
गौड़-देशे याह सबे विदाय करिल ॥ ३९ ॥

तबे महाप्रभु—उसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **सब**—सभी; **भक्ते**—भक्तों को; **बोलाइल**—बुलाया; **गौड़-देशे**—बंगाल में; **याह**—लौट जाओ; **सबे**—सब को; **विदाय करिल**—विदा दी।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने सारे भक्तों को बुलाकर उनसे बंगाल वापस जाने के लिए कहा। इस तरह उन्होंने उन सबको विदा किया।

सबारे कहिल प्रभु—प्रत्यब्द आसिया ।
गुण्डिचा देखिया याबे आमारे मिलिया ॥ ४० ॥

सबारे कहिल प्रभु—प्रत्यब्द आसिया ।
गुण्डिचा देखिया याबे आमारे मिलिया ॥ ४० ॥

सबारे—उन सबको; **कहिल**—कहा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **प्रति-अब्द**—प्रति वर्ष; **आसिया**—आकर; **गुण्डिचा**—गुण्डीचा मन्दिर का उत्सव; **देखिया**—देखकर; **याबे**—तुम्हें जाना चाहिए; **आमारे मिलिया**—मुझे मिलने के बाद।

अनुवाद

सारे भक्तों को विदा करते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु ने उनसे प्रार्थना की कि वे प्रति वर्ष उन्हें देखने जगन्नाथ पुरी वापस आते रहें और गुण्डिचा मन्दिर की सफाई देखें।

आचार्येरे आज्ञा दिल करिया सम्मान ।
'आ-चण्डाल आदि कृष्ण-भक्ति दिओ दान' ॥ ४१ ॥
आचार्य्येरे आज्ञा दिल करिया सम्मान ।
'आ-चण्डाल आदि कृष्ण-भक्ति दिओ दान' ॥ ४१ ॥

आचार्य्येरे—अद्वैत आचार्य को; **आज्ञा दिल**—आज्ञा दी; **करिया सम्मान**—अति सम्मान सहित; **आ-चण्डाल**—सबसे नीच व्यक्ति (चाण्डाल) को भी; **आदि**—आदि; **कृष्ण-भक्ति**—कृष्ण-भक्ति का; **दिओ**—दो; **दान**—दान।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने अत्यन्त सम्मानपूर्वक अद्वैत आचार्य से प्रार्थना की, "आप अधम से अधम व्यक्तियों (चण्डालों) को भी कृष्ण-भक्ति रूपी चेतना प्रदान करें।"

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु का यह आदेश उनके सभी भक्तों के लिए है। कृष्ण-भक्ति हर एक के लिए उपलब्ध है, यहाँ तक कि चण्डालों जैसे अधम लोगों के लिए भी। श्री अद्वैत तथा नित्यानन्द प्रभु से आगे चलने वाली परम्परा में इस आदेश का पालन हमें करना चाहिए और बिना भेदभाव के विश्वभर में कृष्ण-भक्ति का वितरण करना चाहिए।

ब्राह्मणों से लेकर निम्नतम स्तर के चण्डालों तक के मनुष्यों के विभिन्न प्रकार हैं। इस कलियुग में, हर व्यक्ति को कृष्णभावनामृत का ज्ञान दिये जाने की आवश्यकता है, चाहे वह किसी भी पद पर स्थित क्यों न हो। यही आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। हर व्यक्ति को इस भौतिक अस्तित्व की वेदना का अनुभव हो रहा है। यहाँ तक कि अमरीकी सीनेट में भी संसार की दुर्दशा का अनुभव किया जाता है, जिससे ३० अप्रैल १९७४ का दिन प्रार्थना दिवस

के रूप में नियत कर दिया गया है। इस तरह हर एक को समाज में अवैध सम्बन्ध, मांसाहार, जुआ तथा नशा करने से उत्पन्न हुई कलियुग की दुर्दशा का अनुभव हो रहा है। अब समय आ गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के सदस्य विश्वभर में कृष्ण-भक्ति का वितरण करें और इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश का पालन करें। महाप्रभु ने हर एक को गुरु बनने का आदेश दिया है (*चैतन्य-चरितामृत, मध्य* ७.१२८)—*आमार आज्ञाय गुरु हञा तार 'एइ देश।* प्रत्येक नगर तथा प्रत्येक गाँव के हर व्यक्ति को श्री चैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं से आलोकित किया जाना चाहिए। कृष्ण-भक्ति का वितरण बिना किसी भेदभाव के किया जाना चाहिए। इस तरह समूचा विश्व शान्त तथा सुखी बनेगा और हर व्यक्ति श्री चैतन्य महाप्रभु की महिमा का गान करेगा, जैसी कि उनकी इच्छा है।

चण्डाल शब्द का अर्थ है कुत्ता खाने वाला व्यक्ति, जो मनुष्यों में सबसे निम्न माना जाता है। श्री चैतन्य महाप्रभु के वरदान से चण्डाल भी कृष्णभावनामृत का लाभ उठा सकता है। कृष्ण-भक्ति किसी एक जाति की बपौती नहीं। श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा दिये गये इस महान् वरदान को कोई भी प्राप्त कर सकता है। हर व्यक्ति को इसे प्राप्त करने तथा सुखी बनने का अवसर दिया जाना चाहिए।

इस श्लोक में आया *दान* शब्द भी महत्त्वपूर्ण है। जो भी कृष्ण-भक्ति के वितरण में लगता है, वह दानी व्यक्ति है। पेशेवर लोग धन के बदले *श्रीमद्भागवत* सुनाते हैं और कृष्ण-भक्ति की चर्चा करते हैं। वे ऐसी उच्च दिव्य सम्पत्ति का वितरण हर किसी को नहीं कर सकते। केवल शुद्ध भक्त ही, जिनका ध्येय केवल कृष्ण-सेवा है, दान के रूप में ऐसे दिव्य अमूल्य वरदान का वितरण कर सकते हैं।

নিত্যানন্দে আজ্ঞা দিল,—'যাহ গৌড়-দেশে ।
অনর্গল প্রেম-ভক্তি করিহ প্রকাশে ॥ ৪২ ॥

नित्यानन्दे आज्ञा दिल,—'याह गौड़-देशे ।
अनर्गल प्रेम-भक्ति करिह प्रकाशे ॥ ४२ ॥

नित्यानन्दे—नित्यानन्द प्रभु को; **आज्ञा दिल**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने आज्ञा दी; **ग्राह गौड़-देशे**—गौड़ देश बंगाल को जाओ; **अनर्गल**—बिना रोक टोक के; **प्रेम-भक्ति**—प्रेमाभक्ति का; **करिह प्रकाशे**—प्रकाश करो।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने नित्यानन्द प्रभु को आज्ञा दी, "आप बंगाल जाओ और बिना किसी प्रतिबन्ध के कृष्ण-भक्ति अर्थात् कृष्णभावनामृत का प्राकट्य करो।"

तात्पर्य

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने नित्यानन्द प्रभु को आदेश दिया कि सारे बंगालियों को भक्ति प्रदान करें। *भगवद्गीता* (९.३२) में भगवान् ने कहा है :

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथाशूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्।

"हे पृथा-पुत्र, जो मेरी शरण में आते हैं, वे भले ही निम्न जन्म वाले—स्त्रियाँ, वैश्य तथा शूद्र—क्यों न हों, वे परम गन्तव्य तक पहुँच सकते हैं।" जो भी कृष्णभावनामृत अंगीकार करता है और नियमों का पालन करता है, वह भगवद्धाम वापस जा सकता है।

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने अपने *अनुभाष्य* में लिखा है, "प्राकृतिक सहजिया नामक तथाकथित भक्त नित्यानन्द प्रभु को सामान्य मनुष्य मानते हैं। उन्होंने यह अफवाह फैलाई कि महाप्रभु ने नित्यानन्द प्रभु को उड़ीसा से केवल इसलिये बंगाल वापस जाने का आदेश दिया कि वे वहाँ जाकर विवाह करें और बच्चे उत्पन्न करें। यह नित्यानन्द प्रभु के प्रति सचमुच महान् अपराध है।"

ऐसा अपराध *पाषण्ड बुद्धि* कहलाता है। ये अपराधी नित्यानन्द प्रभु को अपने जैसे एक सामान्य मनुष्य मानते हैं। वे यह नहीं जानते कि नित्यानन्द प्रभु *विष्णु-तत्त्व* स्वरूप हैं। नित्यानन्द प्रभु को सामान्य मनुष्य मानना *कुणपात्मवादियों* नाम से पहचाने जाने वाले मानसिक तर्कवादियों का कार्य है। ये लोग अपने आपको भौतिक शरीर मान बैठते हैं, जो कि तीन भौतिक तत्त्वों का थैला मात्र होता है (*कुणपे त्रिधातुके*)। वे सोचते हैं कि उन्हीं की तरह

नित्यानन्द प्रभु का भी शरीर भौतिक था और इन्द्रियतृप्ति के लिए मिला था। जो भी इस प्राकर से सोचता है, वह नरक के घोरतम क्षेत्र में जाने का पात्र होता है। जो लोग कामिनी तथा कंचन के पीछे भागते हैं, जो अत्यन्त स्वार्थी हैं और व्यापारी वृत्ति रखते हैं, वे अपने उर्वर मस्तिष्क से अनेक वस्तुएँ खोज सकते हैं और प्रामाणिक शास्त्रों के विरुद्ध कुछ भी कह सकते हैं। वे अबोध लोगों को ठगकर धन कमाने का धंधा करते हैं और अपने धंधे को आधार देने के लिए ऐसे ही अपराधपूर्ण वक्तव्य देते रहते हैं। वास्तव में नित्यानन्द प्रभु श्री चैतन्य महाप्रभु के अंशावतार होने के कारण सर्वाधिक दयालु अवतार हैं। न तो उन्हें सामान्य मनुष्य समझना चाहिए, न ही प्रजापतियों में से एक, जिन्हें ब्रह्मा ने सन्तान उत्पन्न करके वंशों को बढ़ाने का आदेश दिया था। नित्यानन्द प्रभु को इन्द्रियतृप्ति के कारणस्वरूप नहीं समझे जाने चाहिए। यद्यपि पेशेवर तथाकथित उपदेशक प्रचारक इसका समर्थन करते हैं, किन्तु किसी भी प्रामाणिक शास्त्र से इसकी पुष्टि नहीं होती। वास्तव में सहजियों तथा कृष्ण-भक्ति के अन्य पेशेवर वितरकों के ऐसे वक्तव्यों का कोई आधार नहीं है।

राम-दास, गदाधर आदि कत जने ।
तोमार सहाय लागि' दिलू तोमार सने ॥४३॥

राम-दास, गदाधर आदि कत जने ।
तोमार सहाय लागि' दिलु तोमार सने ॥ ४३ ॥

राम-दास—राम दास; **गदाधर**—गदाधर दास; **आदि**—तथा अन्य; **कत जने**—कुछ लोग; **तोमार**—आपके; **सहाय**—सहायक; **लागि'**—के रूप में; **दिलु**—मैं देता हूँ; **तोमार सने**—आपके साथ।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु को रामदास, गदाधर दास तथा अन्य कुछ सहायक दिये गये। श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मैं इन्हें आपकी सहायता के लिए दे रहा हूँ।

मध्ये मध्ये आमि तोमार निकट याइब ।
अलक्षिते रहि' तोमार नृत्य देखिब' ॥४४॥

मध्ये मध्ये आमि तोमार निकट याइब ।
अलक्षिते रहि' तोमार नृत्य देखिब' ॥ ४४ ॥

मध्ये मध्ये—बीच बीच में; **आमि**—मैं; **तोमार निकट**—आपके निकट; **याइब**—जाऊँगा; **अलक्षिते रहि'**—अदृश्य रहकर; **तोमार नृत्य**—आपका नृत्य; **देखिब**—मैं देखूँगा।

अनुवाद

"मैं बीच-बीच में आपको देखने आया करूँगा। मैं अदृश्य रहकर आपका नृत्य देखा करूँगा।"

শ্রীবাস-পণ্ডিতে প্রভু করি' আলিঙ্গন ।
কণ্ঠে ধরি' কহে তাঁরে মধুর বচন ॥ ৪৫ ॥

श्रीवास-पण्डिते प्रभु करि' आलिङ्गन ।
कण्ठे धरि' कहे ताँरे मधुर वचन ॥ ४५ ॥

श्रीवास-पण्डिते—श्रीवास पण्डित को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करि'**—करके; **आलिङ्गन**—आलिंगन; **कण्ठे धरि'**—उनके गले में बाँहे डालकर; **कहे**—कहा; **ताँरे**—उनको; **मधुर वचन**—मधुर वचन।

अनुवाद

तत्पश्चात् श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रीवास पण्डित का आलिगंन किया और उनके गले में बाँहे डालकर उनसे मधुर वचन कहे।

তোমার ঘরে কীর্তনে আমি নিত্য নাচিব ।
তুমি দেখা পাবে, আর কেহ না দেখিব ॥ ৪৬ ॥

तोमार घरे कीर्तने आमि नित्य नाचिब ।
तुमि देखा पाबे, आर केह ना देखिब ॥ ४६ ॥

तोमार घरे—आपके घर में; **कीर्तने**—कीर्तन के समय; **आमि**—मैं; **नित्य**—नित्य; **नाचिब**—नृत्य करूँगा; **तुमि**—आप; **देखा पाबे**—देख सकोगे; **आर**—अन्य; **केह**—कोई; **ना देखिब**—न देख पाएगा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रीवास ठाकुर से प्रार्थना की, "आप नित्य संकीर्तन करना और इतना समझ रखना कि आपकी उपस्थिति में मैं भी

नृत्य करूँगा। आप यह नृत्य देख सकोगे, किन्तु अन्य लोग नहीं देख सकेंगे।

এই বস্ত্র মাতাকে দিহ', এই সব প্রসাদ ।
দণ্ডবত্করি' আমার ক্ষমাইহ অপরাধ ॥ ৪৭॥

এই বস্ত্র মাতাকে দিহ', এই সব প্রসাদ ।
দণ্ডবত্করি' আমার ক্ষমাইহ অপরাধ ॥ ৪৭॥

এই বস্ত্র—यह वस्त्र; **माताके दिह'**—मेरी माता शचीदेवी को दे देना; **एइ सब प्रसाद**—यह सब जगन्नाथ प्रसाद; **दण्डवत् करि'**—दण्डवत् प्रणाम करके; **आमार**—मेरा; **क्षमाइह**—क्षमा करवा देना; **अपराध**—अपराध।

अनुवाद

"इस जगन्नाथ प्रसाद को और इस वस्त्र को लो। इन्हें मेरी माता शचीदेवी को जाकर दे देना। उन्हें प्रणाम करने के बाद उनसे प्रार्थना करना कि वे मेरा अपराध क्षमा कर दें।

তাঁর সেবা ছাড়ি' আমি করিয়াছি সন্ন্যাস ।
ধর্ম নহে, করি আমি নিজ ধর্ম-নাশ ॥ ৪৮॥

তাঁর সেবা ছাড়ি' আমি করিয়াছি সন্ন্যাস ।
ধর্ম নহে, করি আমি নিজ ধর্ম-নাশ ॥ ৪৮॥

তাঁর সেবা ছাড়ি'—उनकी सेवा छोड़कर; **आमि**—मैंने; **करियाछि**—स्वीकार किया; **सन्न्यास**—संन्यास; **धर्म नहे**—यह मेरा धर्म नहीं है; **करि**—किया है; **आमि**—मैंने; **निज धर्म-नाश**—अपने धर्म का नाश।

अनुवाद

"मैंने अपनी माता की सेवा छोड़कर संन्यास धारण कर लिया है। वास्तव में मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए था, क्योंकि ऐसा करके मैंने अपना धर्म नष्ट किया है।

তাঁর প্রেম-বশ আমি, তাঁর সেবা—ধর্ম ।
তাহা ছাড়ি' করিয়াছি বাতুলের কর্ম ॥ ৪৯॥

ताँर प्रेम-वश आमि, ताँर सेवा—धर्म ।
ताहा छाड़ि' करियाछि बातुलेर कर्म ॥ ४९ ॥

ताँर प्रेम-वश—उनके स्नेह के वशीभूत होकर; **आमि**—मैं; **ताँर सेवा**—उनकी सेवा; **धर्म**—मेरा धर्म; **ताहा छाड़ि'**—उसे छोड़कर; **करियाछि**—मैंने किया; **बातुलेर कर्म**—पागल का कार्य।

अनुवाद

"मैं अपनी माता के प्रेम के अधीन हूँ और मेरा धर्म है कि बदले में मैं उनकी सेवा करूँ। लेकिन ऐसा करने के बदले मैंने संन्यास ग्रहण कर लिया। निस्सन्देह, यह पागलपन है।

बातुल बालकेर माता नाहि लय दोष ।
एइ जानि' माता मोरे ना करय रोष ॥ ५० ॥

बातुल बालकेर माता नाहि लय दोष ।
एइ जानि' माता मोरे ना करय रोष ॥ ५० ॥

बातुल बालकेर—एक पागल पुत्र की; **माता**—माता; **नाहि**—नहीं; **लय**—स्वीकार करती; **दोष**—दोष; **एइ जानि'**—यह जानकर; **माता**—माता ने; **मोरे**—मुझ पर; **ना करय रोष**—क्रोध नहीं किया।

अनुवाद

"एक माता अपने पागल बेटे से रुष्ट नहीं होती। यह जानते हुए मेरी माता मुझ पर रोष नहीं करतीं।

कि काय सन्न्यासे मोर, प्रेम निज-धन ।
ये-काले सन्न्यास कैलुँ, छन्न हैल मन ॥ ५१ ॥

कि काय सन्न्यासे मोर, प्रेम निज-धन ।
ये-काले सन्न्यास कैलुँ, छन्न हैल मन ॥ ५१ ॥

कि काय—क्या प्रयोजन; **सन्न्यासे**—संन्यास धर्म में; **मोर**—मेरा; **प्रेम**—स्नेह; **निज-धन**—मेरा वास्तविक धन; **ये-काले**—जिस समय; **सन्न्यास कैलुँ**—मैंने संन्यास स्वीकार किया; **छन्न**—विक्षिप्त; **हैल**—हो गया था; **मन**—मन।

अनुवाद

"मुझे इस संन्यास को स्वीकार करने तथा अपने धनस्वरूप मातृप्रेम की बलि देने से कुछ भी प्रयोजन नहीं था। वास्तव में जब मैंने संन्यास स्वीकार किया, उस समय मुझ पर पागलपन सवार था।

नीलाचले आछोँ मुञि ताँहार आज्ञाते ।
मध्ये मध्ये आसिमु ताँर चरण देखिते ॥५२॥

नीलाचले आछों मुञि ताँहार आज्ञाते ।
मध्ये मध्ये आसिमु ताँर चरण देखिते ॥५२॥

नीलाचले आछों—नीलाचल, जगन्नाथ पुरी में निवास; **मुञि**—मैं; **ताँहार आज्ञाते**—उनके आदेश के अन्तर्गत; **मध्ये मध्ये**—बीच बीच में; **आसिमु**—मैं जाऊँगा; **ताँर**—उनके; **चरण देखिते**—चरणकमलों के दर्शन करने।

अनुवाद

"मैं यहाँ जगन्नाथ पुरी (नीलाचल) में उनके आदेशों का पालन करने के लिए रुका हुआ हूँ। किन्तु बीच-बीच में मैं उनके चरणकमलों का दर्शन करने आता रहूँगा।

नित्य याइ' देखि मुञि ताँहार चरणे ।
स्फूर्ति-ज्ञाने तेँहो ताहा सत्य नाहि माने ॥५३॥

नित्य याइ' देखि मुञि ताँहार चरणे ।
स्फूर्ति-ज्ञाने तेंहो ताहा सत्य नाहि माने ॥५३॥

नित्य याइ'—प्रतिदिन जाकर; **देखि**—दर्शन करता हूँ; **मुञि**—मैं; **ताँहार चरणे**—उनके चरणकमल; **स्फूर्ति-ज्ञाने**—मेरी उपस्थिति अनुभव करके; **तेंहो**—वे; **ताहा**—उसे; **सत्य नाहि माने**—सत्य नहीं मानती।

अनुवाद

"वास्तव में मैं रोज ही वहाँ अपनी माता के चरणकमलों का दर्शन करने जाता हूँ। यद्यपि उन्हें मेरी उपस्थिति का आभास होता है, पर वे इसे सत्य नहीं मानतीं।

एक-दिन शाल्यन्न, व्यञ्जन पाँच-सात ।
शाक, मोचा-घण्ट, भृष्ट-पटोल-निम्ब-पात ॥५४॥
लेम्बु-आदा-खण्ड, दधि, दुग्ध, खण्ड-सार ।
शालग्रामे समर्पिलेन बहु उपहार ॥५५॥

एक-दिन—एक दिन; **शालि-अन्न**—शालि धान का पका हुआ चावल; **व्यञ्जन**—पकवान; **पाँच-सात**—पाँच-साँत; **शाक**—साग, पालक; **मोचा-घण्ट**—केले के फूलों की तरकारी; **भृष्ट**—तली; **पटोल**—पटोला सब्जियाँ; **निम्ब-पात**—नीम वृक्ष के पत्रों से; **लेम्बु**—निंबू; **आदा-खण्ड**—अदरक के टुकड़ों; **दधि**—दही; **दुग्ध**—दूध; **खण्ड-सार**—खांड; **शालग्रामे**—शालग्राम के रूप में भगवान् विष्णु को; **समर्पिलेन**—समर्पित किया; **बहु उपहार**—बहुत से अन्न उपहार।

अनुवाद

"एक दिन मेरी माता शचीदेवी ने शालग्राम विष्णु को भोजन अर्पित किया। उन्होंने शालि धान से पकाया चावल, तरह-तरह की तरकारियाँ, पालक, केले के फूलों की बनी कढ़ी, नीम की पत्तियों के साथ तले पटोल, नींबू समेत अदरक के टुकड़े, दही, दूध, खांड तथा अन्य पकवान अर्पित किये।

प्रसाद लञा कोले करेन क्रन्दन ।
निमाइर प्रिय मोर—ए-सब व्यञ्जन ॥५६॥

प्रसाद लञा कोले करेन क्रन्दन ।
निमाइर प्रिय मोर—ए-सब व्यञ्जन ॥५६॥

प्रसाद लञा—प्रसाद लेकर; **कोले**—अपनी गोद में; **करेन क्रन्दन**—रो रही थी; **निमाइर**—निमाइ को; **प्रिय**—प्रिय; **मोर**—मेरे; **ए-सब व्यञ्जन**—यह सब प्रकार का भोजन।

अनुवाद

"अपनी गोद में भोजन लेकर तथा यह याद करके मेरी माता रो रही थीं कि यह भोजन तो मेरे निमाइ को अत्यन्त प्रिय है।

নিমাঞি নাহিক এথা, কে করে ভোজন ।
মোর ধ্যানে অশ্রু-জলে ভরিল নয়ন ॥৫৭॥

নিমাঞি নাহিক এথা, কে করে ভোজন ।
মোর ধ্যানে অশ্রু-জলে ভরিল নয়ন ॥৫৭॥

নিমাঞি—নিমাइ; **নাহিক এথা**—यहाँ उपस्थित नहीं है; **কে করে ভোজন**—इस भोजन को कौन खाएगा; **মোর ধ্যানে**—मेरा इस प्रकार ध्यान करने पर; **অশ্রু-জলে**—आँसुओं से; **ভরিল নয়ন**—आँखें भर आईं।

অনুবাদ

"मेरी माता सोच रही थीं, 'यहाँ पर निमाइ नहीं है। इस सारे भोजन को कौन ग्रहण करेगा?' जब वे मेरे बारे में इस तरह सोच रही थीं, तो उनकी आँखो में आँसू भर आये।

শীঘ্র যাই' মুঞি সব করিনু ভক্ষণ ।
শূন্য-পাত্র দেখি' অশ্রু করিয়া মার্জন ॥৫৮॥

শীঘ্র যাই' মুঞি সব করিনু ভক্ষণ ।
শূন্য-পাত্র দেখি' অশ্রু করিয়া মার্জন ॥৫৮॥

শীঘ্র—शीघ्र; **যাই'**—जाकर; **মুঞি**—मैंने; **সব**—सब; **করিনু ভক্ষণ**—खा लिया; **শূন্য-পাত্র দেখি'**—खाली बर्तन देखकर; **অশ্রু**—आँसू; **করিয়া মার্জন**—अपने हाथों से पोंछे।

অনুবাদ

"जब वे इस तरह सोचकर रो रही थीं, तो मैं जल्दी से वहाँ गया और सब भोजन ग्रहण कर लिया। थाल को खाली देखकर उन्होंने अपने आँसू पोछ डाले।

'কে অন্ন-ব্যঞ্জন খাইল, শূন্য কেনে পাত? ।
বালগোপাল কিবা খাইল সব ভাত? ॥৫৯॥

'কে অন্ন-ব্যঞ্জন খাইল, শূন্য কেনে পাত? ।
বালগোপাল কিবা খাইল সব ভাত? ॥৫৯॥

के—कौन; **अन्न-व्यञ्जन खाइल**—अन्न-भोजन खा गया है; **शून्य केने पात**—बर्तन खाली क्यों हैं; **बाल-गोपाल**—बाल गोपाल भगवान् ने; **किबा खाइल**—क्या खा लिया है; **सब भात**—सारा भात।

अनुवाद

"तब वे आश्चर्य करने लगीं कि किसने सारा भोजन खा लिया। 'यह थाल खाली क्यों है?' उन्हें यह आश्चर्य हुआ कि कहीं बालगोपाल ने तो नहीं खा लिया।

কিবা মোর কথায় মনে ভ্রম হঞা গেল। ।
কিবা কোন জন্তু আসি' সকল খাইল? ॥৬০॥

किबा मोर कथाय मने भ्रम हञा गेल! ।
किबा कोन जन्तु आसि' सकल खाइल? ॥६०॥

किबा—अथवा; **मोर कथाय**—जब मैं ऐसा सोच रही थी; **मने**—मन में; **भ्रम हञा गेल**—मुझे भ्रम हुआ; **किबा**—अथवा; **कोन जन्तु**—कोई पशु; **आसि'**—आकर; **सकल खाइल**—सब कुछ खा गया।

अनुवाद

"वे आश्चर्य करने लगीं कि थाल में पहले से भोजन था भी या नहीं। फिर उन्होंने सोचा कि हो सकता है कोई पशु आकर सारा भोजन खा गया हो।

কিবা আমি অন্ন-পাত্রে ভ্রমে না বাড়িল!' ।
এত চিন্তি' পাক-পাত্র যাঞা দেখিল ॥৬১॥

किबा आमि अन्न-पात्रे भ्रमे ना बाड़िल!' ।
एत चिन्ति' पाक-पात्र ग्याञा देखिल ॥६१॥

किबा—अथवा; **आमि**—मैं; **अन्न-पात्रे**—अन्न पात्र में; **भ्रमे**—भ्रम से; **ना बाड़िल**—कुछ नहीं रखा; **एत चिन्ति'**—यह सोचकर; **पाक-पात्र**—रसोई के पात्र; **ग्याञा देखिल**—जाकर देखे।

अनुवाद

"उन्होंने सोचा कि, 'हो सकता है गलती से मैंने थाल में भोजन रखा

ही न हो।' इस तरह सोचते हुए वे रसोई-घर गईं और वहाँ बर्तनों को देखा।

অন্ন-ব্যঞ্জন-পূর্ণ দেখি' সকল ভাজনে ।
দেখিয়া সংশয় হৈল কিছু চমত্কার মনে ॥৬২॥
अन्न-व्यञ्जन-पूर्ण देखि' सकल भाजने ।
देखिया संशय हैल किछु चमत्कार मने ॥६२॥

अन्न-व्यञ्जन-पूर्ण—भात और तरकारी से भरे थे; **देखि'**—देखकर; **सकल भाजने**—सभी पात्र; **देखिया**—देखकर; **संशय हैल**—संशय हुआ; **किछु**—कुछ; **चमत्कार**—आश्चर्य; **मने**—मन में।

अनुवाद

"जब उन्होंने देखा कि सारे बर्तन अब भी चावल तथा तरकारी से भरे हैं, तो उनके मन में कुछ सन्देह हुआ और वे अचम्भित हुईं।

ঈশানে বোলাঞা পুনঃ স্থান লেপাইল ।
পুনরপি গোপালকে অন্ন সমর্পিল ॥৬৩॥
ईशाने बोलाञा पुनः स्थान लेपाइल ।
पुनरपि गोपालके अन्न समर्पिल ॥६३॥

ईशाने—ईशान सेवक को; **बोलाञा**—बुलाकर; **पुनः**—पुनः; **स्थान**—स्थान; **लेपाइल**—साफ करवाया; **पुनरपि**—दोबारा; **गोपालके**—गोपाल को; **अन्न**—अन्न (भात और तरकारी); **समर्पिल**—समर्पित किया।

अनुवाद

"इस तरह आश्चर्यचकित होकर उन्होंने अपने नौकर ईशान को बुलाया और उस स्थान की फिर से सफाई कराई। तब उन्होंने गोपाल को दूसरी थाल अर्पित की।

এই-মত যবে করেন উত্তম রন্ধন ।
মোরে খাওয়াইতে করে উত্কণ্ঠায় রোদন ॥৬৪॥

एइ-मत ग्रबे करेन उत्तम रन्धन ।
मोरे खाओयाइते करे उत्कण्ठाय रोदन ॥ ६४॥

एइ-मत—इस प्रकार; **ग्रबे**—जब कभी; **करेन**—करती थी; **उत्तम रन्धन**—उत्तम भोजन पकाना; **मोरे**—मुझे; **खाओयाइते**—खिलाने के लिए; **करे**—करती थी; **उत्कण्ठाय**—बहुत चिन्ता में; **रोदन**—रोदन।

अनुवाद

"अब जब भी वे कोई अच्छा भोजन बनाती हैं और मुझे वह भोजन खिलाना चाहती हैं, तब वे उत्कण्ठावश रोने लगती हैं।

তাঁর প্রেমে আনি' আমায় করায় ভোজনে ।
অন্তরে মানয়ে সুখ, বাহ্যে নাহি মানে ॥ ৬৫॥

তাঁর প্রেমে আনি' আমায় করায় ভোজনে ।
অন্তরে মানয়ে সুখ, বাহ্যে নাহি মানে ॥ ৬৫॥

তাঁর প্রেমে—उनके प्रेम से; **আনি'**—लाकर; **আমায়**—मुझे; **করায় ভোজনে**—भोजन कराया; **অন্তরে**—अपने अन्दर; **মানয়ে**—वे अनुभव करती हैं; **সুখ**—सुख; **বাহ্যে**—बाहर से; **নাহি মানে**—नहीं मानतीं।

अनुवाद

"उनके प्रेम के वशीभूत होकर मैं वहाँ भोजन करने के लिए जाता हूँ। मेरी माता ये बातें भीतर-भीतर जानती हैं और सुखी होती हैं, किन्तु बाहर से वे इन्हें नहीं मानती।

এই বিজয়া-দশমীতে হৈল এই রীতি ।
তাঁহাকে পুছিয়া তাঁর করাইহ প্রতীতি ॥ ৬৬॥

এই বিজয়া-দশমীতে হৈল এই রীতি ।
তাঁহাকে পুছিয়া তাঁর করাইহ প্রতীতি ॥ ৬৬॥

এই বিজয়া-দশমীতে—पिछली विजयदशमी वाले दिन; **हैल**—हुई; **एइ रीति**—ऐसी घटना; **ताँहाके**—उनको; **पुछिया**—पूछकर; **ताँर**—उन्हें; **कराइह**—कराना; **प्रतीति**—विश्वास।

अनुवाद

"ऐसी घटना पिछली विजयादशमी के दिन घटी। तुम उनसे इस घटना

के बारे में पूछ सकते हो और उन्हें विश्वास दिलाना कि मैं सचमुच वहाँ जाता हूँ।"

এতেক কহিতে প্রভু বিহ্বল হইলা ।
লোক বিদায় করিতে প্রভু ধৈর্য ধরিলা ॥ ৬৭ ॥

एतेक कहिते प्रभु विह्वल हइला ।
लोक विदाय करिते प्रभु धैर्य्य धरिला ॥ ६७ ॥

एतेक कहिते—यह कहकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **विह्वल हइला**—विह्वल हो गये; **लोक विदाय करिते**—भक्तों को विदा करने के लिए; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **धैर्य्य धरिला**—धैर्य रखा।

अनुवाद

यह सब कहते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु विह्वल हो गये, किन्तु भक्तों की विदाई पूरी करने के उद्देश्य से उन्होंने धैर्य धारण कर रखा।

রাঘব পণ্ডিতে কহেন বচন সরস ।
'তোমার শুদ্ধ প্রেমে আমি হই' তোমার বশ' ॥ ৬৮ ॥

राघव पण्डिते कहेन वचन सरस ।
'तोमार शुद्ध प्रेमे आमि हइ' तोमार वश' ॥ ६८ ॥

राघव पण्डिते—राघव पण्डित को; **कहेन**—कहे; **वचन**—शब्द; **स-रस**—बहुत मधुर; **तोमार**—तुम्हारी; **शुद्ध प्रेमे**—शुद्ध भक्ति से; **आमि हइ'**—मैं हूँ; **तोमार**—तुम्हारे; **वश**—वश (कृतज्ञ) में।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु राघव पण्डित से मीठी वाणी में बोले, "मेरे प्रति तुम्हारा प्रेम शुद्ध है, जिसके लिए मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूँ।"

ইঁহার কৃষ্ণ-সেবার কথা শুন, সর্ব-জন ।
পরম-পবিত্র সেবা অতি সর্বোত্তম ॥ ৬৯ ॥

इँहार कृष्ण-सेवार कथा शुन, सर्व-जन ।
परम-पवित्र सेवा अति सर्वोत्तम ॥ ६९ ॥

इँहार—इनकी; **कृष्ण-सेवार**—कृष्ण सेवा की; **कथा**—कथाएँ; **शुन**—सुनो; **सर्व-जन**—सभी लोग; **परम-पवित्र**—परम पवित्र; **सेवा**—सेवा; **अति**—अत्यन्त; **सर्व-उत्तम**—सर्वश्रेष्ठ।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने सबसे कहा, "सुनो! तुम लोग राघव पण्डित द्वारा की गई शुद्ध कृष्ण-भक्ति के बारे में सुनो! राघव पण्डित की सेवा परम शुद्ध तथा सर्वोत्तम है।

आर द्रव्य रहु—शुन नारिकेलेर कथा ।
पाँच गण्डा करि' नारिकेल विकाय तथा ॥७०॥

आर द्रव्य रहु—शुन नारिकेलेर कथा ।
पाँच गण्डा करि' नारिकेल विकाय तथा ॥ ७० ॥

आर द्रव्य रहु—अन्य पदार्थों के अलावा; **शुन**—जरा सुनो; **नारिकेलेर कथा**—नारियल भेंट करने की कथा; **पाँच गण्डा करि'**—पाँच गंडा के मूल्य पर; **नारिकेल**—नारियल; **विकाय**—बेचा जाता है; **तथा**—वहाँ।

अनुवाद

"अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त उसके द्वारा नारियल भेंट किये जाने के बारे में सुनो। एक नारियल पाँच गण्डे में बिकता है।

वाटिते कत शत वृक्षे लक्ष लक्ष फल ।
तथापि शुनेन यथा मिष्ट नारिकेल ॥७१॥

वाटिते कत शत वृक्षे लक्ष लक्ष फल ।
तथापि शुनेन ग्रथा मिष्ट नारिकेल ॥ ७१ ॥

वाटिते—उसके उद्यान में; **कत शत**—कितने सैंकड़ों; **वृक्षे**—वृक्ष हैं; **लक्ष लक्ष फल**—लाखों फल; **तथापि**—तथापि; **शुनेन**—सुनते है; **ग्रथा**—जहाँ; **मिष्ट नारिकेल**—मीठे नारियल हैं।

अनुवाद

"यद्यपि उसके पास पहले से सैंकड़ों वृक्ष तथा लाखों फल हैं, किन्तु

फिर भी वह उस स्थान के विषय में सुनने के लिए अत्यधिक उत्सुक रहता है, जहाँ मीठा नारियल मिलता हो।

এক এক ফলের মূল্য দিয়া চারি-চারি পণ ।
দশ-ক্রোশ হৈতে আনায় করিয়া যতন ॥৭২॥

एक एक फलेर मूल्य दिया चारि-चारि पण ।
दश-क्रोश हैते आनाय करिया यतन ॥७२॥

एक एक फलेर—प्रत्येक फल का; **मूल्य**—मूल्य; **दिया**—देकर; **चारि-चारि पण**—प्रत्येक फल का चार पण (एक पण बीस गंडा के बराबर होता है); **दश-क्रोश**—बीस मील दूर; **हैते**—से; **आनाय**—लाकर; **करिया यतन**—बड़े परिश्रम से।

अनुवाद

"वह बीस मील दूर स्थान से भी नारियल को यत्नपूर्वक लाता है और हर नारियल के लिए चार पण चुकाता है।

প্রতি-দিন পাঁচ-সাত ফল ছোলাঞা ।
সুশীতল করিতে রাখে জলে ডুবাইঞা ॥৭৩॥

प्रति-दिन पाँच-सात फल छोलाञा ।
सुशीतल करिते राखे जले डुबाइञा ॥७३॥

प्रति-दिन—प्रति दिन; **पाँच-सात**—पाँच-सात; **फल**—फल; **छोलाञा**—छीलकर; **सु-शीतल करिते**—उन्हें ठंडा करने के लिए; **राखे**—रखता है; **जले**—पानी में; **डुबाइञा**—डुबोकर।

अनुवाद

"प्रतिदिन पाँच-सात नारियल छीलकर उन्हें शीतल बनाये रखने के लिए जल के भीतर रखा जाता है।

ভোগের সময় পুনঃ ছুলি' সংস্করি' ।
কৃষ্ণে সমর্পণ করে মুখ ছিদ্র করি' ॥৭৪॥

भोगेर समय पुनः छुलि' संस्करि' ।
कृष्णे समर्पण करे मुख छिद्र करि' ॥७४॥

भोगेर समय—भोग लगाने के समय; **पुनः**—पुनः; **छुलि'**—छीलकर; **संस्करि'**—साफ करके; **कृष्णे**—भगवान् कृष्ण को; **समर्पण**—भोग; **करे**—लगाता है; **मुख**—चोटी पर; **छिद्र करि'**—छिद्र करके।

अनुवाद

"भोग लगाते समय नारियलों को फिर से छीला जाता है और साफ किया जाता है। उनमें ऊपर से छेद करने के बाद उन्हें कृष्ण को अर्पित किया जाता है।

कृष्ण सेइ नारिकेल-जल पान करि' ।
कभु शून्य फल राखेन, कभु जल भरि' ॥७५॥

कृष्ण सेइ नारिकेल-जल पान करि' ।
कभु शून्य फल राखेन, कभु जल भरि' ॥७५॥

कृष्ण—भगवान् कृष्ण; **सेइ**—उस; **नारिकेल-जल**—नारियल का जल; **पान करि'**—पीकर; **कभु**—कभी-कभी; **शून्य**—खाली; **फल राखेन**—फल को रख देते हैं; **कभु**—कभी-कभी; **जल भरि'**—जल से भरे रहते हैं।

अनुवाद

"इन नारियलों का जल कृष्ण पीते हैं और कभी-कभी नारियलों का जल निकालकर उन्हें पूरी तरह से खाली कर दिया जाता है। कभी-कभी इन नारियलों में जल भरा रहता है।

जल-शून्य फल देखि' पण्डित—हरषित ।
फल भाङ्गि' शस्ये करे सत्पात्र पूरित ॥७६॥

जल-शून्य फल देखि' पण्डित—हरषित ।
फल भाङ्गि' शस्ये करे सत्पात्र पूरित ॥७६॥

जल-शून्य—जल के बिना; **फल**—फल; **देखि'**—देखने से; **पण्डित**—राघव पण्डित; **हरषित**—अति प्रसन्न; **फल भाङ्गि'**—फल को तोड़कर; **शस्ये**—गूदे के साथ; **करे**—बनाता है; **सत्-पात्र**—अन्य थाली; **पूरित**—भरता है।

अनुवाद

"जब राघव पण्डित देखता है कि नारियलों का जल पी लिया गया

है, तो वह अत्यन्त प्रसन्न होता है। तब वह नारियल तोड़कर गरी निकालता और उसे किसी अन्य थाल पर रख देता है।

शस्य समर्पण करि' बाहिरे धेयान ।
शस्य खाञा कृष्ण करे शून्य भाजन ॥७७॥

शस्य समर्पण करि' बाहिरे धेयान ।
शस्य खाञा कृष्ण करे शून्य भाजन ॥७७॥

शस्य—गूदा; **समर्पण करि'**—समर्पण करके; **बाहिरे**—मन्दिर के बाहर; **धेयान**—ध्यान करता है; **शस्य खाञा**—गूदा खाकर; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **करे**—करते हैं; **शून्य**—खाली; **भाजन**—वह थाली।

अनुवाद

"गरी चढ़ाने के बाद वह मन्दिर द्वार के बाहर ध्यान करता है। इस बीच भगवान् कृष्ण सारी गरी खाकर थाल को रिक्त छोड़ देते हैं।

कभु शस्य खाञा पुनः पात्र भरे शांसे ।
श्रद्धा बाड़े पण्डितेर, प्रेम-सिन्धु भासे ॥७८॥

कभु शस्य खाञा पुनः पात्र भरे शांसे ।
श्रद्धा बाड़े पण्डितेर, प्रेम-सिन्धु भासे ॥७८॥

कभु—कभी-कभी; **शस्य खाञा**—गूदा खाकर; **पुनः**—पुनः; **पात्र**—प्लेट; **भरे**—भर देते हैं; **शांसे**—गुदे से; **श्रद्धा**—श्रद्धा; **बाड़े**—बढ़ जाती है; **पण्डितेर**—राघव पण्डित की; **प्रेम-सिन्धु**—प्रेम-सागर में; **भासे**—तैरने लगता है।

अनुवाद

"कभी-कभी गरी खाने के बाद कृष्ण थाल को नई गरी से भर देते हैं। इस तरह राघव पण्डित की श्रद्धा बढ़ती जाती है और वह प्रेम के सागर में तैरता रहता है।

एक दिन फल दश संस्कार करिया ।
भोग लागाइते सेवक आइल लञा ॥७९॥

एक दिन फल दश संस्कार करिया ।
भोग लागाइते सेवक आइल लञा ॥ ७९ ॥

एक दिन—एक दिन; **फल**—फल; **दश**—दस; **संस्कार करिया**—साफ करने के बाद; **भोग लागाइते**—भोग लगाने के लिए; **सेवक**—सेवक; **आइल**—आया; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

"एक दिन ऐसा हुआ कि एक नौकर अर्चाविग्रह पर चढ़ाने के लिए लगभग दस छिले हुए नारियल लाया।

অবসর নাহি হয়, বিলম্ব হইল ।
ফল-পাত্র-হাতে সেবক দ্বারে ত' রহিল ॥ ৮০ ॥

अवसर नाहि हय, विलम्ब हइल ।
फल-पात्र-हाते सेवक द्वारे त' रहिल ॥ ८० ॥

अवसर नाहि हय—समय नहीं था; **विलम्ब हइल**—देर हो गई थी; **फल-पात्र**—फलों का पात्र; **हाते**—हाथों में; **सेवक**—सेवक; **द्वारे**—द्वार पर; **त'**—निस्सन्देह; **रहिल**—रहा।

अनुवाद

"जब नारियल लाए गये, उस समय उन नारियलों को चढ़ाने के लिए समय न था, क्योंकि पहले ही काफी विलम्ब हो चुका था। अतएव वह नौकर नारियलों के पात्र को पकड़े हुए दरवाजे पर ही खड़ा रहा।

দ্বারের উপর ভিতে তেঁহো হাত দিল ।
সেই হাতে ফল ছুঁইল, পণ্ডিত দেখিল ॥ ৮১ ॥

द्वारेर उपर भिते तेंहो हात दिल ।
सेइ हाते फल छुइल, पण्डित देखिल ॥ ८१ ॥

द्वारेर उपर—द्वार के ऊपर; **भिते**—छत पर; **तेंहो**—उसने; **हात दिल**—अपना हाथ छुआ; **सेइ हाते**—उसी हाथ से; **फल छुइल**—फल को छुआ; **पण्डित**—राघव पण्डित ने; **देखिल**—देखा।

अनुवाद

"राघव पण्डित ने देखा कि उस नौकर ने दरवाजे के ऊपर की छत छुई है और उसी हाथ से नारियलों को छुआ है।

पण्डित कहे,——द्वारे लोक करे गताय़ाते ।
तार पद-धूलि उड़ि' लागे उपर भिते ॥ ८२॥

पण्डित कहे,——द्वारे लोक करे गतायाते ।
तार पद-धूलि उड़ि' लागे उपर भिते ॥ ८२॥

पण्डित कहे—राघव पण्डित ने कहा; **द्वारे**—द्वार के बीच से; **लोक**—साधारण लोग; **करे**—करते हैं; **गतायाते**—आना और जाना; **तार**—उनके; **पद-धूलि**—पैरों की धूलि; **उड़ि'**—उड़कर; **लागे**—लगती है; **उपर**—ऊपर; **भिते**—छत को।

अनुवाद

"तब राघव पण्डित ने कहा, 'लोग इस दरवाजे से लगातार आते-जाते रहते हैं। उनके पैंरों की धूल उड़कर छत को छूती है।

सेइ भिते हात दिय़ा फल परशिला ।
कृष्ण-योग्य नहे, फल अपवित्र हैला ॥ ८३॥

सेइ भिते हात दिया फल परशिला ।
कृष्ण-योग्य नहे, फल अपवित्र हैला ॥ ८३॥

सेइ भिते—उसी छत पर; **हात दिया**—अपना हाथ छूकर; **फल**—फल; **परशिला**—छुआ; **कृष्ण-योग्य नहे**—कृष्ण को भेंट करने योग्य नहीं; **फल**—फल; **अपवित्र हैला**—अपवित्र हो गया है।

अनुवाद

"'तुमने दरवाजे के ऊपर की छत छूकर नारियलों का स्पर्श किया है। अब ये कृष्ण पर चढ़ाने लायक नहीं रह गये, क्योंकि ये दूषित हो गये हैं।'

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर का कहना है कि राघव पण्डित कोई ऐसे-वैसे सिरफिरे मनुष्य नहीं थे, जिन्हें सफाई की धुन सवार थी। वे संसारी व्यक्ति नहीं थे। निम्न चेतना होने पर जब कोई व्यक्ति किसी भौतिक वस्तु को आध्यात्मिक मान लेता है, तो वह *भौमइज्यधीः* कहलाता है। राघव पण्डित कृष्ण के सनातन दास थे और वे जितनी वस्तुएँ देखता थे, वे सब भगवान् की सेवा से सम्बन्धित होती थीं। वे हमेशा इसी दिव्य विचार में डूबे रहते थे कि

वह हर वस्तु को किस तरह कृष्ण की सेवा में लगाये। कभी-कभी कुछ नौसिखिए तथा निम्न स्तर के भक्त भौतिक शुद्धि और अशुद्धि के धरातल पर राघव पण्डित का अनुकरण करने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु ऐसे अनुकरण से काम चलने वाला नहीं है। जैसाकि *चैतन्य-चरितामृत* (अन्त्यलीला ४.१७४) में कहा गया है— *भद्राभद्रवस्तुज्ञान नाहिक 'प्राकृते'।* दिव्य धरातल पर न तो कुछ उच्च है, न निम्न, न ही शुद्ध है, न अशुद्ध। भौतिक धरातल पर अच्छे तथा बुरे में अन्तर किया जाता है, किन्तु आध्यात्मिक धरातल पर हर वस्तु समान गुण वाली होती है।

'द्वैते' भद्राभद्रज्ञान, सब—'मनोधर्म'।
'एइ भाल, एइ मन्द'—एइ सब 'भ्रम'॥

"भौतिक जगत् में अच्छे और बुरे का विचार मानसिक तर्क ही है। अतएव यह कहना कि 'यह अच्छा है और यह बुरा है'—यह सब भूल है।" (*चैतन्य-चरितामृत, अन्त्य* ४.१७६)

এত বলি' ফল ফেলে প্রাচীর লঙ্ঘিয়া ।
ঐছে পবিত্র প্রেম-সেবা জগজ্জিনিয়া ॥৮৪॥

এত বলি' ফল ফেলে প্রাচীর লঙ্ঘিয়া ।
ঐছে পবিত্র প্রেম-সেবা জগত্জিনিয়া ॥৮৪॥

এত বলি'—यह कहकर; **ফল ফেলে**—फलों को फेंक दिया; **প্রাচীর লঙ্ঘিয়া**—सीमा की दीवार के पार; **ঐছে**—ऐसी; **পবিত্র**—पवित्र; **প্রেম-সেবা**—प्रेम सेवा; **জগত্ জিনিয়া**—सारे जगत् को जीतकर।

अनुवाद

"राघव पण्डित की सेवा ऐसी थी। उन्होंने उन नारियलों को नहीं लिया, अपितु उन्हें दीवार से बाहर फेंक दिया। उनकी यह सेवा अनन्य प्रेम पर आश्रित है और यह सारे जगत् को जीतने वाली है।

তবে আর নারিকেল সংস্কার করাইল ।
পরম পবিত্র করি' ভোগ লাগাইল ॥৮৫॥

तबे आर नारिकेल संस्कार कराइल ।
परम पवित्र करि' भोग लागाइल ॥ ८५ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **आर**—दूसरे; **नारिकेल**—नारियल; **संस्कार कराइल**—काटकर साफ किये; **परम पवित्र करि'**—उन्हें शुद्ध रखने में अत्यन्त सावधानी बरतकर; **भोग लागाइल**—भोग लगाया।

अनुवाद

"इसके बाद राघव पण्डित ने दूसरे नारियल मँगवाये, उन्हें साफ कराया और छिलवाया और बड़ी ही सावधानी से अर्चाविग्रह को खाने के लिए अर्पित किया।

এই-মত কলা, আম্র, নারঙ্গ, কাঁঠাল ।
যাহা যাহা দূর-গ্রামে শুনিয়াছে ভাল ॥ ৮৬ ॥

এই-মত কলা, আম্র, নারঙ্গ, কাঁঠাল ।
যাহা যাহা দূর-গ্রামে শুনিয়াছে ভাল ॥ ৮৬ ॥

এই-মত—इस प्रकार; **कला**—केले; **आम्र**—आम; **नारङ्ग**—नारंगियाँ; **काँठाल**—कटहल; **यााहा यााहा**—जो कुछ; **दूर-ग्रामे**—दूर स्थित गाँवों में; **शुनियाछे**—उन्होंने सुना; **भाल**—अच्छा।

अनुवाद

"इस तरह उन्होंने उत्तम केले, आम, नारंगी, कटहल तथा दूर-दूर के गाँवों से जिन-जिन उत्तम फलों के विषय में सुना—सबको एकत्र किया।

বহু-মূল্য দিয়া আনি' করিয়া যতন ।
পবিত্র সংস্কার করি' করে নিবেদন ॥ ৮৭ ॥

বহু-মূল্য দিয়া আনি' করিয়া যতন ।
পবিত্র সংস্কার করি' করে নিবেদন ॥ ৮৭ ॥

बहु-मूल्य—ऊँची कीमत; **दिया**—देकर; **आनि'**—लाकर; **करिया यतन**—बड़ी सावधानी से; **पवित्र**—पवित्र; **संस्कार करि'**—छीलकर; **करे निवेदन**—अर्चाविग्रह को भोग लगाया।

अनुवाद

"ये सारे फल दूर-दूर के स्थानों से काफी ऊँची कीमत देकर एकत्र किये गये। फिर उन्हें बड़ी सावधानी तथा सफाई से काटकर राघव पण्डित ने उन्होंने अर्चाविग्रह को अर्पित किया।

এই মত ব্যঞ্জনের শাক, মূল, ফল ।
এই মত চিড়া, হুড়ুম, সন্দেশ সকল ॥৮৮॥

এই মত ব্যঞ্জনের শাক, মূল, ফল ।
এই মত চিড়া, হুড়ুম, সন্দেশ সকল ॥৮৮॥

এই মত—इस प्रकार; **ব্যঞ্জনের**—सब्जियों का; **শাক**—शाक (पालक); **মূল**—मूली; **ফল**—फल; **এই মত**—इस प्रकार; **চিড়া**—चिवड़ा; **হুড়ুম**—पिसा चावल; **সন্দেশ**—मिठाइयाँ; **সকল**—सभी।

अनुवाद

"इस तरह राघव पण्डित बड़ी सावधानी तथा ध्यान से पालक, अन्य सब्जियाँ, मूली, फल, चिउड़ा, चूर्णित चावल तथा मिठाईयाँ तैयार करते।

এই-মত পিঠা-পানা, ক্ষীর-ওদন ।
পরম পবিত্র, আর করে সর্বোত্তম ॥৮৯॥

এই-মত পিঠা-পানা, ক্ষীর-ওদন ।
পরম পবিত্র, আর করে সর্বোত্তম ॥৮৯॥

এই-মত—इस प्रकार; **পিঠা-পানা**—मिठाई, खीर; **ক্ষীর-ওদন**—क्षीर; **পরম পবিত্র**—परम पवित्र; **আর**—और; **করে**—वे करते हैं; **সর্ব-উত্তম**—सर्वोत्तम स्वादिष्ट।

अनुवाद

"उन्होंने पीठा, पाना, खीर तथा प्रत्येक वस्तु को बड़े ही ध्यान से पकाई और पकाते समय इतनी सफाई रखी कि भोजन उत्तम कोटि का तथा स्वादिष्ट बने।

কাশমৃদি, আচার আদি অনেক প্রকার ।
গন্ধ, বস্ত্র, অলঙ্কার, সর্ব দ্রব্য-সার ॥৯০॥

काशम्दि, आचार आदि अनेक प्रकार ।
गन्ध, वस्त्र, अलङ्कार, सर्व द्रव्य-सार ॥ ९० ॥

काशम्दि—काशम्दी (एक प्रकार का अचार); **आचार**—अन्य अचार; **आदि**—आदि; **अनेक प्रकार**—अनेक प्रकार के; **गन्ध**—सुगन्ध; **वस्त्र**—वस्त्र; **अलङ्कार**—आभूषण; **सर्व**—सब; **द्रव्य**—वस्तुओं में; **सार**—उत्तम।

अनुवाद

"राघव पण्डित काशम्दि जैसे सभी प्रकार के अचार भी भोग लगाते। उन्होंने विविध सुगन्धियाँ, वस्त्र, गहने तथा अच्छी से अच्छी वस्तुएँ अर्पित कीं।

এই-মত প্রেমের সেবা করে অনুপম ।
যাহা দেখি' সর্ব-লোকের জুড়ায় নয়ন ॥ ৯১ ॥

এই-মত প্রেমের সেবা করে অনুপম ।
যাহা দেখি' সর্ব-লোকের জুড়ায় নয়ন ॥ ৯১ ॥

এই-মত—इस प्रकार; **प्रेमेर सेवा**—प्रेममयी सेवा; **करे**—करते हैं; **अनुपम**—अद्वितीय; **याहा देखि'**—जिसे देखकर; **सर्व-लोकेर**—सभी लोगों के; **जुड़ाय**—प्रसन्न हो जाते हैं; **नयन**—नेत्र।

अनुवाद

"इस तरह राघव पण्डित अद्वितीय विधि से भगवान् की सेवा करते। उन्हें देखकर सारे लोग अत्यन्त सन्तुष्ट होते।"

এত বলি' রাঘবেরে কৈল আলিঙ্গনে ।
এই-মত সম্মানিল সর্ব ভক্ত-গণে ॥ ৯২ ॥

এত বলি' রাঘবেরে কৈল আলিঙ্গনে ।
এই-মত সম্মানিল সর্ব ভক্ত-গণে ॥ ৯২ ॥

এত বলি'—यह कहकर; **राघवेरे**—राघव पण्डित का; **कैल आलिङ्गने**—उन्होंने आलिंगन किया; **एइ-मत**—इस प्रकार; **सम्मानिल**—सम्मान किया; **सर्व**—सब; **भक्त-गणे**—भक्तों का।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने दयापूर्वक राघव पण्डित का आलिंगन किया। महाप्रभु ने अन्य सभी भक्तों का भी इसी तरह सम्मान किया।

शिवानन्द सेने कहे करिया सम्मान ।
वासुदेव-दत्तेर तुमि करिह समाधान ॥९३॥

शिवानन्द सेने कहे करिया सम्मान ।
वासुदेव-दत्तेर तुमि करिह समाधान ॥९३॥

शिवानन्द सेने—शिवानन्द सेन को; **कहे**—कहा; **करिया सम्मान**—सम्मानपूर्वक; **वासुदेव-दत्तेर**—वासुदेव दत्त का; **तुमि**—तुम; **करिह**—रखो; **समाधान**—ध्यान।

अनुवाद

महाप्रभु ने शिवानन्द सेन से भी आदरपूर्वक कहा, "वासुदेव दत्त का ठीक से ध्यान रखना।

परम उदार इँहो, ये दिन ये आइसे ।
सेइ दिने व्यय करे, नाहि राखे शेषे ॥९४॥

परम उदार इँहो, ये दिन ये आइसे ।
सेइ दिने व्यय करे, नाहि राखे शेषे ॥९४॥

परम उदार—परम उदार; **इँहो**—वह; **ये दिन**—प्रतिदिन; **ये आइसे**—जो कुछ उसे मिलता है; **सेइ दिने**—उसी दिन; **व्यय करे**—खर्च कर देता है; **नाहि**—नहीं; **राखे**—रखता; **शेषे**—कुछ शेष।

अनुवाद

"वासुदेव दत्त अत्यन्त उदार है। उसे प्रतिदिन जितनी आमदनी होती है, उसे वह खर्च कर देता है। वह कुछ भी बचाकर नहीं रखता।

'गृहस्थ' हयेन इँहो, चाहिये सञ्चय ।
सञ्चय ना कैले कुटुम्ब-भरण नाहि हय ॥९५॥

'गृहस्थ' हयेन इँहो, चाहिये सञ्चय ।
सञ्चय ना कैले कुटुम्ब-भरण नाहि हय ॥ ९५॥

गृहस्थ—गृहस्थ; **हयेन**—है; **इँहो**—वह (वासुदेव दत्त); **चाहिये सञ्चय**—कुछ धन बचाना चाहिए; **सञ्चय ना कैले**—धन बचाए बिना; **कुटुम्ब-भरण**—परिवार का पालन-पोषण; **नाहि हय**—सम्भव नहीं है।

अनुवाद

"गृहस्थ होने के कारण वासुदेव दत्त को कुछ धन बचाना चाहिए। किन्तु वह ऐसा नहीं करता, इसलिए उसके लिए अपने परिवार का भरण-पोषण कर पाना अत्यन्त कठिन है।

ইহার ঘরের আয়-ব্যয় সব——তোমার স্থানে ।
'সর খেল' হঞা তুমি করিহ সমাধানে ॥৯৬॥

इहार घरेर आय-व्यय सब——तोमार स्थाने ।
'सर खेल' हञा तुमि करिह समाधाने ॥ ९६॥

इहार—वासुदेव दत्त का; **घरेर**—पारिवारिक मामलों के; **आय-व्यय**—आय और व्यय; **सब**—सब; **तोमार स्थाने**—तुम्हारे स्थान पर; **सर खेल हञा**—प्रबन्धक होकर; **तुमि**—तुम; **करिह समाधाने**—व्यवस्था करो।

अनुवाद

"कृपया वासुदेव दत्त के पारिवारिक मामलों पर ध्यान दें। उनके व्यवस्थापक बनकर समुचित प्रबन्ध करो।

तात्पर्य

वासुदेव दत्त तथा शिवानन्द सेन अड़ोस-पड़ोस में रहने वाले थे, जिसे अब कुमारहट्ट या हालिसहर कहते हैं।

প্রতি-বর্ষে আমার সব ভক্ত-গণ লঞা ।
গুণ্ডিচায় আসিবে সবায় পালন করিয়া ॥৯৭॥

प्रति-वर्षे आमार सब भक्त-गण लञा ।
गुण्डिचाय आसिबे सबाय पालन करिया ॥ ९७॥

प्रति-वर्षे—प्रति वर्ष; **आमार**—मेरे; **सब**—सब; **भक्त-गण लञा**—भक्तों के साथ; **गुण्डिचाय**—गुण्डिचा उत्सव पर सफाई; **आसिबे**—तुम आओगे; **सबाय**—हर एक का; **पालन करिया**—पोषण करने।

अनुवाद

"तुम लोग हर वर्ष आना और मेरे सारे भक्तों को अपने साथ गुण्डिचा उत्सव में लाना। मेरी यह भी विनती है कि उन सबका भरण-पोषण करना।"

कुलीन-ग्रामीरे कहे सम्मान करिया ।
प्रत्यब्द आसिबे यात्राय पट्ट-डोरी लञा ॥९८॥

कुलीन-ग्रामीरे कहे सम्मान करिया ।
प्रत्यब्द आसिबे यात्राय पट्ट-डोरी लञा ॥९८॥

कुलीन-ग्रामीरे—कुलीन ग्राम की निवासियों को; **कहे**—कहा; **सम्मान करिया**—सम्मानपूर्वक; **प्रति-अब्द**—प्रति वर्ष; **आसिबे**—कृपया आओ; **यात्राय**—रथयात्रा उत्सव पर; **पट्ट-डोरी**—रेशमी रस्सी; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

इसके बाद महाप्रभु ने कुलीन ग्राम के सारे निवासियों को आदरपूर्वक आमन्त्रित किया कि वे प्रतिवर्ष आयें और रथयात्रा उत्सव के समय भगवान् जगन्नाथ को खींचे जाने के लिए रेशमी रस्सी लायें।

गुणराज-खाँन कैल श्री-कृष्ण-विजय ।
ताहाँ एक-वाक्य ताँर आछे प्रेममय ॥९९॥

गुणराज-खाँन कैल श्री-कृष्ण-विजय ।
ताहाँ एक-वाक्य ताँर आछे प्रेममय ॥९९॥

गुणराज-खाँन—गणराज खान ने; **कैल**—किया; **श्री-कृष्ण-विजय**—श्रीकृष्ण विजय नामक ग्रन्थ; **ताहाँ**—वहाँ; **एक-वाक्य**—एक वाक्य; **ताँर**—इसका; **आछे**—है; **प्रेम-मय**—कृष्ण-प्रेम से पूर्ण।

अनुवाद

फिर श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "कुलीन ग्राम के श्री गुणराज खान

ने श्रीकृष्णविजय नामक एक ग्रंथ रचा है, जिसमें लेखक के कृष्ण-प्रेम को प्रकट करने वाला एक वाक्य है।"

तात्पर्य

श्रीकृष्णविजय बंगाल में लिखा गया प्रथम काव्यग्रंथ माना जाता है। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कहते हैं कि यह पुस्तक बाँग्ला शकाब्द १३९५ (१४७३ ई.) में लिखी गई। यह ७ वर्षों में पूर्ण हुई (१४०२ शकाब्द में)। यह सरल भाषा में लिखी गई थी, जिसे अर्धशिक्षित बंगाली पुरुष तथा स्त्रियाँ भी पढ़ सकते थे। यहाँ तक कि कम पढ़े-लिखे सामान्य व्यक्ति भी इस पुस्तक को पढ़ और समझ लेते थे। इसकी भाषा अधिक अलंकारमयी नहीं है और काव्य कहीं-कहीं सुनने में मधुर भी नहीं है। यद्यपि दोहे में चौदह मात्राएँ होनी चाहिए, किन्तु कहीं १६ तो कहीं १२ या १३ मात्राएँ भी हैं। इसमें प्रयुक्त कुछ शब्द केवल स्थानीय लोग ही समझ सकते थे, किन्तु आज भी यह पुस्तक इतनी लोकप्रिय है कि कोई भी पुस्तक-भंडार इसके बिना पूर्ण नहीं है। जो कृष्णभावनामृत में प्रगति करना चाहते हैं, उनके लिए यह पुस्तक अत्यन्त मूल्यवान है।

श्री गुणराज खान सर्वोत्कृष्ट वैष्णवों में से एक थे और उन्होंने सामान्य लोगों के समझने के लिए *श्रीमद्भागवत* के दशम तथा एकादश स्कन्धों का अनुवाद किया था। *श्रीकृष्णविजय* नामक पुस्तक की प्रशंसा श्री चैतन्य महाप्रभु ने बहुत की थी और यह समस्त वैष्णवों के लिए अत्यन्त मूल्यवान है। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने गुणराज खान के परिवार का इतिहास तथा वंश-वृक्ष दिया है। जब आदिशूर नामक एक बंगाली सम्राट कान्यकुब्ज अथवा कन्नोज से पहली बार यहाँ आया, तो वह अपने साथ पाँच ब्राह्मण और पाँच कायस्थ लेता आया था। चूँकि सम्राट के साथ उनके निजी संगियों का होना आवश्यक माना जाता है, अत: ये ब्राह्मण राजा को उच्चतर आध्यात्मिक विषयों में तथा कायस्थ अन्य सेवाओं में सहायता प्रदान करने के लिए उनके साथ आये थे। उत्तरी भारत में कायस्थों को शूद्र माने जाते हैं, किन्तु बंगाल में इन्हें उच्च जाति के माने जाते हैं। यह तथ्य है कि बंगाल में ये कायस्थ उत्तरी भारत से, विशेषतया कान्यकुब्ज (कन्नौज) से आये थे। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती

ठाकुर कहते हैं कि कान्यकुब्ज से आने वाले कायस्थ उच्च जाति के लोग थे। इनमें से दशरथ वसु एक महापुरुष थे और उसकी तेरहवीं पीढ़ी में गुणराज खान हुए।

उनका असली नाम मालाधर वसु था, लेकिन बंगाल के सम्राट ने उन्हें खान की उपाधि प्रदान की। इस तरह वे गुणराज खान कहलाये। भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने गुणराज खान की वंशावली इस प्रकार दी है—(१) दशरथ वसु; (२) कुशल; (३) शुभशंकर; (४) हंस; (५) शक्तिराम (बागाण्डा), मुक्तिराम (माइनगर) तथा अलंकार (बंगज); (६) दामोदर; (७) अनन्तराम; (८) गुणीनायक तथा वीणानायक। बारहवीं पीढ़ी में भगीरथ तथा तेरहवी पीढ़ी में मालाधर वसु अर्थात् गुणराज खान हुए। श्री गुणराज खान के १४ पुत्र थे, जिनमें से दूसरे पुत्र लक्ष्मीनाथ वसु को सत्यराज खान की उपाधि प्राप्त हुई। उसका पुत्र रामानन्द वसु था; अतएव वह पन्द्रहवीं पीढ़ी में हुआ। गुणराज खान सुप्रसिद्ध धनवान व्यक्ति थे। आज भी उनके महल, किला तथा मन्दिर अस्तित्व में हैं, जिनसे हम अनुमान लगा सकते हैं कि गुणराज खान के पास कितनी सम्पत्ति थी। श्री गुणराज खाँन बल्लाल सेन द्वारा प्रारम्भ की गई नकली कुलीनता की कभी परवाह नहीं करते थे।

"নন্দনন্দন কৃষ্ণ—মোর প্রাণ-নাথ" ।
এই বাক্যে বিকাইনু তাঁর বংশের হাত ॥১০০॥

"नन्दनन्दन कृष्ण—मोर प्राण-नाथ" ।
एइ वाक्ये विकाइनु ताँर वंशेर हात ॥ १०० ॥

नन्द-नन्दन कृष्ण—नन्द महाराज का बेटा कृष्ण; **मोर प्राण-नाथ**—मेरे प्राणनाथ; **एइ वाक्ये**—इस वर्णन के कारण; **विकाइनु**—मैं बिक गया; **ताँर**—उसके; **वंशेर हात**—वंशजों के हाथ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "'नन्द महाराज के पुत्र श्रीकृष्ण मेरे प्राणाधार हैं।' मैं इसी वाक्य से गुणराज खान के उत्तराधिकारियों के हाथों बिक गया हूँ।

तात्पर्य

यहाँ जिस श्लोक के अंश का उल्लेख है, वह पूरा श्लोक इस तरह है :

एक-भावे वन्द हरि योड़ करि 'हात।
नन्दनन्दन कृष्ण—मोर प्राण-नाथ॥

"मैं हाथ जोड़कर नन्द महाराज के पुत्र कृष्ण की वन्दना करता हूँ—वे मेरे प्राणनाथ हैं।"

তোমার কি কথা, তোমার গ্রামের কুক্কুর ।
সেই মোর প্রিয়, অন্য-জন রহু দূর ॥১০১॥

তোমার কি কথা, তোমার গ্রামের কুক্কুর ।
সেই মোর প্রিয়, অন্য-জন রহু দূর ॥১০১॥

तोमार—तुम्हारा; **कि कथा**—क्या कहें; **तोमार**—तुम्हारे; **ग्रामेर**—गाँव का; **कुक्कुर**—एक कुत्ता; **सेइ**—वह; **मोर**—मुझे; **प्रिय**—अतिप्रिय; **अन्य-जन**—अन्यों का; **रहु दूर**—क्या कहना।

अनुवाद

"तुम्हारे लिए तो क्या कहना, तुम्हारे गाँव का रहने वाला कुत्ता भी मुझे अत्यन्त प्रिय है। तो फिर अन्यों के बारे में तो कहना ही क्या?"

তবে রামানন্দ, আর সত্যরাজ খাঁন ।
প্রভুর চরণে কিছু কৈল নিবেদন ॥১০২॥

তবে রামানন্দ, আর সত্যরাজ খাঁন ।
প্রভুর চরণে কিছু কৈল নিবেদন ॥১০২॥

तबे—इसके बाद; **रामानन्द**—रामानन्द वसु; **आर**—और; **सत्यराज खाँन**—सत्यराज खान; **प्रभुर चरणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **किछु**—कुछ; **कैल**—किया; **निवेदन**—निवेदन।

अनुवाद

इसके बाद रामानन्द वसु तथा सत्यराज खान दोनों ने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में कुछ प्रश्न निवेदन किये।

গৃহস্থ বিষয়ী আমি, কি মোর সাধনে ।
শ্রী-মুখে আজ্ঞা কর প্রভু—নিবেদি চরণে ॥ ১০৩ ॥

गृहस्थ विषयी आमि, कि मोर साधने ।
श्री-मुखे आज्ञा कर प्रभु—निवेदि चरणे ॥ १०३ ॥

गृहस्थ—गृहस्थ; **विषयी**—भौतिकतावादी व्यक्ति; **आमि**—मैं; **कि**—क्या; **मोर साधने**—आध्यात्मिक जीवन में मेरी प्रगति की प्रक्रिया; **श्री-मुखे**—आपके मुख से; **आज्ञा कर**—कृपया आज्ञा करो; **प्रभु**—मेरे प्रभु; **निवेदि चरणे**—मैं आपके चरणकमलों पर निवेदन करता हूँ।

अनुवाद

सत्यराज खान ने कहा, "हे प्रभु, गृहस्थ तथा भौतिकतावादी व्यक्ति होने के कारण मैं आध्यात्मिक जीवन में आगे बढ़ने की विधि नहीं जानता। इसीलिए मैं आपके चरणकमलों की शरण स्वीकार करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे आदेश दें।"

প্রভু কহেন,—'কৃষ্ণ-সেবা', 'বৈষ্ণব-সেবন' ।
'নিরন্তর কর কৃষ্ণ-নাম-সঙ্কীর্তন' ॥ ১০৪ ॥

प्रभु कहेन,—'कृष्ण-सेवा', 'वैष्णव-सेवन' ।
'निरन्तर कर कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन' ॥ १०४ ॥

प्रभु कहेन—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **कृष्ण-सेवा**—कृष्ण की सेवा; **वैष्णव-सेवन**—वैष्णवों की आज्ञा का पालन करते हुए; **निरन्तर**—निरन्तर; **कर**—करो; **कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन**—कृष्ण-नाम का संकीर्तन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "तुम निरन्तर कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करो और जब भी सम्भव हो, उनकी तथा उनके भक्त वैष्णवों की सेवा करो।"

সত্যরাজ বলে,—বৈষ্ণব চিনিব কেমনে? ।
কে বৈষ্ণব, কহ তাঁর সামান্য লক্ষণে ॥ ১০৫ ॥

सत्यराज बले,—वैष्णव चिनिब केमने? ।
के वैष्णव, कह ताँर सामान्य लक्षणे ॥ १०५॥

सत्यराज बले—सत्यराज खान ने कहा; **वैष्णव**—एक वैष्णव को; **चिनिब केमने**—मैं कैसे पहचानूँगा; **के वैष्णव**—कौन वैष्णव है; **कह**—कृपया कहो; **ताँर**—उसके; **सामान्य लक्षणे**—सामान्य लक्षण।

अनुवाद

यह सुनकर सत्यराज ने कहा, "मैं वैष्णव को कैसे पहचान सकता हूँ? कृपया मुझे बतायें कि वैष्णव कौन होता है? उसके सामान्य लक्षण क्या हैं?"

प्रभु कहे,—"याँर मुखे शुनि एक-बार ।
कृष्ण-नाम, सेइ पूज्य,—श्रेष्ठ सबाकार" ॥ १०६॥

प्रभु कहे—चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया; **याँर मुखे**—जिसके मुख में; **शुनि**—मैं सुनता हूँ; **एक-बार**—एक बार; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम; **सेइ पूज्य**—वह पूजनीय है; **श्रेष्ठ सबाकार**—सभी मनुष्यों में श्रेष्ठ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "जो भी व्यक्ति कृष्ण के पवित्र नाम का एक बार भी उच्चारण करता है, वह पूज्य है और सर्वोच्च मानव है।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कहते हैं कि एक बार कृष्ण का पवित्र नाम लेने से ही मनुष्य पूर्ण बनता है और उसे वैष्णव के रूप में स्वीकार करना चाहिए। इसकी पुष्टि श्रील रूप गोस्वामी अपने उपदेशामृत (५) में करते हैं : *कृष्णेति यस्य गिरि तं मनसाद्रियेत।* पवित्र नाम में ऐसी श्रद्धा के साथ मनुष्य कृष्णभावना में जीवन का प्रारम्भ कर सकता है, किन्तु एक सामान्य व्यक्ति इतनी श्रद्धा के साथ कृष्ण के पवित्र नाम का उच्चारण नहीं कर सकता। मनुष्य को कृष्ण के पवित्र नाम को दिव्यता के स्वरूप, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के साथ

एक समान होने के रूप में स्वीकार करना चाहिए। जैसाकि पद्म पुराण में कहा गया है : "कृष्ण के पवित्र नाम कृष्ण से अभिन्न है और यह चिन्तामणि रत्न की तरह है। । कृष्ण-नाम नितान्त दिव्य एवं शाश्वत रूप से भौतिक कल्मष से मुक्त ध्वनि में कृष्ण का साकार रूप है।" इस तरह मनुष्य को समझना होगा कि "कृष्ण" नाम तथा स्वयं कृष्ण अभिन्न हैं। ऐसी श्रद्धा के साथ मनुष्य को नाम-कीर्तन करते रहना होगा।

नया भक्त शुद्ध भक्त के भक्तिमय अवयवों को नहीं समझ सकता। किन्तु जब वह भक्ति में लगता है, विशेषतया अर्चाविग्रह की पूजा करता है और प्रामाणिक गुरु के आदेशानुसार चलता है, तब वह शुद्ध भक्त बन जाता है। कोई भी व्यक्ति ऐसे भक्त से कृष्णभावना के विषय में श्रवण करने का लाभ उठा सकता है और इस तरह धीरे-धीरे शुद्ध बन सकता है। दूसरे शब्दों में, कोई भी भक्त जो यह मानता है कि भगवान् का नाम भगवान् से अभिन्न है, वह शुद्ध भक्त है, भले ही वह अभी कनिष्ठ अवस्था में क्यों न हो। उसकी संगति से अन्य लोग भी वैष्णव बन सकते हैं।

जो व्यक्ति केवल हरि के अर्चाविग्रह की पूजा श्रद्धापूर्वक करता है, किन्तु भक्तों तथा अन्यों को समुचित आदर नहीं देता, वह भौतिकतावादी भक्त कहलाता है। इसकी पुष्टि *श्रीमद्भागवत* (११.२.४७) में हुई है :

अर्चायामेव हरये पूजां यः पूजा श्रद्धयेहते।
न तद्भक्तेषु चान्येषु स भक्तः प्राकृतः स्मृतः॥

किन्तु ऐसे कनिष्ठ भक्त की संगति से भी मनुष्य भक्त बन सकता है। श्री चैतन्य ने सनातन गोस्वामी को शिक्षा देते समय कहा था :

श्रद्धावान् जन हय भक्ति अधिकारी।
'उत्तम' 'मध्यम' 'कनिष्ठ'—श्रद्धा-अनुसारी॥
याहार कोमल-श्रद्धा, से 'कनिष्ठ' जन।
क्रमे क्रमे तेंहो भक्त हइबे 'उत्तम'॥
रति-प्रेम-तारतम्ये भक्त-तरतम।

"जिस व्यक्ति ने दृढ़ श्रद्धा प्राप्त कर ली है, वह कृष्णभावनामृत में अग्रसर होने का असली पात्र है। श्रद्धा के अनुसार उत्तम, मध्यम तथा कनिष्ठ भक्त होते हैं।

जिसमें प्रारम्भिक श्रद्धा होती है, वह कनिष्ठ अधिकारी या नौसिखिया भक्त कहलाता है। किन्तु कनिष्ठ भक्त भी गुरु द्वारा निर्धारित विधि-विधानों का कड़ाइ से पालन करते रहने पर उच्च भक्त बन सकता है। अत: कृष्ण में श्रद्धा और अनुराग के आधार पर यह जाना जा सकता है कि कौन मध्यम-अधिकारी है और कौन उत्तम-अधिकारी। (*चैतन्य-चरितामृत,* मध्य २२.६४, ६९, ७१)

इस तरह यह निष्कर्ष निकलता है कि एक कनिष्ठ अधिकारी भी कर्मियों तथा ज्ञानियों से बैहतर है, क्योंकि उसे भगवान् के पवित्र नाम के कीर्तन में पूर्ण विश्वास रहता है। एक कर्मी या ज्ञानी कितना भी महान् क्यों न हो, वह भगवान् विष्णु, उनके नाम या उनकी भक्ति में श्रद्धा नहीं रखता। कोई धार्मिक रीति से कितना ही उन्नत क्यों न हो, किन्तु यदि वह भक्ति में प्रशिक्षित नहीं है, तो आध्यात्मिक धरातल पर उसे कोई श्रेय नहीं मिल सकता। गुरु द्वारा निर्धारित विधि-विधानों के अनुसार अर्चाविग्रह की पूजा में लगा रहने वाला कनिष्ठ भक्त भी कर्मी तथा ज्ञानी से श्रेष्ठ होता है।

''एक कृष्ण-नामे करे सर्व-पाप क्षय ।
नव-विधा भक्ति पूर्ण नाम हैते हय ॥ १०७॥

''एक कृष्ण-नामे करे सर्व-पाप क्षय ।
नव-विधा भक्ति पूर्ण नाम हैते हय ॥ १०७॥

एक कृष्ण-नामे—कृष्ण का एक पावन नाम; **करे**—कर सकता है; **सर्व-पाप**—सभी पाप-फलों का; **क्षय**—नाश; **नव-विधा**—नौ विधियाँ; **भक्ति**—भक्ति की; **पूर्ण**—पूर्ण; **नाम हैते**—पावन नाम का कीर्तन करने मात्र से; **हय**—है।

अनुवाद

"कृष्ण के पवित्र नाम का एक बार कीर्तन करने मात्र से मनुष्य सारे पापी जीवन के सारे फलों से छूट जाता है। पवित्र नाम का कीर्तन करने से मनुष्य भक्ति की नवों विधियों को पूरा कर सकता है।

तात्पर्य

नौ प्रकार की भक्ति (नवधा भक्ति) का उल्लेख *श्रीमद्भागवत* (७.५.२३-२४) में हुआ है :

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्॥
इति पुंसार्पिता विष्णो भक्तिश्चेन्नवलक्षणाः।
क्रियेत भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम्॥

सुनना, कीर्तन करना, पवित्र नाम, रूप, लीलाओं, गुणों और संगियों का स्मरण करना, समय, स्थान तथा कर्ता के अनुसार सेवा करना, अर्चाविग्रह की पूजा करना, प्रार्थना करना, स्वयं को सदा कृष्ण का सनातन सेवक समझना, भगवान् के साथ मैत्रीभाव स्थापित करना तथा उन्हें सर्वस्व समर्पित करना भक्ति की प्रक्रियाएँ हैं। भक्ति के ये नौ कार्य जब कृष्ण को सीधे समर्पित किये जाते हैं, तब वे जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि होते हैं। यही प्रामाणिक शास्त्रों का निर्णय है।"

जहाँ तक केवल एक बार कृष्ण के पवित्र नाम लेने से सभी पाप-फलों से मुक्त हो जाने का प्रश्न है, मनुष्य को भगवन्नाम का कीर्तन निरपराध भाव से करना चाहिए। तब केवल एक बार भगवन्नाम का जप जीव को सारे पाप-फलों से मुक्त करने के लिए पर्याप्त है। निरपराध भाव से जप करने वाला ऐसा व्यक्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं पूजनीय है। निस्सन्देह श्रवण, कीर्तन इत्यादि भक्ति की नवों विधियाँ भगवान् के पवित्र नाम का निरपराध कीर्तन करने से तुरन्त प्राप्त की जा सकती हैं।

इस सन्दर्भ में श्रील जीव गोस्वामी अपनी पुस्तक *भक्ति-सन्दर्भ* (१७३) में कहते हैं—*यद्यपि अन्या भक्तिः कलौ कर्तव्या, तदा कीर्तनाख्य-भक्तिसंयोगेनैव।* भक्ति की नवों विधियों में से कीर्तन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसीलिए श्रील जीव गोस्वामी का आदेश है कि अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य आदि अन्य विधियों को तो सम्पन्न करना ही चाहिए, किन्तु उनके पहले और बाद में पवित्र नाम का कीर्तन होना चाहिए। इसीलिए हमने अपने सारे केन्द्रों में यह विधि आरम्भ की है। अर्चन, आरति, भोग, समर्पण, अर्चाविग्रह अलंकरण के पहले और बाद में भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन—हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे / हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे—किया जाता है।

दीक्षा-पुरश्चर्या-विधि अपेक्षा ना करे ।
जिह्वा-स्पर्शे आ-चण्डाल सबारे उद्धारे ॥ १०८ ॥

दीक्षा-पुरश्चर्या-विधि अपेक्षा ना करे ।
जिह्वा-स्पर्शे आ-चण्डाल सबारे उद्धारे ॥ १०८ ॥

दीक्षा—दीक्षा; **पुरश्चर्या**—दीक्षा से पहले का कार्य; **विधि**—विधि-विधान; **अपेक्षा**—पर निर्भरता; **ना**—नहीं; **करे**—करती है; **जिह्वा**—जबान; **स्पर्शे**—स्पर्श करके; **आ-चण्डाल**—एक चाण्डाल भी; **सबारे**—प्रत्येक का; **उद्धारे**—उद्धार करती है।

अनुवाद

"न तो दीक्षा लेने की आवश्यकता है न दीक्षा के पूर्व के आवश्यक कृत्य करने की। मनुष्य को केवल होठों पर पवित्र नाम लाना होता है। इस प्रकार अधम से अधम व्यक्ति (चण्डाल) का भी उद्धार हो जाता है।

तात्पर्य

श्रील जीव गोस्वामी ने अपनी पुस्तक *भक्ति-सन्दर्भ* (२८३) में दीक्षा की व्याख्या की है :

दिव्यं ज्ञानं यतो दद्यात्
कुर्यात् पापस्य सङ्क्षयम् ।
तस्मात् दीक्षेति सा प्रोक्ता
देशिकैस्तत्त्वकोविदैः ॥

"दीक्षा वह विधि है, जिससे मनुष्य दिव्य ज्ञान को जाग्रत कर सकता है और अपने सारे पापकर्मों के फलों का क्षय कर सकता है। प्रामाणिक शास्त्रों के अध्ययन में पटु व्यक्ति इस विधि को दीक्षा नाम से जानता है।" दीक्षा के विधानों की व्याख्या *हरिभक्ति-विलास* (२.३-४) तथा *भक्ति- सन्दर्भ* (२८३) में की गई है :

द्विजानामनुपेतानां स्वकर्माध्ययनादिषु
यथाधिकारो नास्तीह स्याच्चोपनयनादनु ।
तथात्रादीक्षितानां तु मन्त्रदेवार्चनादिषु
नाधिकारोऽस्त्यतः कुर्यादात्मानं शिवसंस्तुतम् ॥

"भले ही कोई ब्राह्मण कुल में उत्पन्न क्यों न हुआ हो, वह दीक्षा तथा जनेऊ

के बिना वैदिक कर्मकाण्ड सम्पन्न नहीं कर सकता। ब्राह्मण कुल में जन्म लेने पर भी मनुष्य दीक्षा तथा यज्ञोपवीत संस्कार के बाद ही ब्राह्मण बनता है। ब्राह्मण के रूप में दीक्षित हुए बिना वह ठीक से पवित्र नाम की पूजा नहीं कर सकता।"

वैष्णव नियमों के अनुसार मनुष्य को ब्राह्मण रूप में दीक्षित होना चाहिए। *हरिभक्ति-विलास* (२.६) में *विष्णु यामल* का निम्नलिखित उद्धरण दिया गया है :

अदीक्षितस्य वामोरु कृतं सर्वं निरर्थकम्।
पशुयोनिमवाप्नोति दीक्षाविरहितो जनः॥

"'प्रामाणिक गुरु से दीक्षा प्राप्त किये बिना मनुष्य के सारे भक्ति-कार्य व्यर्थ जाते हैं। जिस व्यक्ति की ठीक से दीक्षा नहीं हुई रहती, वह पुनः पशु योनि को प्राप्त हो सकता है।'"

हरिभक्ति-विलास (२.१०) में आगे भी उद्धरण है :

अतो गुरुं प्रणम्यैवं सर्वस्वं विनिवेद्य च।
गृहणीयाद्वैष्णवं मन्त्रं दीक्षापूर्वं विधानतः॥

"'प्रामाणिक गुरु की शरण में जाना हर मनुष्य का धर्म है। उसे अपना तन, मन तथा बुद्धि—सब कुछ देकर गुरु से वैष्णव दीक्षा लेनी चाहिए।'"

भक्ति-सन्दर्भ (२९८) में *तत्त्व सागर* का निम्नलिखित उद्धरण मिलता है :

यथा काञ्चनतां याति कास्यं रसविधानतः।
तथा दीक्षाविधानेन द्विजत्वं जायते नृणाम्॥

"'जब कांसे को पारे से स्पर्श कराया जाता है, तो वह रासायनिक क्रिया द्वारा सोने में बदल जाता है। इसी तरह विधिवत् दीक्षा होने पर व्यक्ति में ब्राह्मण के गुण आ जाते हैं।'"

पुरश्चर्या विधि की व्याख्या करते हुए *हरिभक्ति-विलास* (१७.११-१२) में *अगस्त्य-संहिता* के निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किये गये हैं :

पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तर्पणमेव च।
होमो ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते॥

गुरोर्लब्धस्य मन्त्रस्य प्रसादेन यथाविधि।
पञ्चाङ्गोपासनासिद्ध्यै पुरश्चैतद्विधीयते॥

"'प्रातः, दोपहर तथा सायंकाल अर्चाविग्रह का पूजन, हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन, तर्पण, अग्नि-यज्ञ तथा ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। ये पाँचों कार्य पुरश्चर्या कहलाते हैं। गुरु से दीक्षा लेते समय पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए पहले इन पुरश्चर्या कार्यों को सम्पन्न करना चाहिए।'"

पुरः शब्द का अर्थ है "पहले" और *चर्या* का अर्थ है "कार्य।" इन कार्यों के आवश्यक होने के कारण ही हम अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ में शिष्यों को तुरन्त दीक्षित नहीं करते। दीक्षा के पूर्व *छः* मास तक शिष्य को पहले आरती तथा शास्त्रों की कक्षाओं में भाग लेना होता है, विधि-विधानों का पालन करना होता है और अन्य भक्तों की संगति करनी होती है। जब वह पुरश्चर्या-विधि में वस्तुतः अग्रसर हो जाता है, तब स्थानीय मन्दिर-अध्यक्ष दीक्षा के लिए उसकी संस्तुति करता है। ऐसा नहीं है कि नियमों को पूरा किये बिना किसी को सहसा दीक्षित किया जा सके। जब वह हरे कृष्ण मन्त्र का प्रतिदिन सोलह माला जप करके, नियमों का पालन करके तथा कक्षाओं में उपस्थित रहकर उन्नति करता है, तब अगले छह महीनों में उसका यज्ञोपवीत कर दिया जाता है।

हरिभक्ति-विलास (१७.४-५, ७) में कहा गया है :

विना येन न सिद्धः स्यान्मन्त्रो वर्षशतैरपि।
कृतेन येन लभते साधको वाञ्छितं फलम्॥
पुरश्चरण सम्पन्नो मन्त्रो हि फलधायकः।
अतः पुरष्क्रियां कुर्यात् मन्त्रवित् सिद्धिकङ्क्षया॥
पुरष्क्रिया हि मन्त्राणां प्रधानं वीर्यमुच्यते।
वीर्यहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनो हि तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः॥

"पुरश्चर्या विधि को सम्पन्न किये बिना इस मन्त्र का सैंकड़ों वर्षों तक कीर्तन करने पर भी पूर्णता प्राप्त नहीं की जा सकती। किन्तु जिसने पुरश्चर्या विधि का पालन किया है, उसे सरलता से सफलता प्राप्त हो सकती है। अपनी दीक्षा की

पूर्णता चाहने वाले को चाहिए कि पहले वह पुरश्चर्या विधि का पालन करे। पुरश्चर्या विधि वह जीवनी शक्ति है, जिससे मन्त्रोच्चार में सफलता प्राप्त होती है। इस जीवनी शक्ति के बिना कुछ भी नहीं किया जा सकता। इसी तरह पुरश्चर्या विधि की जीवनी शक्ति के बिना कोई मन्त्र सिद्ध नहीं होता।"

श्रील जीव गोस्वामी ने अपने ग्रन्थ *भक्ति-सन्दर्भ* (२८३-८४) में अर्चाविग्रह की पूजा और दीक्षा के महत्त्व का वर्णन इस प्रकार किया है :

यद्यपि श्रीभागवत-मते पञ्चरात्रादि-यत् अर्चन-मार्गस्य आवश्यकत्वं नास्ति तद् विनापि शरणापत्यादिनाम् एकतरेणापि पुरुषार्थ-सिद्धेरभिहितत्वात्, तथापि श्रीनारदादि-वर्तमानुसरद्भिः श्रीभगवता सह सम्बन्ध-विशेषम् दीक्षा-विधानेन श्री-गुरु-चरण सम्पादितम् चिकीर्षाद्भिः कृतायां दीक्षायामर्चनमवश्यं क्रियेतैव।

यद्यपि स्वरूपतो नास्ति, तथापि प्रायः स्वभावतो देहादिस्म्बन्धेन कर्दयशीलानां विक्षिप्तचित्तानां जनानां तत्तत्संकोचीकरणाय श्रीमद्ऋषि-प्रभृतिभि रत्रार्चनमार्गे क्वचित् क्वचित् काचित् काचिन् मर्यादा स्थापितास्ति।

"*श्रीमद्भागवत* का मत है कि अर्चाविग्रह की पूजा की प्रक्रिया वास्तव में आवश्यक नहीं है। ठीक उसी तरह जिस तरह पंचरात्र तथा अन्य शास्त्रों द्वारा निर्धारित आदेशों का पालन करना आवश्यक नहीं है। *भागवत* का आदेश है कि अर्चाविग्रह की पूजा सम्पन्न किए बिना भी मनुष्य किसी अन्य भक्ति-विधि से मानव जीवन को पूरी तरह सफल बना सकता है, जैसे भगवान् के चरणों पर उनके संरक्षण के लिए स्वयं को समर्पित करने मात्र से। फिर भी, श्री नारद तथा उनके उत्तरवर्तियों के मार्ग पर चलने वाले वैष्णव, गुरु द्वारा दीक्षित होकर, उनकी कृपा प्राप्त करके भगवान् से निजी सम्बन्ध जोड़ने का प्रयास करते हैं और इस परम्परा में दीक्षा के समय भक्तों को अर्चाविग्रह-पूजा शुरू करनी पड़ती है।

"यद्यपि अर्चाविग्रह-पूजा आवश्यक नहीं है, भक्ति के मार्ग पर चलने वाले अधिकांश व्यक्तियों की भौतिक बद्ध स्थिति को देखते हुए इस कार्य में लगना आवश्यक हो जाता है। उनकी शारीरिक एवं मानसिक स्थितियों पर

विचार करने पर हमें ज्ञात होता है कि ऐसे प्रत्याशियों का चरित्र अशुद्ध और उनके मन उत्तेजित होते हैं। अत: इस भौतिक स्थिति को सुधारने के लिए महर्षि नारद तथा अन्यों ने अलग-अलग समय पर अर्चाविग्रह-पूजा के लिए विविध प्रकार के विधि-विधानों की संस्तुति की है।"

इसी प्रकार *रामार्चन-चन्द्रिका* में कहा गया है :

विनैव दीक्षां विप्रेन्द्र पुरश्चर्यां विनैव हि।
विनैव न्यासविधिना जपमात्रेण सिद्धिदा॥

"हे ब्राह्मणों में सर्वश्रेष्ठ, दीक्षा प्रारम्भिक संस्कार या संन्यास आश्रम स्वीकार किये बिना भी, मनुष्य भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करने मात्र से भक्ति में पूर्णता प्राप्त कर सकता है।"

दूसरे शब्दों में, हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन इतना प्रबल होता है कि यह औपचारिक दीक्षा पर निर्भर नहीं करता, किन्तु यदि कोई दीक्षित होता है और पंचरात्र विधि (अर्चाविग्रह-पूजा) का पालन करता है, तो शीघ्र ही उसकी कृष्ण-चेतना जाग्रत हो जायेगी और भौतिक जगत् से उसकी पहचान शीघ्र समाप्त हो जायेगी। जो जितना ही भौतिक पहचान से मुक्त होता है, वह उतना ही आत्मा की गुणात्मक रूप से परमात्मा से समानता का अनुभव कर सकता है। जब मनुष्य परम पद स्थित होता है, तब वह भगवान् के पवित्र नाम तथा भगवान् में अभिन्नता समझ सकता है। अनुभूति की इस अवस्था में भगवान् के पवित्र नाम अर्थात् हरे कृष्ण मन्त्र की पहचान किसी भौतिक ध्वनि से नहीं की जा सकती। यदि कोई व्यक्ति हरे कृष्ण महामन्त्र को भौतिक ध्वनि मानता है, तो उसका पतन हो जाता है। भगवान् के पवित्र नाम को साक्षात् भगवान् स्वीकार करके उसकी पूजा और कीर्तन करना चाहिए। इसलिए मनुष्य को प्रामाणिक गुरु के निर्देशन में शास्त्रों के आधार पर सम्यक् रीति से दीक्षा लेनी चाहिए। यद्यपि भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन बद्ध तथा मुक्त दोनों प्रकार के जीवों के लिए समान रूप से उत्तम है, किन्तु बद्धजीवों के लिए यह विशेष रूप से लाभप्रद है, क्योंकि कीर्तन करके जीव मुक्त हो सकता है। जब नाम-कीर्तन करने वाला व्यक्ति मुक्त हो जाता है, तो वह भगवद्धाम वापस जाकर पूर्ण सिद्धि को प्राप्त होता है। *चैतन्य-चरितामृत* (आदि ७.७३) के शब्दों में,

कृष्णमन्त्र हइते हबे संसारमोचन।
कृष्णनाम हइते पाबे कृष्णेर चरण॥

"केवल पवित्र कृष्ण-नाम का कीर्तन करने से मनुष्य को भौतिक संसार से मुक्ति मिल सकती है। हरे कृष्ण मन्त्र के कीर्तन मात्र से मनुष्य भगवान् के चरणकमलों का दर्शन प्राप्त कर सकता है।"

भगवान् के पवित्र नाम का निरपराध कीर्तन दीक्षा-क्रिया पर आश्रित नहीं है। यद्यपि दीक्षा *पुरश्चर्या* या *पुरश्चरण* पर आश्रित है, लेकिन भगवन्नाम का वास्तविक कीर्तन पुरश्चर्या विधि अर्थात् नियामक विधि-विधानों पर निर्भर नहीं करता। यदि निरपराध भाव से कोई एक बार भी पवित्र भगवन्नाम का उच्चारण करता है, तो उसे सारी सफलता प्राप्त होती है। भगवन्नाम का कीर्तन करते समय जीभ को चलते रहना चाहिए। नाम-कीर्तन करने मात्र से ही मनुष्य का तुरन्त उद्धार हो जाता है। जिह्वा तो *सेवोन्मुख-जिह्वा* है अर्थात् यह सेवा से नियंत्रित होती है। जिसकी जीभ भौतिक वस्तुओं के आस्वादन तथा उनके विषय में बातें करने में लगी रहती है, वह अपनी जीभ का उपयोग परम अनुभूति के लिए नहीं कर सकता।

अतः श्रीकृष्णनामादि न भवेद् ग्राह्यमिन्द्रियैः।
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः॥

"भौतिक इन्द्रियों से मनुष्य भगवान् के पवित्र नाम या उनके रूप, कार्य तथा लीलाओं को नहीं समझ सकता। किन्तु जब कोई वास्तव में भक्ति में लग जाता है और अपनी जिह्वा का उपयोग करता है, तब उसे भगवान् की अनुभूति होती है।" *चैतन्य-चरितामृत* (मध्य १७.१३४) के अनुसार :

अतएव कृष्णेर 'नाम' 'देह' 'विलास'।
प्राकृतेन्द्रिय-ग्राह्य नहे, हय स्वप्रकाश॥

"इन कुण्ठित भौतिक इन्द्रियों के द्वारा भगवान् के दिव्य नाम, उनके रूप, कार्य तथा लीलाओं को नहीं समझे जा सकते। वे तो स्वतंत्र रूप से व्यक्त होते हैं।"

অনুষঙ্গ-ফলে করে সংসারের ক্ষয় ।
চিত্ত আকর্ষিয়া করায় কৃষ্ণে প্রেমোদয় ॥১০৯॥

अनुषङ्ग-फले करे संसारेर क्षय ।
चित्त आकर्षिया कराय कृष्णे प्रेमोदय ॥ १०९ ॥

अनुषङ्ग-फले—साथ ही साथ परिणाम के रूप में; **करे**—करता है; **संसारेर क्षय**—भौतिक बद्धावस्था का अन्त; **चित्त**—विचार; **आकर्षिया**—आकर्षित करके; **कराय**—कराता है; **कृष्णे**—भगवान् कृष्ण के; **प्रेम-उदय**—दिव्य प्रेम की जागृति।

अनुवाद

"भगवान् के पवित्र नाम के कीर्तन द्वारा मनुष्य भौतिक कामों के बन्धन का विनाश करता है। इसके बाद वह कृष्ण के प्रति अत्यधिक आकृष्ट होता है और इस तरह सुप्त कृष्ण-प्रेम का उदय होता है।

आकृष्टिः कृत-चेतसां सु-मनसामुच्चाटनं चांहसाम्
आचण्डालममूक-लोक-सुलभो वश्यश्च मुक्ति-श्रियः ।
नो दीक्षां न च सत्क्रियां न च पुरश्चर्यां मनागीक्षते
मन्त्रोऽयं रसना-स्पृगेव फलति श्री-कृष्ण-नामात्मकः ॥ ११० ॥

आकृष्टिः कृत-चेतसां सु-मनसामुच्चाटनं चांहसाम्
आचण्डालममूक-लोक-सुलभो वश्यश्च मुक्ति-श्रियः ।
नो दीक्षां न च सत्क्रियां न च पुरश्चर्यां मनागीक्षते
मन्त्रोऽयं रसना-स्पृगेव फलति श्री-कृष्ण-नामात्मकः ॥ ११० ॥

आकृष्टिः—आकर्षण; **कृत-चेतसाम्**—साधु पुरुषों का; **सु-मनसाम्**—परम उदार मन वालों का; **उच्चाटनम्**—नाश करने वालों का; **च**—तथा; **अंहसाम्**—पाप-फलों का; **आ-चण्डालम्**—चाण्डालों का भी; **अमूक**—गूंगों के अतिरिक्त; **लोक-सु-लभः**—सभी लोगों के लिए सुलभ; **वश्यः**—पूर्ण नियन्ता; **च**—तथा; **मुक्ति-श्रियः**—मुक्ति का ऐश्वर्य; **न उ**—नहीं; **दीक्षाम्**—दीक्षा; **न**—नहीं; **च**—भी; **सत्-क्रियाम्**—पुण्य कर्म; **न**—नहीं; **च**—भी; **पुरश्चर्याम्**—दीक्षा से पहले के विधि-विधान; **मनाक्**—थोड़े; **ईक्षते**—निर्भर है; **मन्त्रः**—मन्त्र; **अयम्**—यह; **रसना**—जिह्वा; **स्पृक्**—स्पर्श करना; **एव**—मात्र; **फलति**—फलता है; **श्री-कृष्ण-नाम-आत्मकः**—भगवान् कृष्ण के पावन नाम से निर्मित।

अनुवाद

"'भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम अनेक सन्त एवं उदार लोगों के लिए अत्यन्त आकर्षक है। यह सारे पापों का संहार करने वाला है और इतना शक्तिशाली है कि गूँगों के अतिरिक्त, जो इसका उच्चारण नहीं कर सकते,

अधम से अधम व्यक्ति, चण्डाल तक के लिए यह सहज उपलब्ध है। कृष्ण का नाम मुक्ति के ऐश्वर्य का नियामक है और यह कृष्ण से अभिन्न है। जीभ से नाम का स्पर्श करते ही तुरन्त उसका प्रभाव पड़ता है। नाम-कीर्तन दीक्षा, पुण्यकर्म या दीक्षा के पूर्व पालन किये जाने वाले पुरश्चर्या नियमों पर आश्रित नहीं है। पवित्र नाम इन सारे कार्यों की प्रतीक्षा नहीं करता। वह स्वयं में पर्याप्त है।

तात्पर्य

यह श्लोक श्रील रूप गोस्वामी कृत *पद्यावली* (२९) में प्राप्य है।

''অতএব যাঁর মুখে এক কৃষ্ণ-নাম ।
সেই ত' বৈষ্ণব, করিহ তাঁহার সম্মান'' ॥১১১॥

**"अतएव ग्राँर मुखे एक कृष्ण-नाम ।
सेइ त' वैष्णव, करिह ताँहार सम्मान" ॥ १११ ॥**

अतएव—इसलिए; **ग्राँर मुखे**—जिसके मुख में; **एक**—एक; **कृष्ण-नाम**—कृष्ण का पावन नाम; **सेइ त' वैष्णव**—वह वैष्णव है; **करिह**—दो; **ताँहार**—उसको; **सम्मान**—सम्मान।

अनुवाद

अन्त में श्री चैतन्य महाप्रभु ने उपदेश दिया, "जो व्यक्ति हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन करता है, वह वैष्णव माना जाता है, अतएव तुम उसका पूरी तरह से सम्मान करना।"

तात्पर्य

श्रील रूप गोस्वामी अपनी पुस्तक *उपदेशामृत* में कहते हैं—*कृष्णेति यस्य गिरि तं मनसाद्रियेत दीक्षास्ति चेत् प्रणतिभिश्च भजन्तम् ईशम्।* जिस व्यक्ति को प्रामाणिक गुरु से दीक्षा प्राप्त हो चुकी है और जो श्रद्धापूर्वक नाम जपते हुए तथा गुरु के आदेशों का पालन करते हुए दिव्य पद पर स्थित है, उसका उन्नत भक्त को सम्मान करना चाहिए। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर की टिप्पणी है कि गृहस्थों के लिए वैष्णवों की सेवा करना सर्वाधिक आवश्यक है। उसे इस बात पर विचार नहीं करना होता कि वह वैष्णव दीक्षा-प्राप्त है अथवा नहीं।

दीक्षित होकर भी मनुष्य मायावाद-दर्शन से कलुषित हो सकता है, किन्तु जो व्यक्ति भगवान् के पवित्र नाम का निरपराध कीर्तन करता है, वह इस तरह कलुषित नहीं हो सकता। समुचित दीक्षा-प्राप्त वैष्णव अपूर्ण हो सकता है, किन्तु जो व्यक्ति भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करता है, वह सब प्रकार से पूर्ण है। भले ही वह नया भक्त क्यों न हो, उसे शुद्ध अनन्य भक्त मानना पड़ेगा। गृहस्थ का धर्म है कि ऐसे अनन्य वैष्णव को आदर प्रदान करे। यही श्री चैतन्य महाप्रभु का उपदेश है।

খণ্ডের মুকুন্দ-দাস, শ্রী-রঘুনন্দন ।
শ্রী-নরহরি,—এই মুখ্য তিন জন ॥ ১১২॥

खण्डेर मुकुन्द-दास, श्री-रघुनन्दन ।
श्री-नरहरि,—एइ मुख्य तिन जन ॥ ११२॥

खण्डेर—खण्ड नामक स्थान; **मुकुन्द-दास**—मुकुन्द दास; **श्री-रघुनन्दन**—श्री रघुनन्दन; **श्री-नरहरि**—श्री नरहरि; **एइ**—ये; **मुख्य**—मुख्य; **तिन**—तीन; **जन**—व्यक्ति।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने खण्ड नामक स्थान के तीन निवासियों—मुकुन्द दास, रघुनन्दन तथा श्री नरहरि की ओर ध्यान दिया।

মুকুন্দ দাসেরে পুছে শচীর নন্দন ।
'তুমি—পিতা, পুত্র তোমার—শ্রী-রঘুনন্দন? ॥ ১১৩॥

मुकुन्द दासेरे पुछे शचीर नन्दन ।
'तुमि—पिता, पुत्र तोमार—श्री-रघुनन्दन? ॥ ११३॥

मुकुन्द दासेरे—मुकुन्द दास को; **पुछे**—पूछा; **शचीर नन्दन**—शची माता के पुत्र ने; **तुमि**—तुम; **पिता**—पिता; **पुत्र**—पुत्र; **तोमार**—तुम्हारा; **श्री-रघुनन्दन**—श्री रघुनन्दन।

अनुवाद

इसके बाद शची-पुत्र श्री चैतन्य महाप्रभु ने मुकुन्द दास से पूछा, "तुम पिता हो और तुम्हारा पुत्र रघुनन्दन है। ऐसा ही है न?

किवा रघुनन्दन—पिता, तुमि—तार तनय? ।
निश्चय करिया कह, याउक संशय' ॥ ११४॥

किबा रघुनन्दन—पिता, तुमि—तार तनय? ।
निश्चय करिया कह, ग्राउक संशय' ॥ ११४॥

किबा—अथवा; **रघुनन्दन**—रघुनन्दन; **पिता**—पिता; **तुमि**—तुम; **तार**—उसके; **तनय**—पुत्र; **निश्चय करिया**—निश्चय करके; **कह**—कहो; **ग्राउक संशय**—मेरा संशय नष्ट हो जाए।

अनुवाद

"अथवा श्रील रघुनन्दन तुम्हारा पिता है और तुम उसके पुत्र हो? कृपा करके मुझे असली बात बताओ, जिससे मेरा सन्देह दूर हो जाए।"

मुकुन्द कहे,—रघुनन्दन मोर 'पिता' हय ।
आमि तार 'पुत्र',—एई आमार निश्चय ॥ ११५॥

मुकुन्द कहे,—रघुनन्दन मोर 'पिता' हय ।
आमि तार 'पुत्र',—एइ आमार निश्चय ॥ ११५॥

मुकुन्द कहे—मुकुन्द दास ने उत्तर दिया; **रघुनन्दन**—मेरा पुत्र, रघुनन्दन; **मोर**—मेरा; **पिता**—पिता; **हय**—है; **आमि**—मैं; **तार**—उसका; **पुत्र**—पुत्र; **एइ**—यह; **आमार**—मेरा; **निश्चय**—निर्णय।

अनुवाद

मुकुन्द ने उत्तर दिया, "रघुनन्दन मेरा पिता है और मैं उसका पुत्र हूँ। यही मेरा निश्चय है।

आमा सवार कृष्ण-भक्ति रघुनन्दन हैते ।
अतएव पिता—रघुनन्दन आमार निश्चिते ॥ ११६॥

आमा सबार कृष्ण-भक्ति रघुनन्दन हैते ।
अतएव पिता—रघुनन्दन आमार निश्चिते ॥ ११६॥

आमा सबार—हम सबकी; **कृष्ण-भक्ति**—कृष्ण-भक्ति; **रघुनन्दन हैते**—रघुनन्दन के कारण; **अतएव**—इसलिए; **पिता**—पिता; **रघुनन्दन**—रघुनन्दन; **आमार निश्चिते**—मेरा निर्णय।

अनुवाद

"रघुनन्दन के कारण हम सबको कृष्ण-भक्ति प्राप्त हुई है, इसलिए मेरे विचार में वही मेरा पिता है।"

শুনি' হর্ষে কহে প্রভু—"কহিলে নিশ্চয় ।
যাঁহা হৈতে কৃষ্ণ-ভক্তি সেই গুরু হয়" ॥ ১১৭ ॥

শুনি' হর্ষে কহে প্রভু—"কহিলে নিশ্চয় ।
যাঁহা হৈতে কৃষ্ণ-ভক্তি সেই গুরু হয়" ॥ ১১৭ ॥

শুনি'—সুনকर; **হর্ষে**—অत्यन्त हर्ष में; **কহে প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **কহিলে নিশ্চয়**—तुमने ठीक कहा है; **যাঁহা হৈতে**—जिससे; **কৃষ্ণ-ভক্তি**—कृष्ण-भक्ति; **সেই**—वह व्यक्ति; **গুরু হয়**—गुरु है।

अनुवाद

मुकुन्द दास से यह उचित निर्णय सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह कहकर इसकी पुष्टि की, "हाँ, यह सही है। जो कृष्ण-भक्ति को जाग्रत करता है, वह निश्चित रूप से गुरु है।"

ভক্তের মহিমা প্রভু কহিতে পায় সুখ ।
ভক্তের মহিমা কহিতে হয় পঞ্চ-মুখ ॥ ১১৮ ॥

ভক্তের মহিমা প্রভু কহিতে পায় সুখ ।
ভক্তের মহিমা কহিতে হয় পঞ্চ-মুখ ॥ ১১৮ ॥

ভক্তের মহিমা—भक्त की महिमा; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **কহিতে**—बोलकर; **পায় সুখ**—प्रसन्न होते हैं; **ভক্তের মহিমা**—भक्त की महिमा; **কহিতে**—बोलने के लिए; **হয়**—हो गये; **পঞ্চ-মুখ**—पाँच मुख वाले।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों की महिमा का बखान करने से अत्यन्त सुखी थे। जब वे उनकी महिमा का वर्णन कर रहे थे, तो मानो उनके पाँच मुख हो गये हों।

ভক্ত-গণে কহে,—শুন মুকুন্দের প্রেম ।
নিগূঢ় নির্মল প্রেম, যেন দগ্ধ হেম ॥ ১১৯ ॥

ভক্ত-গণে কহে,—শুন মুকুন্দের প্রেম ।
নিগূঢ় নির্মল প্রেম, যেন দগ্ধ হেম ॥ ১১৯ ॥

भक्त-गणे कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने भक्तों को बताया; **शुन**—कृपया सुनो; **मुकुन्देर प्रेम**—मुकुन्द का भगवत् प्रेम; **निगूढ़**—बहुत गहरा; **निर्मल**—निर्मल; **प्रेम**—प्रेम भाव; **ग्रेन**—जैसे; **दग्ध**—शुद्ध; **हेम**—सोना।

अनुवाद

तब महाप्रभु ने अपने सारे भक्तों को बतलाया, "कृपा करके मुकुन्द के भगवत्प्रेम के विषय में सुनें। यह अत्यन्त गहरा और शुद्ध प्रेम है और इसकी उपमा केवल शुद्ध किये गये सोने से ही दी जा सकती है।

বাহ্যে রাজ-বৈদ্য ইঁহো করে রাজ-সেবা ।
অন্তরে কৃষ্ণ-প্রেম ইঁহার জানিবেক কেবা ॥ ১২০ ॥

বাহ্যে রাজ-বৈদ্য ইঁহো করে রাজ-সেবা ।
অন্তরে কৃষ্ণ-প্রেম ইঁহার জানিবেক কেবা ॥ ১২০ ॥

বাহ্যে—बाहर से; **রাজ-বৈদ্য**—राज वैद्य; **ইঁহো**—वह; **করে**—करता है; **রাজ-সেবা**—सरकारी सेवा; **অন্তরে**—हृदय में; **কৃষ্ণ-প্রেম**—कृष्ण-प्रेम; **ইঁহার**—मुकुन्द दास के; **জানিবেক**—जान सकता है; **কেবা**—कौन।

अनुवाद

"बाहर से मुकुन्द दास सरकारी नौकरी में लगा राज-वैद्य प्रतीत होता है, किन्तु भीतर से उसमें कृष्ण के प्रति अगाध प्रेम है। भला उसके प्रेम को कौन समझ सकता है?

तात्पर्य

जब तक श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु प्रकट नहीं करते कि भगवान् की सेवा में लगा कौन व्यक्ति महान् भगवद्भक्त है, तब तक इसे कौन समझ सकता है? इसीलिए *चैतन्य-चरितामृत* (मध्य २३.३९) में कहा गया है—*ताँर वाक्य, क्रिया, मुद्रा विज्ञेह ना बुझय*—विद्वान से विद्वान व्यक्ति भी वैष्णव के कार्यकलापों को नहीं समझ सकता। वैष्णव भले ही किसी सरकारी नौकरी में या पेशे में लगा रहे जिससे बाहर से लोग उसकी स्थिति को नहीं समझ पाते, किन्तु भीतर से वह *नित्यसिद्ध वैष्णव* अर्थात् शाश्वत रूप से मुक्त वैष्णव हो सकता है। मुकुन्द दास बाहर से राजवैद्य थे, किन्तु भीतर से वे परम मुक्त

परमहंस भक्त थे। श्री चैतन्य महाप्रभु इसे भलीभाँति जानते थे, किन्तु सामान्य लोग इसे जान नहीं पाये, क्योंकि वैष्णव के कार्यों तथा उसकी योजनाओं को सामान्य व्यक्ति समझ नहीं सकते। किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनका प्रतिनिधि किसी भक्त के विषय में हर बात जानते हैं, भले ही भक्त ऊपर से सामान्य गृहस्थ तथा पेशेवर व्यापारी क्यों न लगता हो।

एक दिन म्लेच्छ-राजार उच्च-टुङ्गिते ।
चिकित्सार बात्कहे ताँहार अग्रेते ॥ १२१॥

एक दिन म्लेच्छ-राजार उच्च-टुङ्गिते ।
चिकित्सार बात्कहे ताँहार अग्रेते ॥ १२१॥

एक दिन—एक दिन; **म्लेच्छ-राजार**—मुस्लिम राजा का; **उच्च-टुङ्गिते**—उच्च स्थान पर; **चिकित्सार बात्**—ईलाज की बात; **कहे**—कह रहा था; **ताँहार अग्रेते**—उसके समक्ष।

अनुवाद

"एक दिन राजवैद्य मुकुन्द दास मुसलिम राजा के साथ ऊँचे आसन पर बैठकर ईलाज के विषय में बात कर रहा था।

हेन-काले एक मयूर-पुच्छेर आड़ानी ।
राज-शिरोपरि धरे एक सेवक आनि' ॥ १२२॥

हेन-काले एक मयूर-पुच्छेर आड़ानी ।
राज-शिरोपरि धरे एक सेवक आनि' ॥ १२२॥

हेन-काले—इस समय; **एक**—एक; **मयूर-पुच्छेर**—मयूर पंखों का; **आड़ानी**—पंखा; **राज-शिर-उपरि**—राजा के सिर के ऊपर; **धरे**—पकड़ रखा; **एक**—एक; **सेवक**—सेवक ने; **आनि'**—लाकर।

अनुवाद

"जिस समय राजा और मुकुन्द दास बातें कर रहे थे, उस समय एक नौकर मोर के पंखों का बना पंखा लाया, जिससे राजा के सिर की धूप से रक्षा की जा सके। फलतः वह राजा के सिर के ऊपर उस पंखे को पकड़े रहा।

শিখি-পিচ্ছ দেখি' মুকুন্দ প্রেমাবিষ্ট হৈলা ।
অতি-উচ্চ টুঙ্গি হৈতে ভূমিতে পড়িলা ॥ ১২৩ ॥

শিখি-পিচ্ছ দেখি' মুকুন্দ প্রেমাবিষ্ট হৈলা ।
অতি-উচ্চ টুঙ্গি হৈতে ভূমিতে পড়িলা ॥ ১২৩ ॥

শিখি-পিচ্ছ—मयूर-पंख; **দেখি'**—देखकर; **মুকুন্দ**—मुकुन्द दास; **প্রেম-আবিষ্ট হৈলা**—प्रेमावेश में आ गया; **অতি-উচ্চ**—बहुत ऊँचे; **টুঙ্গি**—स्थान; **হৈতে**—से; **ভূমিতে**—भूमि पर; **পড়িলা**—गिर गया।

अनुवाद

"मोर के पंख से बने पंखे को देखकर मुकुन्द भगवत्प्रेम में आविष्ट हो गया और वह उस उच्च आसन से भूमि पर गिर पड़ा।

রাজার জ্ঞান,——রাজ-বৈদ্যের হইল মরণ ।
আপনে নামিয়া তবে করাইল চেতন ॥ ১২৪ ॥

রাজার জ্ঞান,——রাজ-বৈদ্যের হইল মরণ ।
আপনে নামিয়া তবে করাইল চেতন ॥ ১২৪ ॥

রাজার জ্ঞান—राजा ने सोचा; **রাজ-বৈদ্যের**—राजवैद्य की; **হইল মরণ**—मृत्यु हो गई; **আপনে**—स्वयं; **নামিয়া**—नीचे उतरकर; **তবে**—उसे; **করাইল চেতন**—होश में लाया।

अनुवाद

"राजा डर गया कि राजवैद्य की मृत्यु हो गई, फलतः वह स्वयं नीचे उतर गया और उसे होश में ले आया।

রাজা বলে——ব্যথা তুমি পাইলে কোন ঠাঞি? ।
মুকুন্দ কহে,——অতি-বড় ব্যথা পাই নাই ॥ ১২৫ ॥

রাজা বলে——ব্যথা তুমি পাইলে কোন ঠাঞি? ।
মুকুন্দ কহে,——অতি-বড় ব্যথা পাই নাই ॥ ১২৫ ॥

রাজা বলে—राजा ने कहा; **ব্যথা**—दर्द; **তুমি পাইলে**—तुमने पाया है; **কোন ঠাঞি**—कहाँ; **মুকুন্দ কহে**--मुकुन्द ने उत्तर दिया; **অতি-বড় ব্যথা**—बहुत अधिक दर्द; **পাই নাই**—मैंने नहीं पाया है।

अनुवाद

"जब राजा ने मुकुन्द से पूछा, 'तुम्हें कहाँ दर्द है?' तो मुकुन्द ने उत्तर दिया, 'मुझे अधिक दर्द नहीं है।'

রাজা কহে,—মুকুন্দ, তুমি পড়িলা কি লাগি'? ।
মুকুন্দ কহে, রাজা, মোর ব্যাধি আছে মৃগী ॥১২৬॥

राजा कहे,—मुकुन्द, तुमि पड़िला कि लागि'? ।
मुकुन्द कहे, राजा, मोर व्याधि आछे मृगी ॥१२६॥

राजा कहे—राजा ने पूछा; **मुकुन्द**—हे मुकुन्द; **तुमि पड़िला**—तुम गिर गये; **कि लागि'**—किस कारण; **मुकुन्द कहे**—मुकुन्द ने उत्तर दिया; **राजा**—मेरे प्रिय राजा; **मोर**—मुझे; **व्याधि**—रोग; **आछे**—है; **मृगी**—मिर्गी।

अनुवाद

"जब राजा ने पूछा, 'हे मुकुन्द, तुम क्यों गिरे?' तो मुकुन्द ने उत्तर दिया, 'हे राजन्, मुझे मिरगी नामक रोग है।'

মহা-বিদগ্ধ রাজা, সেই সব জানে ।
মুকুন্দেরে হৈল তাঁর 'মহা-সিদ্ধ'-জ্ঞানে ॥১২৭॥

महा-विदग्ध राजा, सेइ सब जाने ।
मुकुन्देरे हैल ताँर 'महा-सिद्ध'-ज्ञाने ॥१२७॥

महा-विदग्ध—अत्यन्त बुद्धिमान; **राजा**—राजा; **सेइ**—वह; **सब जाने**—सब कुछ जानता है; **मुकुन्देरे**—मुकुन्द पर; **हैल**—था; **ताँर**—उसका; **महा-सिद्ध-ज्ञाने**—सम्पूर्ण भक्त के रूप में अनुमान।

अनुवाद

"अत्यधिक बुद्धिमान होने के कारण राजा सारी बात जान गया। उसके अनुमान से मुकुन्द अत्यन्त असाधारण, महान, मुक्त पुरुष था।

রঘুনন্দন সেবা করে কৃষ্ণের মন্দিরে ।
দ্বারে পুষ্করিণী, তার ঘাটের উপরে ॥১২৮॥

কদম্বের এক বৃক্ষে ফুটে বার-মাসে ।
নিত্য দুই ফুল হয় কৃষ্ণ-অবতংসে ॥১২৯॥

রঘুনন্দন সেবা করে কৃষ্ণের মন্দিরে ।
দ্বারে পুষ্করিণী, তার ঘাটের উপরে ॥১২৮॥
কদম্বের এক বৃক্ষে ফুটে বার-মাসে ।
নিত্য দুই ফুল হয় কৃষ্ণ-অবতংসে ॥১২৯॥

রঘুনন্দন—রঘুনন্দন; **সেবা করে**—সেবা करता है; **কৃষ্ণের মন্দিরে**—भगवान् कृष्ण के मन्दिर में; **দ্বারে**—द्वार के निकट; **পুষ্করিণী**—एक सरोवर "पुष्करनी"; **তার**—इसके; **ঘাটের উপরে**—तट पर; **কদম্বের**—कदम्ब पुष्पों के; **এক বৃক্ষে**—एक वृक्ष पर; **ফুটে**—खिलते हैं; **বার-মাসে**—बारह मास; **নিত্য**—प्रतिदिन; **দুই ফুল**—दो फूल; **হয়**—होते हैं; **কৃষ্ণ-অবতংসে**—कृष्ण की सजावट के लिए।

अनुवाद

"रघुनन्दन भगवान् कृष्ण के मन्दिर में निरन्तर सेवारत रहता है। मन्दिर के प्रवेश-द्वार के निकट एक सरोवर है, जिसके तट पर एक कदम्ब का वृक्ष है, जो कृष्ण की सेवा के लिए नित्य दो फूल देता है।"

মুকুন্দেরে কহে পুনঃ মধুর বচন ।
'তোমার কার্য—ধর্মে ধন-উপার্জন ॥১৩০॥

মুকুন্দেরে কহে পুনঃ মধুর বচন ।
'তোমার কার্য্য—ধর্মে ধন-উপার্জন ॥১৩০॥

মুকুন্দেরে—मुकुन्द को; **কহে**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **পুনঃ**—दोबारा; **মধুর বচন**—मधुर शब्द; **তোমার কার্য্য**—तुम्हारा कार्य; **ধর্মে ধন-উপার্জন**—भौतिक एवं आध्यात्मिक धन कमाना।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु पुनः मुकुन्द से मीठी वाणी में बोले, "तुम्हारा कार्य भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों सम्पत्ति अर्जित करना है।

রঘুনন্দনের কার্য—কৃষ্ণের সেবন ।
কৃষ্ণ-সেবা বিনা ইঁহার অন্য নাহি মন ॥১৩১॥

रघुनन्दनेर कार्य्य——कृष्णेर सेवन ।
कृष्ण-सेवा विना इँहार अन्य नाहि मन ॥ १३१ ॥

रघुनन्दनेर कार्य्य—रघुनन्दन का कार्य; **कृष्णेर सेवन**—भगवान् कृष्ण की पूजा करना; **कृष्ण-सेवा विना**—कृष्ण पूजा के अतिरिक्त; **इँहार**—उसका; **अन्य**—अन्य; **नाहि**—नहीं है; **मन**—इरादा।

अनुवाद

"रघुनन्दन का यह भी कार्य है कि वह सदैव भगवान् कृष्ण की सेवा में लगा रहे। भगवान् कृष्ण की सेवा के अतिरिक्त उसका अन्य कोई मन्तव्य नहीं है।"

নরহরি রহু আমার ভক্ত-গণ-সনে, ।
এই তিন কার্য সদা করহ তিন জনে' ॥ ১৩২ ॥

नरहरि रहु आमार भक्त-गण-सने, ।
एइ तिन कार्य्य सदा करह तिन जने' ॥ १३२ ॥

नरहरि—नरहरि; **रहु**—उसे रहने दो; **आमार**—मेरे; **भक्त-गण-सने**—अन्य भक्तों के साथ; **एइ तिन कार्य्य**—ये तीन कर्तव्य; **सदा**—सदा; **करह**—करो; **तिन जने**—तुग तीन व्यक्ति।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने नरहरि को आदेश दिया, "मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे भक्तों के साथ यहीं रहो। इस तरह तुम तीनों भगवान् की सेवा के लिए ये तीनों कार्य सदैव करते रहना।"

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने तीन व्यक्तियों के लिए तीन अलग-अलग कार्य निर्धारित किये। मुकुन्द के लिए धन अर्जित करके धर्म का पालन करने, नरहरि के लिए अपने भक्तों की सेवा में लगे रहने और रघुनन्दन को मन्दिर में भगवान् की सेवा करते रहने का कार्य सुपुर्द किया। इस तरह एक व्यक्ति मन्दिर में पूजा करता है, दूसरा अपना नियत कर्म करके ईमानदारी से धन कमाता है और तीसरा भक्तों के साथ कृष्णभावनामृत का प्रचार करता है। ऊपर से ये तीनों प्रकार के सेवा-कार्य पृथक् लगते हैं, किन्तु वास्तव में हैं नहीं। जब कृष्ण या श्री चैतन्य

महाप्रभु केन्द्र-बिन्दु होते हैं, तब हर कोई भगवान् की सेवा के लिए विभिन्न कार्यों में लग सकता है। यही श्री चैतन्य महाप्रभु का निर्णय है।

সার্বভৌম, বিদ্যা-বাচস্পতি,—দুই ভাই ।
দুই-জনে কৃপা করি' কহেন গোসাঞি ॥১৩৩॥

सार्वभौम, विद्या-वाचस्पति,—दुइ भाइ ।
दुइ-जने कृपा करि' कहेन गोसाञि ॥१३३॥

सार्वभौम—सार्वभौम भट्टाचार्य; **विद्या-वाचस्पति**—विद्या वाचस्पति; **दुइ भाइ**—दोनों भाई; **दुइ-जने**—दोनों को; **कृपा करि'**—अहैतुकी कृपा करके; **कहेन**—कहा; **गोसाञि**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपनी अहैतुकी कृपावश सार्वभौम भट्टाचार्य तथा विद्यावाचस्पति—इन दोनों भाइयों को निम्नलिखित आदेश दिये।

'দারু'-জল'-রূপে কৃষ্ণ প্রকট সম্প্রতি ।
'দরশন'-'স্নানে' করে জীবের মুকতি ॥১৩৪॥

'दारु'-जल'-रूपे कृष्ण प्रकट सम्प्रति ।
'दरशन'-'स्नाने' करे जीवेर मुकति ॥१३४॥

दारु—लकड़ी; **जल**—जल; **रूपे**—के रूपों में; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **प्रकट**—प्रकट हुए; **सम्प्रति**—वर्तमान समय में; **दरशन**—देखने से; **स्नाने**—स्नान करने से; **करे**—किया; **जीवेर मुकति**—बद्ध आत्माओं की मुक्ति।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "इस कलियुग में कृष्ण दो रूपों में—काठ तथा जल के रूप में प्रकट हुए हैं। इस तरह बद्धजीवों द्वारा काठ का दर्शन करके और जल में स्नान करके मुक्त होने में वे सहायक हैं।

'দারু-ব্রহ্ম'-রূপে——সাক্ষাচ্ছ্রী-পুরুষোত্তম ।
ভাগীরথী হন সাক্ষাৎ'জল-ব্রহ্ম'-সম ॥১৩৫॥

'दारु-ब्रह्म'-रूपे—साक्षात्श्री-पुरुषोत्तम ।
भागीरथी हन साक्षात् 'जल-ब्रह्म'-सम ॥ १३५ ॥

दारु-ब्रह्म-रूपे—लकड़ी के रूप में ब्रह्म; **साक्षात्**—साक्षात्; **श्री-पुरुषोत्तम**—भगवान् जगन्नाथ; **भागीरथी**—गंगा नदी; **हन**—है; **साक्षात्**—साक्षात्; **जल-ब्रह्म-सम**—जल रूप में ब्रह्म।

अनुवाद

"भगवान् जगन्नाथ काठ के रूप में साक्षात् भगवान् हैं और गंगा नदी जल के रूप में साक्षात् भगवान् है।

तात्पर्य

वेदों का आदेश है—*सर्वं खल्विदं ब्रह्म*—हर वस्तु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अथात् परम ब्रह्म की शक्ति है। *परस्य ब्रह्मण: शक्तिस्तथेदमखिलं जगत्*—हर वस्तु परम ब्रह्म की शक्ति की अभिव्यक्ति है। चूँकि शक्ति तथा शक्तिमान अभिन्न हैं, अतएव हर वस्तु कृष्ण अथवा परम ब्रह्म है। *भगवद्गीता* (९.४) से इसकी पुष्टि होती है :

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थित:॥

"मेरे अव्यक्त रूप से यह सारा ब्रह्माण्ड व्याप्त है। सारे जीव मुझमें स्थित हैं, किन्तु मैं उनमें नहीं हूँ।"

कृष्ण अपने निर्विशेष पहलू द्वारा सारे ब्रह्माण्ड में फैले हुए हैं। चूँकि प्रत्येक वस्तु भगवान् की शक्ति की अभिव्यक्ति है, अतएव भगवान् अपनी किसी भी शक्ति द्वारा अपने आपको प्रकट कर सकते हैं। भगवान् इस युग में जगन्नाथ के रूप में काठ के माध्यम से और गंगा नदी के रूप में जल के माध्यम से प्रकट हुए हैं। इसलिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य तथा विद्यावाचस्पति—दोनों भाइयों को भगवान् जगन्नाथ जी तथा गंगा नदी की पूजा करने का आदेश दिया।

সার্বভৌম, কর 'দারু-ব্রহ্ম'-আরাধন ।
বাচস্পতি, কর জল-ব্রহ্মের সেবন ॥ ১৩৬ ॥

सार्वभौम, कर 'दारु-ब्रह्म'-आराधन ।
वाचस्पति, कर जल-ब्रह्मेर सेवन ॥ १३६ ॥

सार्वभौम—हे सार्वभौम; **कर**—लग जाओ; **दारु-ब्रह्म**—लकड़ी रूप ब्रह्म की; **आराधन**—पूजा; **वाचस्पति**—और वाचस्पति आप; **कर**—करो; **जल-ब्रह्मेर**—जल में प्रकट परम ब्रह्म की; **सेवन**—पूजा।

अनुवाद

"हे सार्वभौम भट्टाचार्य, आप जगन्नाथ पुरुषोत्तम की पूजा में अपने आपको लगाओ और हे वाचस्पति, आप माता गंगा की पूजा करो।"

মুরারি-গুপ্তেরে প্রভু করি' আলিঙ্গন ।
তাঁর ভক্তি-নিষ্ঠা কহেন, শুনে ভক্ত-গণ ॥ ১৩৭ ॥

मुरारि-गुप्तेरे प्रभु करि' आलिङ्गन ।
ताँर भक्ति-निष्ठा कहेन, शुने भक्त-गण ॥ १३७ ॥

मुरारि-गुप्तेरे—मुरारि गुप्त को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करि' आलिङ्गन**—आलिंगन करके; **ताँर**—उसकी; **भक्ति-निष्ठा**—भक्ति में श्रद्धा; **कहेन**—कहा; **शुने भक्त-गण**—सभी भक्तों ने सुना।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने मुरारि गुप्त का आलिंगन किया और उससे भक्ति-निष्ठा के विषय में बातें कीं। इसे सारे भक्तों ने सुना।

পূর্বে আমি ইঁহারে লোভাইল বার বার ।
পরম মধুর, গুপ্ত, ব্রজেন্দ্র-কুমার ॥ ১৩৮ ॥

पूर्वे आमि इँहारे लोभाइल बार बार ।
परम मधुर, गुप्त, व्रजेन्द्र-कुमार ॥ १३८ ॥

पूर्वे—पहले; **आमि**—मैं; **इँहारे**—उसको; **लोभाइल**—उकसाया; **बार बार**—बारम्बार; **परम मधुर**—बहुत मधुर; **गुप्त**—हे गुप्त; **व्रजेन्द्र-कुमार**—भगवान् कृष्ण, नन्द महाराज के पुत्र।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "इसके पूर्व मैं मुरारि गुप्त को कृष्ण की

ओर आकृष्ट होने के लिए बारम्बार प्रेरित करता रहा। मैंने उससे कहा, 'हे गुप्त, व्रजेन्द्र कुमार श्रीकृष्ण अत्यन्त मधुर हैं।

स्वयं भगवान्कृष्ण——सर्वांशी, सर्वाश्रय ।
विशुद्ध-निर्मल-प्रेम, सर्व-रसमय ॥ १३९॥

स्वयं भगवान्कृष्ण——सर्वांशी, सर्वाश्रय ।
विशुद्ध-निर्मल-प्रेम, सर्व-रसमय ॥ १३९॥

स्वयम् भगवान् कृष्ण—स्वयं भगवान् कृष्ण; **सर्व-अंशी**—अन्य सबके स्रोत; **सर्व-आश्रय**—सभी शक्तियों के भण्डार; **विशुद्ध**—विशुद्ध; **निर्मल**—निर्मल; **प्रेम**—प्रेम; **सर्व-रस-मय**—सभी रसों से पूर्ण।

अनुवाद

"'कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं, समस्त अवतारों के उद्गम तथा सारी वस्तुओं के स्त्रोत हैं। वे विशुद्ध दिव्य प्रेम रूप हैं और समस्त आनन्द के आगार हैं।

सकल-सदगुण-वृन्द-रत्न-रत्नाकर ।
विदग्ध, चतुर, धीर, रसिक-शेखर ॥ १४०॥

सकल-सद्गुण-वृन्द-रत्न-रत्नाकर ।
विदग्ध, चतुर, धीर, रसिक-शेखर ॥ १४०॥

सकल—सब; **सत्-गुण**—दिव्य गुण; **वृन्द**—समूह; **रत्न**—रत्न; **रत्न-आकर**—रत्नों की खान; **विदग्ध**—बुद्धिमान; **चतुर**—दक्ष; **धीर**—शान्त; **रसिक-शेखर**—सभी दिव्य रसों के स्वामी।

अनुवाद

"'कृष्ण समस्त दिव्य गुणों के आगार हैं। वे रत्नों की खान के तुल्य हैं। वे हर बात में दक्ष हैं, अत्यन्त बुद्धिमान एवं धीर हैं और वे समस्त दिव्य रसों की पराकाष्ठा हैं।

मधुर-चरित्र कृष्णेर मधुर-विलास ।
चातुर्य-वैदग्ध्य करे याँर लीला-रस ॥ १४१॥

मधुर-चरित्र कृष्णेर मधुर-विलास ।
चातुर्य्र-वैदग्ध्य करे याँर लीला-रस ॥ १४१ ॥

मधुर-चरित्र—मधुर चरित्र; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **मधुर-विलास**—मधुर लीलाएँ; **चातुर्य्र**—दक्षता; **वैदग्ध्य**—बुद्धिमत्ता; **करे**—प्रकट करते हैं; **याँर**—जिनकी; **लीला**—लीलाओं का; **रस**—रस।

अनुवाद

"'उनका चरित्र अत्यन्त मधुर है और उनकी लीलाएँ मधुर हैं। वे बुद्धि में दक्ष हैं। इस तरह वे सारी लीलाओं एवं रसों का आनन्द लूटते हैं।'

सेइ कृष्ण भज तुमि, हओ कृष्णाश्रय ।
कृष्ण विना अन्य-उपासना मने नाहि लय ॥ १४२ ॥

सेइ कृष्ण—उन कृष्ण भगवान् की; **भज तुमि**—तुम सेवा में लगो; **हओ कृष्ण-आश्रय**—कृष्ण का आश्रय लो; **कृष्ण विना**—कृष्ण के बिना; **अन्य-उपासना**—अन्य कोई पूजा; **मने नाहि लय**—मन को नहीं भाती।

अनुवाद

"तब मैंने मुरारि गुप्त से अनुरोध किया कि, 'तुम कृष्ण की पूजा करो और उनकी शरण में जाओ। उनकी सेवा के अतिरिक्त मन को अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता।'

एइ-मत बार बार शुनिया वचन ।
आमार गौरवे किछु फिरि' गेल मन ॥ १४३ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **बार बार**—बारम्बार; **शुनिया वचन**—इन शब्दों को सुनकर; **आमार गौरवे**—मेरे प्रभाव के कारण; **किछु**—कुछ; **फिरि' गेल**—बदल गया; **मन**—उसका मन।

अनुवाद

"इस तरह वह बारम्बार मुझे सुनता रहा। मेरे प्रभाव से उसका मन कुछ-कुछ बदला।

আমারে কহেন,—আমি তোমার কিঙ্কর ।
তোমার আজ্ঞাকারী আমি নাহি স্বতন্তর ॥ ১৪৪॥

আমারে কহেন,—আমি তোমার কিঙ্কর ।
তোমার আজ্ঞাকারী আমি নাহি স্বতন্তর ॥ ১৪৪॥

আমারে কহেন—उसने मुझे कहा; **আমি**—मैं; **তোমার কিঙ্কর**—आपका दास; **তোমার আজ্ঞা-কারী**—आपका आज्ञाकारी; **আমি**—मैं; **নাহি**—नहीं हूँ; **স্বতন্তর**—स्वतंत्र।

अनुवाद

"तब मुरारि गुप्त ने उत्तर दिया, 'मैं आपका सेवक और आज्ञावाहक हूँ। मेरा स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है।'

এত বলি' ঘরে গেল, চিন্তি' রাত্রি-কালে ।
রঘুনাথ-ত্যাগ-চিন্তায় হইল বিকলে ॥ ১৪৫॥

এত বলি' ঘরে গেল, চিন্তি' রাত্রি-কালে ।
রঘুনাথ-ত্যাগ-চিন্তায় হইল বিকলে ॥ ১৪৫॥

এত বলি'—यह कहकर; **ঘরে গেল**—अपने घर गया; **চিন্তি'**—यह सोचते हुए; **রাত্রি-কালে**—रात को; **রঘুনাথ**—भगवान् रामचन्द्र; **ত্যাগ**—छोड़कर; **চিন্তায়**—विचार से; **হইল বিকলে**—विह्वल हो गया।

अनुवाद

"इसके बाद मुरारि गुप्त घर गया और रातभर सोचता रहा कि वह किस तरह रघुनाथ अर्थात् भगवान् रामचन्द्रजी का साथ छोड़ सकेगा। इस तरह वह विह्वल हो गया।

কেমনে ছাড়িব রঘুনাথের চরণ ।
আজি রাত্র্যে প্রভু মোর করাহ মরণ ॥ ১৪৬॥

केमने छाड़िब रघुनाथेर चरण ।
आजि राज्रे प्रभु मोर कराह मरण ॥ १४६ ॥

केमने छाड़िब—मैं कैसे छोड़ूँगा; **रघुनाथेर चरण**—भगवान् रघुनाथ के चरणकमल; **आजि राज्रे**—आज रात को; **प्रभु**—हे भगवान् रघुनाथ; **मोर**—मुझे; **कराह मरण**—मृत्यु दे दो।

अनुवाद

"इसके बाद मुरारि गुप्त ने भगवान् रामचन्द्र के चरणकमलों की प्रार्थना की। उसने प्रार्थना की कि उसके लिए रघुनाथ के चरणकमल को त्याग पाना सम्भव नहीं होगा, अतएव रात में उसकी मृत्यु हो जाए।

এই মত সর্ব-রাত্রি করেন ক্রন্দন ।
মনে সোয়াস্তি নাহি, রাত্রি কৈল জাগরণ ॥ ১৪৭ ॥

एइ मत सर्व-रात्रि करेन क्रन्दन ।
मने सोयास्ति नाहि, रात्रि कैल जागरण ॥ १४७ ॥

एइ मत—इस प्रकार; **सर्व-रात्रि**—सारी रात; **करेन क्रन्दन**—रोता रहा; **मने**—मन में; **सोयास्ति नाहि**—शान्ति नहीं; **रात्रि**—सारी रातभर; **कैल**—किया; **जागरण**—जागता रहा।

अनुवाद

"इस तरह मुरारि गुप्त रातभर रोता रहा। उसके मन में शांति नहीं थी, अतः वह सो नहीं सका और रातभर जागता रहा।

প্রাতঃ-কালে আসি' মোর ধরিল চরণ ।
কান্দিতে কান্দিতে কিছু করে নিবেদন ॥ ১৪৮ ॥

प्रातः-काले आसि' मोर धरिल चरण ।
कान्दिते कान्दिते किछु करे निवेदन ॥ १४८ ॥

प्रातः-काले—प्रातःकाल; **आसि'**—आकर; **मोर**—मेरे; **धरिल**—पकड़ लिए; **चरण**—चरण; **कान्दिते कान्दिते**—निरन्तर रोते हुए; **किछु करे निवेदन**—कुछ निवेदन किया।

अनुवाद

"प्रातःकाल मुरारि गुप्त मुझसे मिलने आया। मेरे चरण पकड़कर रोते हुए उसने निवेदन किया।

রঘুনাথের পায় মুঞি বেচিয়াছোঁ মাথা ।
কাঢ়িতে না পারি মাথা, মনে পাই ব্যথা ॥ ১৪৯ ॥

রঘুনাথের পায় মুঞি বেচিয়াছোঁ মাথা ।
কাঢ়িতে না পারি মাথা, মনে পাই ব্যথা ॥ ১৪৯ ॥

রঘুনাথের পায়—भगवान् रघुनाथ के चरणकमलों पर; **मुञि**—मैंने; **वेचियाछों**—बेच दिया है; **माथा**—सिर; **काढ़िते**—काटने के लिए; **ना पारि**—मैं सक्षम नहीं हूँ; **माथा**—मेरा सिर; **मने**—मेरे मन में; **पाइ व्यथा**—बहुत पीड़ा होती है।

अनुवाद

"मुरारि गुप्त ने कहा, 'मैंने अपना सिर रघुनाथ के चरणों में बेच दिया है। अब उसे मैं वापस नहीं ले सकता, क्योंकि इससे मुझे अत्यधिक पीड़ा होगी।

শ্রী-রঘুনাথ-চরণ ছাড়ান না যায় ।
তব আজ্ঞা-ভঙ্গ হয়, কি করোঁ উপায় ॥ ১৫০ ॥

শ্রী-রঘুনাথ-চরণ ছাড়ান না যায় ।
তব আজ্ঞা-ভঙ্গ হয়, কি করোঁ উপায় ॥ ১৫০ ॥

श्री-रघुनाथ-चरण—भगवान् रामचन्द्र के चरणकमल; **छाड़ान ना याय**—छोड़े नहीं जा सकते; **तव**—आपकी; **आज्ञा**—आज्ञा; **भङ्ग**—भंग; **हय**—होती है; **कि**—क्या; **करों**—करूँ; **उपाय**—उपाय।

अनुवाद

"'मुझसे रघुनाथ के चरणकमलों की सेवा छोड़ी नहीं जाती। साथ ही यदि मैं ऐसा नहीं करता, तो आपकी आज्ञा भंग होती है। मैं क्या करूँ?'

তাতে মোরে এই কৃপা কর, দয়াময় ।
তোমার আগে মৃত্যু হউক, যাউক সংশয় ॥ ১৫১ ॥

তাতে মোরে এই কৃপা কর, দয়াময় ।
তোমার আগে মৃত্যু হউক, যাউক সংশয় ॥ ১৫১ ॥

তাতে—अतः; **मोरे**—मुझ पर; **एइ**—यह; **कृपा**—कृपा; **कर**—करो; **दया-मय**—हे

दयामय; **तोमार आगे**—आपके समक्ष; **मृत्यु हउक**—मुझे मरने दो; **याउक संशय**—और सभी संशय दूर हो जायेंगे।

अनुवाद

"इस तरह मुरारि गुप्त ने मुझसे निवेदन किया, 'आप दयालु हैं, इसलिए आप मुझ पर यह कृपा करें : मुझे अपने सामने मर जाने दें, जिससे मेरे सारे संशय समाप्त हो जाएँ।'

এত শুনি' আমি বড় মনে সুখ পাইলুঁ ।
ইঁহারে উঠাঞা তবে আলিঙ্গন কৈলুঁ ॥ ১৫২॥

एत शुनि' आमि बड़ मने सुख पाइलुँ ।
इँहारे उठाञा तबे आलिङ्गन कैलुँ ॥ १५२॥

एत शुनि'—यह सुनकर; **आमि**—मैंने; **बड़**—अत्यन्त; **मने**—मन में; **सुख**—सुख; **पाइलुँ**—पाया; **इँहारे**—उसको; **उठाञा**—उठाकर; **तबे**—तब; **आलिङ्गन कैलुँ**—मैंने आलिंगन किया।

अनुवाद

"यह सुनकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ। तब मैंने मुरारि गुप्त को उठाकर उसका आलिंगन किया।

साधु साधु, गुप्त, तोमार सुदृढ़ भजन ।
आमार वचनेह तोमार ना टलिल मन ॥ १५३॥

साधु साधु, गुप्त, तोमार सुदृढ़ भजन ।
आमार वचनेह तोमार ना टलिल मन ॥ १५३॥

साधु साधु—तुम्हारी जय हो; **गुप्त**—मुरारि गुप्त; **तोमार**—तुम्हारा; **सु-दृढ़**—सुदृढ़; **भजन**—भजन; **आमार**—मेरे; **वचनेह**—अनुरोध पर भी; **तोमार**—तुम्हारा; **ना टलिल**—नहीं विचलित हुआ; **मन**—मन।

अनुवाद

"मैंने उससे कहा, 'हे मुरारि गुप्त, तुम्हारी जय हो! तुम्हारी पूजा-विधि अत्यधिक सुदृढ़ है—यहाँ तक कि मेरे अनुरोध पर भी तुम्हारा मन नहीं बदला।

এই-মত সেবকের প্রীতি চাহি প্রভু-পায় ।
প্রভু ছাড়াইলেহ, পদ ছাড়ান না যায় ॥ ১৫৪॥

এइ-মত সেবকের প্রীতি চাহি প্রভু-পায় ।
প্রভু ছাড়াइলেহ, পদ ছাড়ান না য়ায় ॥ ১৫৪॥

এइ-মত—इस प्रकार; **सेवकेर**—सेवक का; **प्रीति**—प्रेम; **चाहि**—होना चाहिए; **प्रभु-पाय**—भगवान् के चरणकमलों में; **प्रभु छाड़ाइलेह**—भले ही भगवान् छोड़ दें; **पद**—भगवान् के चरणकमल; **छाड़ान ना য়ाय**—छोड़े नहीं जा सकते।

अनुवाद

"'भगवान् के चरणकमलों पर सेवक का ऐसा ही प्रेम होना चाहिए। यहाँ तक कि भगवान् भी छुड़ाना चाहें, तो भी भक्त उनके चरणकमलों का आश्रय नहीं छोड़ सकता।

तात्पर्य

प्रभु शब्द इसका सूचक है कि भगवान् की सेवा भक्तों द्वारा निरन्तर की जानी चाहिए। भगवान् श्रीकृष्ण मूल *प्रभु* हैं। फिर भी अनेक भक्त भगवान् रामचन्द्र से अनुरक्त रहते हैं और मुरारि गुप्त ऐसी अनन्य भक्ति का ज्वलन्त उदाहरण है। वह भगवान् रामचन्द्र की पूजा श्री चैतन्य महाप्रभु के कहने पर भी छोड़ने को तैयार नहीं था। भक्ति की एकनिष्ठा ऐसी है, जैसाकि *चैतन्य-चरितामृत* (अन्त्यलीला ४.४६-४७) में कहा गया है :

सेइ भक्त धन्य, ये ना छाड़े प्रभुर चरण।
सेइ प्रभु धन्य, ये ना छाड़े निजजन॥
दुर्दैवे सेवक यदि याय अन्य स्थाने।
सेइ ठाकुर धन्य तारे चूले धरि' आने॥

भगवान् से अटूट सम्बन्ध होने से भक्त किसी भी स्थिति में भगवान् की सेवा नहीं त्यागता। जहाँ तक भगवान् का सम्बन्ध है, यदि भक्त छोड़ना भी चाहे तो भगवान् उसके बाल पकड़कर पुन: खींच लाते हैं।

এই-মত তোমার নিষ্ঠা জানিবার তরে ।
তোমারে আগ্রহ আমি কৈলুঁ বারে বারে ॥ ১৫৫॥

एइ-मत तोमार निष्ठा जानिबार तरे ।
तोमारे आग्रह आमि कैलुँ बारे बारे ॥ १५५ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **तोमार**—तुम्हारी; **निष्ठा**—दृढ़ श्रद्धा; **जानिबार तरे**—समझने के लिए; **तोमारे**—तुम्हें; **आग्रह**—आग्रह; **आमि कैलुँ**—मैंने किया; **बारे बारे**—बारम्बार।

अनुवाद

"'मैंने भगवान् के प्रति तुम्हारी दृढ़ श्रद्धा की परीक्षा करने के लिए ही तुमसे भगवान् रामचन्द्र की भक्ति छोड़कर कृष्ण की पूजा करने के लिए बारम्बार अनुरोध किया था।'

সাক্ষাৎ হনুমাতুমি শ্রী-রাম-কিঙ্কর ।
তুমি কেনে ছাড়িবে তাঁর চরণ-কমল ॥১৫৬॥

साक्षात् हनुमान्तुमि श्री-राम-किङ्कर ।
तुमि केने छाड़िबे ताँर चरण-कमल ॥ १५६ ॥

साक्षात्—साक्षात्; **हनुमान्**—हनुमान; **तुमि**—तुम; **श्री-राम-किङ्कर**—श्री राम का सेवक; **तुमि**—तुम; **केने**—क्यों; **छाड़िबे**—छोड़ो; **ताँर**—उनके; **चरण-कमल**—चरणकमलों को।

अनुवाद

"इस तरह मैंने मुरारि गुप्त को बधाई देते हुए कहा, 'निस्सन्देह तुम हनुमान के अवतार हो, फलतः तुम भगवान् रामचन्द्र के सनातन दास हो। तो फिर तुम भगवान् रामचन्द्र तथा उनके चरणकमलों की पूजा क्यों त्यागो?'"

সেই মুরারি-গুপ্ত এই——মোর প্রাণ সম ।
ইঁহার দৈন্য শুনি' মোর ফাটয়ে জীবন ॥১৫৭॥

सेइ मुरारि-गुप्त एइ——मोर प्राण सम ।
इँहार दैन्य शुनि' मोर फाटये जीवन ॥ १५७ ॥

सेइ मुरारि-गुप्त—वह मुरारि गुप्त; **एइ**—यह; **मोर प्राण सम**—मेरे जीवन के समान; **इँहार**—उसकी; **दैन्य**—विनम्रता; **शुनि'**—सुनकर; **मोर**—मेरा; **फाटये**—विचलित होता है; **जीवन**—जीवन।

अनुवाद

श्री चैतन्य ने आगे कहा, "मैं इस मुरारि गुप्त को अपने प्राण के समान मानता हूँ। जब मैं उसकी दीनता सुनता हूँ, तो मेरा जीवन विचलित हो जाता है।"

তবে বাসুদেবে প্রভু করি' আলিঙ্গন ।
তাঁর গুণ কহে হঞা সহস্র-বদন ॥ ১৫৮॥

তবে বাসুদেবে প্রভু করি' আলিঙ্গন ।
তাঁর গুণ কহে হঞা সহস্র-বদন ॥ ১৫৮॥

তবে—तब; **বাসুদেবে**—वासुदेव को; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **করি' আলিঙ্গন**—आलिंगन करके; **তাঁর গুণ**—उसके सद्गुण; **কহে**—वर्णन करने लग गये; **হঞা**—होकर; **সহস্র-বদন**—हजारों मुखों से।

अनुवाद

इसके बाद महाप्रभु ने वासुदेव दत्त का आलिंगन किया और उसकी महिमा का वर्णन इस तरह करने लगे मानो उनके हजार मुख हों।

নিজ-গুণ শুনি' দত্ত মনে লজ্জা পাঞা ।
নিবেদন করে প্রভুর চরণে ধরিয়া ॥ ১৫৯॥

নিজ-গুণ শুনি' দত্ত মনে লজ্জা পাঞা ।
নিবেদন করে প্রভুর চরণে ধরিয়া ॥ ১৫৯॥

নিজ-গুণ—अपने गुण; **শুনি'**—सुनकर; **দত্ত**—वासुदेव दत्त ने; **মনে**—मन में; **লজ্জা পাঞা**—लज्जित अनुभव करते हुए; **নিবেদন করে**—निवेदन किया; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **চরণে ধরিয়া**—चरणकमल पकड़कर।

अनुवाद

जब चैतन्य महाप्रभु ने उसकी महिमा का वर्णन किया, तो वासुदेव दत्त तुरन्त मन में व्याकुल और लज्जित हो उठे। तब उन्होंने महाप्रभु के चरणकमल छूते हुए यह निवेदन किया।

জগত্তারিতে প্রভু তোমার অবতার ।
মোর নিবেদন এক করহ অঙ্গীকার ॥১৬০॥

জগত্তারিতে প্রভু তোমার অবতার ।
মোর নিবেদন এক করহ অঙ্গীকার ॥ ১৬০ ॥

জগত্ তারিতে—सारे संसार को तारने के लिए; **প্রভু**—मेरे प्रभु; **তোমার**—आपका; **অবতার**—अवतार; **মোর**--मेरा; **নিবেদন**—निवेदन; **এক**—एक; **করহ অঙ্গীকার**—कृपया स्वीकार करो।

अनुवाद

वासुदेव दत्त ने महाप्रभु से कहा, "हे प्रभु, आप समस्त बद्धजीवों का उद्धार करने के लिए अवतरित होते हैं। मेरी आपसे एक विनती है, जिसे मैं चाहता हूँ कि आप स्वीकार करें।

করিতে সমর্থ তুমি হও, দয়াময় ।
তুমি মন কর, তবে অনায়াসে হয় ॥১৬১॥

করিতে সমর্থ তুমি হঅো, দয়াময় ।
তুমি মন কর, তবে অনায়াসে হয় ॥ ১৬১ ॥

করিতে—करने के लिए; **সমর্থ**—समर्थ; **তুমি**—आप; **হঅো**—हैं; **দয়া-ময়**—हे दयामय; **তুমি মন কর**—यदि आप चाहें; **তবে**—तब; **অনায়াসে**—बिना कठिनाई के; **হয়**—यह सम्भव हो जाता है।

अनुवाद

"हे प्रभु, आप जो चाहें सो करने में समर्थ हैं और निस्सदेह आप दयालु हैं। यदि आप चाहें तो आसानी से सब कुछ कर सकते हैं।

জীবের দুঃখ দেখি' মোর হৃদয় বিদরে ।
সর্ব-জীবের পাপ প্রভু দেহ' মোর শিরে ॥১৬২॥

জীবের দুঃখ দেখি' মোর হৃদয় বিদরে ।
সর্ব-জীবের পাপ প্রভু দেহ' মোর শিরে ॥ ১৬২ ॥

জীবের—सभी बद्धात्माओं का; **দুঃখ দেখি'**—दुःख देखकर; **মোর**—मेरा; **হৃদয়**—हृदय;

विदरे—फट जाता है; **सर्व-जीवेर**—सभी जीवों के; **पाप**—पाप फल; **प्रभु**—मेरे प्रिय प्रभु; **देह'**—डाल दो; **मोर शिरे**—मेरे सिर पर।

अनुवाद

"हे प्रभु, समस्त बद्धजीवों के कष्टों को देखकर मेरा दिल फटता है; अतएव मेरी प्रार्थना है कि आप उनके पापकर्मों को मेरे ऊपर डाल दें।

जीवेर पाप लञा मुञि करौं नरक भोग ।
सकल जीवेर, प्रभु, घुचाह भव-रोग ॥ १६७ ॥

जीवेर पाप लञा मुञि करों नरक भोग ।
सकल जीवेर, प्रभु, घुचाह भव-रोग ॥ १६३ ॥

जीवेर—सभी बद्धात्माओं का; **पाप लञा**—पाप फल लेकर; **मुञि**—मैं; **करों**—करूँगा; **नरक**—नारकीय जीवन का; **भोग**—भोग; **सकल जीवेर**—सभी जीवों का; **प्रभु**—मेरे प्रिय प्रभु; **घुचाह**—कृपया समाप्त कर दें; **भव-रोग**—भौतिक रोग।

अनुवाद

"हे प्रभु, सारे जीवों के पापों को अपने ऊपर लादकर मुझे निरन्तर नरक भोगने दें। किन्तु आप उनके रुग्ण भौतिक जीवन को समाप्त कर दें।"

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने इस श्लोक पर अपनी टीका इस प्रकार से दी है। "पाश्चात्य देशों में ईसाई लोग विश्वास करते हैं कि उनके गुरु ईसा मसीह अपने शिष्यों के सारे पापों को नष्ट करने के लिए प्रकट हुए। इस कार्य के लिए ईसा मसीह प्रकट हुए और फिर अन्तर्धान हो गये। किन्तु यहाँ हम देखते हैं कि श्री वासुदेव दत्त ठाकुर तथा श्रील हरिदास ठाकुर इस दृष्टिकोण से ईसा मसीह की तुलना में लाखों गुना अधिक उन्नत हैं। ईसा मसीह ने केवल अपने अनुयायियों को उनके पापकर्मों के फलों से मुक्त किया, किन्तु वासुदेव दत्त तो यहाँ सारे ब्रह्माण्ड के हर जीव के पापों को स्वीकार करने के लिए तैयार है। इसलिए वासुदेव दत्त की तुलनात्मक स्थिति ईसा मसीह की स्थिति से लाखों गुना बेहतर है। वैष्णव इतना उदार होता है कि बद्धजीवों को भौतिक अस्तित्व से उबारने के लिए वह सारे संकट सहने को तैयार रहता है। श्रील

वासुदेव दत्त स्वयं विश्व-प्रेम स्वरूप है, क्योंकि वह अपना सर्वस्व त्याग करने और भगवान् की सेवा में पूर्णत: लगने के लिए तैयार था।

श्रील वासुदेव दत्त भलीभाँति जानते थे कि श्री चैतन्य महाप्रभु आदि भगवान् हैं। वे माया-मोह से परे साक्षात् परम ब्रह्म थे। ईसा मसीह ने अपनी दया से अपने अनुयायियों के पापफलों को निस्सन्देह समाप्त कर दिया, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होंने उन्हें भौतिक अस्तित्व की पीड़ा से पूरी तरह से मुक्त करा दिया। किसी व्यक्ति को उसके पापों से एक बार छुड़ाया जा सकता है, किन्तु ईसाइयों में प्रथा है कि वे पापों को कबूल करते हैं और पुन: पाप करते हैं। इस तरह पापों से मुक्त होकर पुन: पाप करने से मनुष्य भौतिक अस्तित्व की पीड़ा से मुक्त नहीं हो सकता। रोगी व्यक्ति राहत के लिए वैद्य के पास जाता है, किन्तु अस्पताल से लौटने पर गंदी आदतों के कारण उसे फिर रोग पकड़ सकता है। इस तरह यह भौतिक अस्तित्व चलता रहता है। श्रील वासुदेव दत्त बद्धजीवों को भौतिक अस्तित्व से पूरी तरह छुटकारा दिलाना चाहते थे, जिससे वे पुन: पापकर्म करने का अवसर न पा सकें। श्रील वासुदेव दत्त तथा ईसा मसीह में यही अन्तर है। पापों के लिए क्षमादान प्राप्त करना और फिर पुन: पाप करना बहुत बड़ा अपराध है। ऐसा अपराध स्वयं पापकर्म से भी बढ़कर है। वासुदेव दत्त इतने उदार थे कि उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु से प्रार्थना की कि वे बद्धजीवों का सारा अपराध उनके ऊपर लाद दें, जिससे बद्धजीव शुद्ध हो सकें और भगवद्धाम लौट सकें। यह प्रार्थना कपट भाव से रहित थी।

वासुदेव दत्त का उदाहरण न केवल इस जगत् में, अपितु सारे ब्रह्माण्ड में अद्वितीय है। यह सकाम कर्मियों या दुनियावी ज्ञानियों के तर्कों के परे है। बहिरंगा शक्ति द्वारा मोहित होने तथा अल्पज्ञान के कारण लोग एक-दूसरे से ईर्ष्या करते हैं। इसी कारण वे सकाम कर्म में फँसते हैं और मानसिक तर्क के द्वारा इस सकाम कर्म से बचना चाहते हैं। फलत: न तो कर्मी, न ही ज्ञानी शुद्ध हो पाते हैं। श्रील भक्तिसिद्धान्त ठाकुर के शब्दों में ऐसे लोग *कुकर्मी* तथा *कुज्ञानी* हैं। इसलिए मायावादियों तथा कर्मियों को दयावान वासुदेव दत्त की ओर ध्यान देना चाहिए, जो अन्यों के लिए नरक दशा के कष्ट भोगने के लिए

तैयार थे। न ही वासुदेव दत्त को संसारी परोपकारी या लोकहितैषी समझना चाहिए। वे न तो ब्रह्मज्योति में विलीन होना चाहते थे, न ही उन्हें भौतिक सम्मान या यश में रुचि थी। वे उपकारियों, दार्शनिकों तथा सकाम कर्मियों से बहुत ऊपर थे। वे सर्वश्रेष्ठ पुरुष थे, जो बद्धजीवों पर दया दिखाना चाहते थे। यह उनके दिव्य गुणों की अतिशयोक्ति नहीं है। यह एकदम सही है। वस्तुतः वासुदेव दत्त की कोई बराबरी नहीं हो सकती, वे पूर्णरूपेण वैष्णव—*परदुःखदुःखी* अर्थात् दूसरों के दुःख सहते देखकर दुःखी होने वाले थे। ऐसे शुद्ध भक्त के प्राकट्य मात्र से समग्र संसार शुद्ध हो जाता है। निस्सन्देह, उनकी दिव्य उपस्थिति से सारा जगत् महिमामण्डित होता है और सारे बद्धजीव भी महिमामंडित होते हैं। जैसाकि नरोत्तम दास ठाकुर ने पुष्टि की है, वासुदेव दत्त श्री चैतन्य महाप्रभु के आदर्श भक्त हैं :

गौराङ्गेर सङ्गि-गणे, नित्यसिद्ध करि' माने
से याय व्रजेन्द्रसुत-पाश।

जो भी श्री चैतन्य महाप्रभु के जीवनकार्य को पूरा करता है, उसे नित्यमुक्त समझा जाना चाहिए। वह दिव्य व्यक्ति होता है और इस भौतिक जगत् का नहीं होता। पूरी जनता के उद्धार में लगा ऐसा भक्त स्वयं श्री चैतन्य महाप्रभु के समान दयालु होता है :

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः॥

ऐसा व्यक्ति वास्तव में श्री चैतन्य महाप्रभु का प्रतिनिधित्व करता है, क्योंकि उसका हृदय सदैव बद्धजीवों के प्रति करुणा से ओतप्रोत रहता है।

এত শুনি' মহাপ্রভুর চিত্ত দ্রবিলা ।
অশ্রু-কম্প-স্বরভঙ্গে কহিতে লাগিলা ॥১৬৪॥
एत शुनि' महाप्रभुर चित्त द्रविला ।
अश्रु-कम्प-स्वरभङ्गे कहिते लागिला ॥ १६४॥

एत शुनि'—यह सुनकर; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **चित्त**—हृदय; **द्रविला**—पिघल गया; **अश्रु**—अश्रु; **कम्प**—कँपन; **स्वर-भङ्गे**—स्वर कँपन; **कहिते**—बोलने; **लागिला**—लगे।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने वासुदेव का यह कथन सुना, तो उनका हृदय अत्यन्त द्रवित हो उठा। उनकी आँखो से आँसू बहने लगे और वे काँपने लगे। वे कम्पित स्वर में बोले।

"तोमार विचित्र नहे, तुमि—साक्षाज्प्रह्लाद ।
तोमार उपरे कृष्णेर सम्पूर्ण प्रसाद ॥ १६५॥

"तोमार विचित्र नहे, तुमि—साक्षात्प्रह्लाद ।
तोमार उपरे कृष्णेर सम्पूर्ण प्रसाद ॥ १६५॥

तोमार—तुम में; **विचित्र नहे**—यह आश्चर्यजनक नहीं; **तुमि**—तुम; **साक्षात् प्रह्लाद**—प्रह्लाद महाराज का अवतार; **तोमार उपरे**—तुम्हारे ऊपर; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **सम्पूर्ण**—सम्पूर्ण; **प्रसाद**—कृपा।

अनुवाद

वासुदेव दत्त को महान् भक्त स्वीकार करते हुए महाप्रभु ने कहा, "ऐसा कथन तनिक भी आश्चर्यजनक नहीं है, क्योंकि तुम प्रह्लाद महाराज के अवतार हो। ऐसा लगता है कि भगवान् कृष्ण ने तुम्हें सम्पूर्ण कृपा प्रदान कर दी है। इसमें सन्देह नहीं है।

कृष्ण सेई सत्य करे, येई मागे भृत्य ।
भृत्य-वाञ्छा-पूर्ति विनु नाहि अन्य कृत्य ॥ १६६॥

कृष्ण सेइ सत्य करे, येइ मागे भृत्य ।
भृत्य-वाञ्छा-पूर्ति विनु नाहि अन्य कृत्य ॥ १६६॥

कृष्ण—भगवान् कृष्ण; **सेइ**—वे; **सत्य करे**—सत्य करते हैं; **येइ**—जो कुछ; **मागे**—माँगता है; **भृत्य**—सेवक; **भृत्य-वाञ्छा**—सेवक की मनोकामना; **पूर्ति**—पूरी किये; **विनु**—बिना; **नाहि**—नहीं; **अन्य**—अन्य; **कृत्य**—कर्तव्य।

अनुवाद

"शुद्ध भक्त अपने स्वामी से जो भी माँगता है, उसे भगवान् कृष्ण अवश्य ही प्रदान करते हैं, क्योंकि उनके पास अपने भक्त की इच्छा पूरी करने के अतिरिक्त कोई अन्य कर्तव्य नहीं रहता।

ব্রহ্মাণ্ড জীবের তুমি বাঞ্ছিলে নিস্তার ।
বিনা পাপ-ভোগে হবে সবার উদ্ধার ॥ ১৬৭॥

ব্রহ্মাণ্ড জীবের তুমি বাঞ্ছিলে নিস্তার ।
বিনা পাপ-ভোগে হবে সবার উদ্ধার ॥ ১৬৭॥

ব্রহ্মাণ্ড—ब्रह्माण्ड के; **জীবের**—सभी जीवों का; **তুমি বাঞ্ছিলে**—यदि तुम चाहो; **নিস্তার**—उद्धार; **বিনা**—बिना; **পাপ-ভোগে**—पापकर्म को भोगकर; **হবে**—होगा; **সবার**—प्रत्येक का; **উদ্ধার**—उद्धार।

अनुवाद

"यदि तुम चाहते हो कि ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत सारे जीवों का उद्धार हो जाए, तो तुम्हारे द्वारा पापकर्मों का कष्ट भोगे बिना ही उनका उद्धार किया जा सकता है।

অসমর্থ নহে কৃষ্ণ, ধরে সর্ব বল ।
তোমাকে বা কেনে ভুঞ্জাইবে পাপ-ফল? ॥ ১৬৮॥

অসমর্থ নহে কৃষ্ণ, ধরে সর্ব বল ।
তোমাকে বা কেনে ভুঞ্জাইবে পাপ-ফল? ॥ ১৬৮॥

অসমর্থ নহে—असमर्थ नहीं है; **কৃষ্ণ**—भगवान् कृष्ण; **ধরে**—रखते हैं; **সর্ব বল**—सभी शक्तियाँ; **তোমাকে**—तुम्हें; **বা**—तब; **কেনে**—क्यों; **ভুঞ্জাইবে**—भोगने देंगे; **পাপ-ফল**—पापकर्म का फल।

अनुवाद

"कृष्ण अक्षम नहीं हैं, क्योंकि उनके पास सारी शक्तियाँ हैं। भला वे अन्य जीवों के पापकर्मों के फलों का कष्ट तुम्हें क्यों भोगने देंगे?

তুমি যাঁর হিত বাঞ্ছ', সে হৈল 'বৈষ্ণব' ।
বৈষ্ণবের পাপ কৃষ্ণ দূর করে সব ॥ ১৬৯॥

তুমি যাঁর হিত বাঞ্ছ', সে হৈল 'বৈষ্ণব' ।
বৈষ্ণবের পাপ কৃষ্ণ দূর করে সব ॥ ১৬৯॥

তুমি—तुम; **যাঁর**—जिसका; **হিত বাঞ্ছ'**—हित चाहो; **সে**—वह; **হৈল**—तुरन्त हो जाता

है; **वैष्णव**—भक्त; **वैष्णवेर**—वैष्णव का; **पाप**—सहज पापी जीवन; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **दूर करे**—दूर करते हैं; **सब**—सब।

अनुवाद

"तुम जिस किसी का हित चाहते हो, वह तुरन्त वैष्णव हो जाता है और कृष्ण सारे वैष्णवों को उनके विगत पापकर्मों से मुक्त कर देते हैं।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने यहाँ वासुदेव दत्त को बतलाया कि कृष्ण सर्वशक्तिमान होने के कारण सारे बद्धजीवों का तुरन्त ही भौतिक जगत् से उद्धार कर सकते हैं। श्री चैतन्य महाप्रभु के कहने का सारांश यह था कि, "तुम समस्त प्रकार के जीवों की बिना भेदभाव के मुक्ति चाहते हो। तुम उन सबके सौभाग्य के प्रति चिन्तित हो। मेरा कहना है कि तुम्हारी प्रार्थना मात्र से ही ब्रह्माण्ड के सारे जीव मुक्ति पा सकते हैं। तुम्हें उन लोगों के पापकर्मों को अपने ऊपर लेने की आवश्यकता नहीं है। अतः उनके पापमय जीवनों के लिए तुम क्यों कष्ट सहो। जिसे भी तुम्हारी दया प्राप्त होती है, वह तुरन्त वैष्णव बन जाता है और कृष्ण सारे वैष्णवों का उनके विगत पापकर्मों के फलों से उद्धार कर देते हैं।" *भगवद्गीता* (१८.६६) में भी कृष्ण ने वचन दिया है :

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

"सारे धर्मों को त्यागकर मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हें सारे पापफलों से मोक्ष दिला दूँगा। तुम डरो नहीं।"

श्रीकृष्ण की शरण में जाते ही मनुष्य वैष्णव बन जाता है। *भगवद्गीता* के इस श्लोक में कृष्ण वचन देते हैं कि वे अपने भक्त को उसके पापमय जीवन के सारे फलों से छुटकारा दिला देंगे। यह सच है कि पूर्णतया शरणागत वैष्णव भौतिक दूषण की चपेट में कभी भी नहीं आता। इसका अर्थ यह हुआ कि उसे पवित्र या अपवित्र विगत कर्मों का फल नहीं भोगना पड़ता। पापमय जीवन से मुक्त हुए बिना वह वैष्णव नहीं बन सकता। दूसरे शब्दों में, यदि कोई वैष्णव है, तो उसके पापमय जीवन का निश्चित रूप से अन्त हो जाता है। *पद्म पुराण* के अनुसार :

अप्रारब्ध फलं पापं कूटं बीजं फलोन्मुखम्।
क्रमेनैव प्रलीयेत विष्णुभक्तिरतात्मनाम्॥

"पापमय जीवन में पापमय कर्मों के लिए सुप्त फलों की विभिन्न अवस्थाएँ भोगनी होती हैं। पापमय फल प्रभाव दिखाने की प्रतीक्षा करते रह सकते हैं (*फलोन्मुख*), वे सुप्त रह सकते हैं (*कूट*), अथवा बीज की-सी अवस्था में (*बीज*) रह सकते हैं। किसी भी किस्से में, भगवान् विष्णु की भक्ति में प्रवृत्त होने पर ये सभी प्रकार के पापों के फल विलुप्त हो जाते हैं।"

यस्त्विन्द्र-गोपमथ वेन्द्रमहो स्व-कर्म-
बन्धानुरूप-फल-भाजनमातनोति ।
कर्माणि निर्दहति किन्तु च भक्ति-भाजां
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ १७० ॥

यस्त्विन्द्र-गोपमथ वेन्द्रमहो स्व-कर्म-
बन्धानुरूप-फल-भाजनमातनोति ।
कर्माणि निर्दहति किन्तु च भक्ति-भाजां
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ १७० ॥

यः—वे जो (गोविन्द); **तु**—किन्तु; **इन्द्र-गोपम्**—इन्द्रगोप नाम का लाल रंग का छोटा कीड़ा; **अथ वा**—अथवा भी; **इन्द्रम्**—स्वर्ग का राजा इन्द्र; **अहो**—ओह; **स्व-कर्म**—अपने सकाम कर्मों के; **बन्ध**—बन्धन; **अनुरूप**—के अनुसार; **फल**—फलों का; **भाजनम्**—भोगना; **आतनोति**—प्रदान करता है; **कर्माणि**—सभी सकाम कर्म और उनके फल; **निर्दहति**—नष्ट कर देता है; **किन्तु**—किन्तु; **च**—निश्चय ही; **भक्ति-भाजाम्**—भक्ति में लगे लोगों का; **गोविन्दम्**—भगवान् गोविन्द को; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष; **तम्**—उनको; **अहम्**—मैं; **भजामि**—नमस्कार करता हूँ।

अनुवाद

"'मैं उन आदि भगवान् गोविन्द को सादर नमस्कार करता हूँ, जो प्रत्येक व्यक्ति—स्वर्ग के राजा इन्द्र से लेकर छोटे से छोटे कीट (इन्द्रगोप) तक—के कष्टों तथा कर्मों के भोग को नियन्त्रित करते हैं। यही भगवान् भक्ति में लगे व्यक्ति के सकाम कर्म को नष्ट करते हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.५४) से लिया गया है।

तोमार इच्छा-मात्रे हबे ब्रह्माण्ड-मोचन ।
सर्व मुक्त करिते कृष्णेर नाहि किछु श्रम ॥ १७१ ॥

तोमार इच्छा-मात्रे हबे ब्रह्माण्ड-मोचन ।
सर्व मुक्त करिते कृष्णेर नाहि किछु श्रम ॥ १७१ ॥

तोमार इच्छा-मात्रे—मात्र तुम्हारी इच्छा से; **हबे**—होगा; **ब्रह्माण्ड-मोचन**—ब्रह्माण्ड का उद्धार; **सर्व**—प्रत्येक की; **मुक्त करिते**—मुक्त करने के लिए; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **नाहि**—नहीं है; **किछु**—कुछ भी; **श्रम**—प्रयास।

अनुवाद

"तुम्हारी सच्ची इच्छा-मात्र से ब्रह्माण्ड के सारे जीवों का उद्धार हो जायेगा, क्योंकि कृष्ण को ब्रह्माण्ड के जीवों को मुक्ति देने के लिए कुछ करना नहीं पड़ता।

एक उडुम्बर वृक्षे लागे कोटि-फले ।
कोटि ये ब्रह्माण्ड भासे विरजार जले ॥ १७२ ॥

एक उडुम्बर वृक्षे लागे कोटि-फले ।
कोटि ये ब्रह्माण्ड भासे विरजार जले ॥ १७२ ॥

एक उडुम्बर वृक्षे—एक उडुम्बर वृक्ष में; **लागे**—लगते हैं; **कोटि-फले**—लाखों फल; **कोटि**—लाखों; **ये**—जो; **ब्रह्माण्ड**—ब्रह्माण्डों की; **भासे**—तैरते हैं; **विरजार**—विरजा नदी के; **जले**—जल में।

अनुवाद

"जिस तरह उडुम्बर वृक्ष में करोड़ों फल लगते हैं, उसी तरह विरजा नदी के जल में करोड़ों ब्रह्माण्ड तैरते रहते हैं।

तात्पर्य

विरजा नदी भौतिक जगत् को आध्यात्मिक जगत् से अलग करने वाली नदी है। विरजा नदी की एक ओर ब्रह्मलोक का तेज तथा असंख्य वैकुण्ठ लोक

हैं और दूसरी ओर यह भौतिक जगत् है। यह समझना होगा कि विरजा नदी का इस ओर का भाग कारणसागर में तैरने वाले भौतिक ग्रहों से भरा है। यद्यपि विरजा नाम आध्यात्मिक तथा भौतिक जगत् की सीमा-रेखा बताने वाला है, किन्तु विरजा नदी भौतिक शक्ति के आश्रित नहीं है। फलतः यह तीनों गुणों से रहित है।

तार एक फल पड़ि' यदि नष्ट हय ।
तथापि वृक्ष नाहि जाने निज-अपचय ॥ १७३ ॥

तार एक फल पड़ि' यदि नष्ट हय ।
तथापि वृक्ष नाहि जाने निज-अपचय ॥ १७३ ॥

तार—वृक्ष का; **एक फल**—एक फल; **पड़ि'**—गिरकर; **यदि**—यदि; **नष्ट हय**—नष्ट हो जाये; **तथापि**—तथापि; **वृक्ष**—वृक्ष; **नाहि जाने**—नहीं जानता; **निज-अपचय**—अपनी हानि।

अनुवाद

"इस उडुम्बर वृक्ष में करोड़ों फल लगते हैं, अतएव यदि एक फल गिरकर नष्ट हो जाए, तो भी वृक्ष को किसी प्रकार की क्षति का अनुभव नहीं होता।

तैछे एक ब्रह्माण्ड यदि मुक्त हय ।
तबु अल्प-हानि कृष्णेर मने नाहि लय ॥ १७४ ॥

तैछे एक ब्रह्माण्ड यदि मुक्त हय ।
तबु अल्प-हानि कृष्णेर मने नाहि लय ॥ १७४ ॥

तैछे—इसी प्रकार; **एक ब्रह्माण्ड**—एक ब्रह्माण्ड; **यदि**—यदि; **मुक्त हय**—मुक्त हो जाता है; **तबु**—तथापि; **अल्प-हानि**—बहुत थोड़ी हानि; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **मने**—मन; **नाहि लय**—बहुत गम्भीरता से नहीं लेता।

अनुवाद

"इसी तरह यदि जीवों के मुक्त हो जाने से एक ब्रह्माण्ड रिक्त भी हो जाए, तो भी कृष्ण के लिए यह मामूली बात है। वे इसे गम्भीरता से नहीं लेते।

অনন্ত ঐশ্বর্য কৃষ্ণের বৈকুণ্ঠাদি-ধাম ।
তার গড়-খাই——কারণাব্ধি যার নাম ॥ ১৭৫ ॥

অনন্ত ঐশ্বর্য্য কৃষ্ণের বৈকুণ্ঠাদি-ধাম ।
তার গড়-খাই——কারণাব্ধি য্যার নাম ॥ ১৭৫ ॥

अनन्त ऐश्वर्य्य कृष्णेर वैकुण्ठादि-धाम ।
तार गड़-खाइ——कारणाब्धि य्यार नाम ॥ १७५ ॥

अनन्त—असीम; **ऐश्वर्य्य**—ऐश्वर्य; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **वैकुण्ठ-आदि-धाम**—असंख्य वैकुण्ठ धाम; **तार**—वैकुण्ठ लोक के; **गड़-खाइ**—जल के चारों ओर; **कारण-अब्धि**—कारण सागर; **य्यार**—जिसका; **नाम**—नाम है।

अनुवाद

"सम्पूर्ण आध्यात्मिक जगत् कृष्ण का ऐश्वर्य है, जिसमें असंख्य वैकुण्ठ लोक हैं। कारण सागर को वैकुण्ठ लोक के चारों ओर की जल की खाई माना जाता है।

তাতে ভাসে মায়া লঞা অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড ।
গড়-খাইতে ভাসে যেন রাই-পূর্ণ ভাণ্ড ॥ ১৭৬ ॥

তাতে ভাসে মায়া লঞা অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড ।
গড়-খাইতে ভাসে য্যেন রাই-পূর্ণ ভাণ্ড ॥ ১৭৬ ॥

ताते भासे माया लञा अनन्त ब्रह्माण्ड ।
गड़-खाइते भासे य्येन राइ-पूर्ण भाण्ड ॥ १७६ ॥

ताते—इस जल में; **भासे**—तैरती है; **माया**—भौतिक शक्ति माया; **लञा**—लेकर; **अनन्त**—अनन्त; **ब्रह्माण्ड**—ब्रह्माण्ड; **गड़-खाइते**—पानी से घिरकर; **भासे**—तैरता है; **य्येन**—जैसे; **राइ-पूर्ण भाण्ड**—सरसों के बीजों से भरा घड़ा।

अनुवाद

"उस कारण सागर में माया तथा उसके अनन्त भौतिक ब्रह्माण्ड स्थित हैं। निस्सन्देह, माया तो राई के बीजों से भरे तैरते हुए पात्र के समान लगती है।

তার এক রাই-নাশে হানি নাহি মানি ।
ঐছে এক অণ্ড-নাশে কৃষ্ণের নাহি হানি ॥ ১৭৭ ॥

তার এক রাই-নাশে হানি নাহি মানি ।
ঐছে এক অণ্ড-নাশে কৃষ্ণের নাহি হানি ॥ ১৭৭ ॥

तार एक राइ-नाशे हानि नाहि मानि ।
ऐछे एक अण्ड-नाशे कृष्णेर नाहि हानि ॥ १७७ ॥

तार—इसका; **एक**—एक; **राइ-नाशे**—सरसों के बीज की हानि; **हानि**—हानि; **नाहि**—नहीं; **मानि**—मानी जाती; **ऐछे**—इस प्रकार; **एक**—एक; **अण्ड**—ब्रह्माण्ड के; **नाशे**—नष्ट होने पर; **कृष्णेर**—कृष्ण की; **नाहि हानि**—हानि नहीं है।

अनुवाद

"यदि इस तैरते पात्र के करोड़ों बीजों में से एक बीज नष्ट हो जाए, तो यह हानि उल्लेखनीय नहीं है। इसी तरह यदि एक ब्रह्माण्ड नष्ट हो जाए, तो भगवान् कृष्ण के लिए इसका महत्त्व नहीं है।

सब ब्रह्माण्ड सह यदि 'माया'र हय क्षय ।
तथापि ना मानेन कृष्ण किछु अपचय ॥ १७८॥

सब ब्रह्माण्ड सह यदि 'माया'र हय क्षय ।
तथापि ना माने कृष्ण किछु अपचय ॥ १७८॥

सब ब्रह्माण्ड—सभी ब्रह्माण्डों; **सह**—सहित; **यदि**—यदि; **मायार**—भौतिक शक्ति का; **हय क्षय**—नाश होता है; **तथापि**—तथापि; **ना**—नहीं; **माने**—मानते; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **किछु**—कुछ; **अपचय**—हानि।

अनुवाद

"एक ब्रह्माण्ड रूपी बीज की बात जाने दें, यदि सारे ब्रह्माण्ड तथा भौतिक शक्ति (माया) भी विनष्ट हो जाएँ, तो भी कृष्ण इस क्षति की परवाह तक नहीं करते।

कोटि-कामधेनु-पतिर छागी यैछे मरे ।
षड्-ऐश्वर्य-पति कृष्णेर माया किबा करे? ॥ १७९॥

कोटि-कामधेनु-पतिर छागी यैछे मरे ।
षड्-ऐश्वर्य-पति कृष्णेर माया किबा करे? ॥ १७९॥

कोटि—करोड़ों; **काम-धेनु**—कामधेनु गाय; **पतिर**—स्वामी की; **छागी**—एक बकरी; **यैछे**—जैसे; **मरे**—मर जाती है; **षट्-ऐश्वर्य-षट्-पति**—छः ऐश्वर्यों के स्वामी; **कृष्णेर**—कृष्ण की; **माया**—बाह्य शक्ति; **किबा**—क्या; **करे**—कर सकती है।

अनुवाद

"यदि एक करोड़ कामधेनुओं के मालिक की एक बकरी खो जाए,

तो उसे इस हानि की परवाह नहीं होती। कृष्ण छहों ऐश्वर्यों से पूर्ण हैं। यदि सम्पूर्ण भौतिक शक्ति (माया) विनष्ट हो जाए, तो इससे उनको कौन सी क्षति पहुँचने वाली है?"

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने १७१ से १७९ तक के श्लोकों की व्याख्या करते हुए बतलाया है कि यद्यपि इन श्लोकों का अर्थ अत्यन्त सरल है, किन्तु इसका तात्पर्य को समझना थोड़ा कठिन है। सामान्यतया बद्धजीव भौतिक बहिरंगा शक्ति द्वारा लुभाये जाने पर कृष्ण को भूल जाते हैं। फलत: वे *कृष्णबहिर्मुख* अर्थात् कृष्ण के साथ सम्बन्ध से रहित कहलाते हैं। जब ऐसा जीव भौतिक शक्ति के सीमा-क्षेत्र में आता है, तब उसे भौतिक शक्ति द्वारा उत्पन्न किये गये असंख्य भौतिक ब्रह्माण्डों में से किसी एक में भेज दिया जाता है, जिससे बद्धजीवों को भौतिक जगत् में अपनी इच्छाएँ पूरी करने का अवसर मिल सके। अपने कर्मों का फल भोगने की उत्सुकता के कारण बद्धजीव भौतिक जीवन की क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं के बन्धन में फँस जाते हैं। फलत: उन्हें अपने कर्मफल का सुख-दु:ख भोगना पड़ता है। किन्तु यदि बद्धजीव कृष्णभावनाभावित हो जाता है, तो उसके पाप तथा पुण्यकर्म पूर्णतया विनष्ट हो जाते हैं। भक्त बन जाने मात्र से कर्म के सारे फलों से वह मुक्त हो सकता है। इसी तरह भक्त की इच्छामात्र से बद्धजीव मुक्ति प्राप्त कर सकता है और कर्म के फलों को लाँघ सकता है। चूँकि हर व्यक्ति इस तरह मुक्त हो जाता है, तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भक्त की इच्छा के आधार पर ही भौतिक जगत् का अस्तित्व होता है अथवा नहीं होता। किन्तु अन्ततोगत्वा भक्त की नहीं, अपितु पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् की इच्छा से ही भौतिक सृष्टि का पूर्ण संहार होता है। किन्तु इससे उनकी कोई क्षति नहीं होती। करोड़ों कामधेनुओं के स्वामी को एक बकरी की हानि खलती नहीं। इसी तरह भगवान् कृष्ण भौतिक तथा आध्यात्मिक ब्रह्माण्डों के स्वामी हैं। यह भौतिक जगत् उनकी सृष्टि का केवल एक चौथाई भाग है। यदि भक्त की इच्छानुसार भगवान् सृष्टि का विनाश कर भी दें, तो वे इतने ऐश्वर्यवान हैं कि इस क्षति की उन्हें परवाह नहीं रहती।

जय जय जह्यजामजित दोष-गृभीत-गुणां
त्वमसि यदात्मना समवरुद्ध-समस्त-भगः ।
अग-जगदोकसामखिल-शक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः'' ॥ १८० ॥

जय जय जह्यजामजित दोष-गृभीत-गुणां
त्वमसि यदात्मना समवरुद्ध-समस्त-भगः ।
अग-जगदोकसामखिल-शक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः" ॥ १८० ॥

जय जय—कृपया अपनी महिमा दिखाएँ; **जहि**—कृपया विजय करें; **अजाम्**—अज्ञान, माया; **अजित**—हे अजेय पुरुष; **दोष**—दोष; **गृभीत-गुणाम्**—जिससे गुण स्वीकार किये जाते हैं; **त्वम**—आप; **असि**—हैं; **यत**—चूँकि; **आत्मना**—आपकी निजी अन्तरंगा शक्ति से; **समवरुद्ध**—से युक्त; **समस्त-भगः**—सभी प्रकार के ऐश्वर्य; **अग**—अचर; **जगत्**—चर; **ओकसाम्**—देह में बद्धजीव; **अखिल**—सभी; **शक्ति**—शक्ति के; **अवबोधक**—स्वामी; **ते**—आप; **क्वचित्**—कभी-कभी; **अजया**—बाह्य शक्ति से; **आत्मना**—स्वयं; **च**—और; **चरतः**—(अपनी दृष्टि से) लीलाएँ प्रकट करते हुए; **अनुचरेत्**—पुष्टि करते हैं; **निगमः**—सभी वेद।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु कहते रहे, "'हे प्रभु, हे अजित, हे समस्त शक्तियों के स्वामी, आप समस्त चर तथा अचर प्राणियों के अज्ञान को दूर करने के लिए कृपया अपनी अन्तरंगा शक्ति प्रकट कीजिए। अपने अज्ञान के कारण वे सभी दोषपूर्ण बातों को स्वीकार कर लेते हैं, जिससे भयानक स्थिति प्रकट हो जाती है। हे प्रभु, अपनी महिमा प्रकट करें! आप इसे आसानी से कर सकते हैं, क्योंकि आपकी अन्तरंगा शक्ति बहिरंगा शक्ति से परे है और आप समस्त ऐश्वर्य के आगार हैं। आप भौतिक शक्ति के भी प्रदर्शनकर्ता हैं। आप वैकुण्ठ में अपनी लीलाएँ करते रहते हैं, जहाँ आप अपनी सुरक्षित अन्तरंगा शक्ति प्रकट करते हैं और कभी-कभी बहिरंगा शक्ति को उस पर दृष्टिपात करके प्रकट करते हैं। इस तरह आप लीलाएँ प्रकट करते हैं। वेदों द्वारा आपकी इन दोनों शक्तियों की पुष्टि होती है और वे उनसे प्रकट होने वाली लीलाओं को स्वीकार करते हैं।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.८७.१४) से लिया गया है। यह श्रुतिगणों अर्थात् मूर्तिमान वेदों की प्रार्थनाओं में से है, जिससे वे भगवान् की महिमा का वर्णन करते हैं।

भगवान् की तीन शक्तियाँ हैं—अन्तरंगा, बहिरंगा तथा तटस्था। जब बद्धजीवों को भगवान् की विस्मृति के कारण दण्डित किया जाता है, तब बहिरंगा शक्ति भौतिक जगत् की सृष्टि करती है और जीवों को उसके नियन्त्रण में रख दिया जाता है। भौतिक प्रकृति के तीन गुण जीव को निरन्तर भय की अवस्था में रखे रहते हैं। *भयं द्वितीयाभिनिवेशतः।* नियन्त्रित बद्धजीव बहिरंगा शक्ति द्वारा नियन्त्रित होने के कारण सदा भयभीत बना रहता है। फलतः बहिरंगा शक्ति (माया) को जीतने के लिए बद्धजीव को सदैव सर्वशक्तिमान भगवान् से प्रार्थना करनी चाहिए, जिससे माया अपनी शक्तियाँ प्रकट न कर सके, जिनसे सारे चर तथ अचर जीव बँधे रहते हैं। इस प्रकार प्रार्थना करने से मनुष्य सदा के लिए भगवान् का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए पात्र बन जायेगा और इस प्रकार भगवत्-धाम लौटने का अपना उद्देश्य पूरा कर सकेगा।

এই মত সর্ব-ভক্তের কহি' সব গুণ ।
সবারে বিদায় দিল করি' আলিঙ্গন ॥ ১৮১ ॥

এइ মত সর্ব-ভক্তের কহি' সব গুণ ।
সবারে বিদায় দিল করি' আলিঙ্গন ॥ ১৮১ ॥

এइ মত—इस प्रकार; **সর্ব-ভক্তের**—सभी भक्तों के; **কহি'**—वर्णन करके; **সব গুণ**—सभी सद्गुणों का; **সবারে**—प्रत्येक व्यक्ति को; **বিদায় দিল**—विदा दी; **করি' আলিঙ্গন**—आलिंगन करके।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों के सद्गुणों का बखान एक-एक करके करते रहे। इसके बाद उन्होंने सबका आलिंगन किया और उन्हें विदा कर दिया।

প্রভুর বিচ্ছেদে ভক্ত করেন রোদন ।
ভক্তের বিচ্ছেদে প্রভুর বিষণ্ণ হৈল মন ॥ ১৮২॥

প্রভুর বিচ্ছেদে ভক্ত করেন রোদন ।
ভক্তের বিচ্ছেদে প্রভুর বিষণ্ণ হৈল মন ॥ ১৮২॥

প্রভুর—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু से; **বিচ্ছেদে**—বিছড়ने के कारण; **ভক্ত**—सभी भक्त; **করেন**—करने लगे; **রোদন**—रोदन; **ভক্তের**—भक्तों से; **বিচ্ছেদে**—बिछड़ने के कारण; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **বিষণ্ণ**—उदास; **হৈল**—हो गया; **মন**—मन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु से आसन्न विछोह के कारण सारे भक्त रोने लगे। महाप्रभु भी भक्तों के विछोह के कारण खिन्न थे।

গদাধর-পণ্ডিত রহিলা প্রভুর পাশে ।
যমেশ্বরে প্রভু যাঁরে করাইলা আবাসে ॥ ১৮৩॥

গদাধর-পণ্ডিত রহিলা প্রভুর পাশে ।
যমেশ্বরে প্রভু যাঁরে করাইলা আবাসে ॥ ১৮৩॥

গদাধর-পণ্ডিত—गदाधर पण्डित; **রহিলা**—रहे; **প্রভুর পাশে**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **যমেশ্বরে**—यमेश्वर में; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **যাঁরে**—जिनको; **করাইলা**—कराया; **আবাসে**—निवास।

अनुवाद

गदाधर पण्डित श्री चैतन्य महाप्रभु के पास रहे। उन्हें यमेश्वर में रहने के लिए स्थान दिया गया।

तात्पर्य

यमेश्वर जगन्नाथ मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। गदाधर पण्डित वहीं रहे और वहाँ पर एक छोटा-सा बगीचा तथा रेतीला तट है, जिसे यमेश्वर टोटा कहा जाता है।

পুরী-গোসাঞি, জগদানন্দ, স্বরূপ-দামোদর ।
দামোদর-পণ্ডিত, আর গোবিন্দ, কাশীশ্বর ॥ ১৮৪॥

এই-সব-সঙ্গে প্রভু বৈসে নীলাচলে ।
জগন্নাথ-দরশন নিত্য করে প্রাতঃ-কালে ॥ ১৮৫ ॥

पुरी-गोसाञि, जगदानन्द, स्वरूप-दामोदर ।
दामोदर-पण्डित, आर गोविन्द, काशीश्वर ॥ १८४ ॥
एइ-सब-सङ्गे प्रभु वैसे नीलाचले ।
जगन्नाथ-दरशन नित्य करे प्रातः-काले ॥ १८५ ॥

पुरी-गोसाञि—परमानन्द पुरी; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **स्वरूप-दामोदर**—स्वरूप दामोदर; **दामोदर-पण्डित**—दामोदर पण्डित; **आर**—और; **गोविन्द**—गोविन्द; **काशीश्वर**—काशीश्वर; **एइ-सब**—ये सभी महाशयों; **सङ्गे**—के साथ; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **वैसे**—रहे; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **जगन्नाथ-दरशन**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करते हुए; **नित्य**—प्रतिदिन; **करे**—करते थे; **प्रातः-काले**—प्रातःकाल।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ पुरी, नीलाचल में परमानन्द पुरी, जगदानन्द, स्वरूप दामोदर, दामोदर पण्डित, गोविन्द तथा काशीश्वर के साथ रहे। श्री चैतन्य महाप्रभु नित्य ही प्रातःकाल जगन्नाथजी का दर्शन करने जाते।

প্রভু-পাশ আসি' সার্বভৌম এক দিন ।
যোড়-হাত করি' কিছু কৈল নিবেদন ॥ ১৮৬ ॥

प्रभु-पाश आसि' सार्वभौम एक दिन ।
ग्रोड़-हात करि' किछु कैल निवेदन ॥ १८६ ॥

प्रभु-पाश—श्री चैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति में; **आसि'**—आकर; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **एक दिन**—एक दिन; **ग्रोड़-हात करि'**—दोनों हाथ जोड़कर; **किछु**—कुछ; **कैल**—किया; **निवेदन**—निवेदन।

अनुवाद

एक दिन सार्वभौम भट्टाचार्य हाथ जोड़े हुए चैतन्य महाप्रभु के समक्ष आये और उनसे एक प्रार्थना करने लगे।

এবে সব বৈষ্ণব গৌড়-দেশে চলি' গেল ।
এবে প্রভুর নিমন্ত্রণে অবসর হৈল ॥ ১৮৭ ॥

एबे सब वैष्णव गौड़-देशे चलि' गेल ।
एबे प्रभुर निमन्त्रणे अवसर हैल ॥ १८७॥

एबे—अब; **सब**—सब; **वैष्णव**—भक्त; **गौड़-देशे**—बंगाल को; **चलि' गेल**—लौट गये हैं; **एबे**—अब; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **निमन्त्रणे**—निमंत्रण के लिए; **अवसर हैल**—अवसर है।

अनुवाद

चूँकि सारे वैष्णव बंगाल वापस चले गये थे, अतएव यह अच्छा अवसर था कि महाप्रभु निमन्त्रण स्वीकार कर लेंगें।

এবে মোর ঘরে ভিক্ষা করহ 'মাস' ভরি' ।
প্রভু কহে,—ধর্ম নহে, করিতে না পারি ॥ ১৮৮॥
एबे मोर घरे भिक्षा करह 'मास' भरि' ।
प्रभु कहे,—धर्म नहे, करिते ना पारि ॥ १८८॥

एबे—अब; **मोर घरे**—मेरे घर पर; **भिक्षा**—भोजन; **करह**—स्वीकार करें; **मास भरि'**—एक मास के लिए; **प्रभु कहे**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **धर्म**—धर्म; **नहे**—नहीं है; **करिते**—करना; **ना पारि**—मैं समर्थ नहीं।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "कृपया एक मास तक मेरे यहाँ भोजन करने का निमन्त्रण स्वीकार करें।" महाप्रभु ने उत्तर दिया, "ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि यह संन्यासी धर्म के विरुद्ध है।"

সার্বভৌম কহে,—ভিক্ষা করহ বিশ দিন ।
প্রভু কহে,—এহ নহে যতি-ধর্ম-চিহ্ন ॥ ১৮৯॥
सार्वभौम कहे,—भिक्षा करह बिश दिन ।
प्रभु कहे,—एह नहे यति-धर्म-चिह्न ॥ १८९॥

सार्वभौम कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **भिक्षा करह**—भोजन स्वीकार करें; **बिश दिन**—बीस दिन के लिए; **प्रभु कहे**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **एह नहे**—यह नहीं है; **यति-धर्म-चिह्न**—एक संन्यासी का धर्म।

अनुवाद

तब सार्वभौम ने कहा, "तो फिर बीस दिनों के लिए निमन्त्रण स्वीकार करें।" किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "यह संन्यास आश्रम का धर्म नहीं है।"

सार्वभौम कहे पुनः,—दिन 'पञ्च-दश' ।
प्रभु कहे,—तोमार भिक्षा 'एक' दिवस ॥ १९० ॥
सार्वभौम कहे पुनः,—दिन 'पञ्च-दश' ।
प्रभु कहे,—तोमार भिक्षा 'एक' दिवस ॥ १९० ॥

सार्वभौम कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **पुनः**—दोबारा; **दिन पञ्च-दश**—पन्द्रह दिन; **प्रभु कहे**—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **तोमार भिक्षा**—आपके घर पर भोजन; **एक दिवस**—केवल एक दिन।

अनुवाद

जब सार्वभौम भट्टाचार्य ने पुनः पन्द्रह दिन तक भोजन करने के लिए आग्रह किया, तो महाप्रभु ने कहा, "मैं आपके घर केवल एक दिन भोजन ग्रहण करूँगा।"

तबे सार्वभौम प्रभुर चरणे धरिया ।
'दश-दिन भिक्षा कर' कहे विनति करिया ॥ १९१ ॥
तबे सार्वभौम प्रभुर चरणे धरिया ।
'दश-दिन भिक्षा कर' कहे विनति करिया ॥ १९१ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरणे धरिया**—चरणकमल पकड़कर; **दश-दिन**—दस दिन के लिए; **भिक्षा कर**—भोजन करने को; **कहे**—कहा; **विनति करिया**—विनति की।

अनुवाद

तब सार्वभौम ने महाप्रभु के चरण पकड़ लिए और विनयपूर्वक कहा, "कम-से-कम दस दिनों तक तो भोजन अवश्य ग्रहण करें।"

প্রভু ক্রমে ক্রমে পাঁচ-দিন ঘাটাইল ।
পাঁচ-দিন তাঁর ভিক্ষা নিয়ম করিল ॥ ১৯২॥

প্রভু ক্রমে ক্রমে পাঁচ-দিন ঘাটাইল ।
পাঁচ-দিন তাঁর ভিক্ষা নিয়ম করিল ॥ ১৯২॥

প্রভু—श्री चैतन्य महाप्रभु; **क्रमे क्रमे**—धीरे धीरे; **शनै शनै**; **पाँच-दिन**—पाँच दिन तक; **घाटाइल**—कम कर दिया; **पाञ्च-दिन**—पाँच दिन के लिए; **ताँर**—उनका; **भिक्षा**—भोजन का निमंत्रण; **नियम करिल**—नियमपूर्वक स्वीकार कर लिया।

अनुवाद

इस तरह धीरे-धीरे महाप्रभु ने अवधि को घटाकर पाँच दिन दी। इस तरह वे महीने में लगातार पाँच दिनों तक भट्टाचार्य के निमन्त्रण को स्वीकार करते रहे।

তবে সার্বভৌম করে আর নিবেদন ।
তোমার সঙ্গে সন্ন্যাসী আছে দশ-জন ॥ ১৯৩॥

তবে সার্বভৌম করে আর নিবেদন ।
তোমার সঙ্গে সন্ন্যাসী আছে দশ-জন ॥ ১৯৩॥

তবে—तत्पश्चात्; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **करे**—किया; **आर**—अन्य; **निवेदन**—निवेदन; **तोमार सङ्गे**—आपके साथ; **सन्यासी**—संन्यासी; **आछे**—हैं; **दश-जन**—दस व्यक्ति।

अनुवाद

इसके बाद सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "हे प्रभु, आपके साथ दस संन्यासी हैं।"

तात्पर्य

संन्यासी को न तो स्वयं अपने लिए भोजन बनाना चाहिए, न ही किसी भक्त के घर कई दिनों तक लगातार भोजन ग्रहण करना चाहिए। श्री चैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों के प्रति अत्यन्त दयालु तथा वत्सल थे। तो भी उन्होंने सार्वभौम के घर लम्बा निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया। स्नेहवश उन्होंने महीने में केवल पाँच दिनों का निमन्त्रण स्वीकार किया। महाप्रभु के साथ रहने वाले दस संन्यासियों के नाम थे—(१) परमानन्द पुरी, (२) स्वरूप दामोदर,

(३) ब्रह्मानन्द पुरी, (४) ब्रह्मानन्द भारती, (५) विष्णु पुरी, (६) केशव पुरी, (७) कृष्णानन्द पुरी, (८) नृसिंह तीर्थ, (९) सुखानन्द पुरी तथा (१०) सत्यानन्द भारती।

পুরী-গোসাঞির ভিক্ষা পাঁচ-দিন মোর ঘরে ।
পূর্বে আমি কহিয়াছোঁ তোমার গোচরে ॥ ১৯৪॥
पुरी-गोसाञिर भिक्षा पाँच-दिन मोर घरे ।
पूर्वे आमि कहियाछों तोमार गोचरे ॥ १९४॥

पुरी-गोसाञिर—परमानन्द पुरी का; **भिक्षा**—भोजन का निमंत्रण; **पाँच-दिन**—पाँच दिन; **मोर घरे**—मेरे घर पर; **पूर्वे**—पहले; **आमि**—मैंने; **कहियाछों**—कहा है; **तोमार गोचरे**—यह आप को मालूम है।

अनुवाद

तब सार्वभौम भट्टाचार्य ने निवेदन किया कि परमानन्द पुरी भी उनके घर पाँच दिन का निमन्त्रण स्वीकार करेंगे। इसका निर्णय महाप्रभु के समक्ष पहले ही हो चुका था।

দামোদর-স্বরূপ,—এই বান্ধব আমার ।
কভু তোমার সঙ্গে যাবে, কভু একেশ্বর ॥ ১৯৫॥
दामोदर-स्वरूप,—एइ बान्धव आमार ।
कभु तोमार सङ्गे याबे, कभु एकेश्वर ॥ १९५॥

दामोदर-स्वरूप—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **एइ**—यह; **बान्धव आमार**—मेरा अत्यन्त घनिष्ठ मित्र; **कभु**—कभी-कभी; **तोमार सङ्गे**—आपके साथ; **याबे**—आयेंगे; **कभु**—कभी-कभी; **एकेश्वर**—अकेला।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "दामोदर स्वरूप मेरा घनिष्ठ मित्र है। कभी वह आपके साथ आयेगा और कभी अकेले।

আর অষ্ট সন্ন্যাসীর ভিক্ষা দুই দুই দিবসে ।
এক এক-দিন, এক এক জনে পূর্ণ হইল মাসে ॥ ১৯৬॥

आर अष्ट सन्न्यासीर भिक्षा दुइ दुइ दिवसे ।
एक एक-दिन, एक एक जने पूर्ण हइल मासे ॥ १९६ ॥

आर—अन्य; **अष्ट**—आठ; **सन्न्यासीर**—संन्यासियों का; **भिक्षा**—भोजन का निमंत्रण; **दुइ दुइ दिवसे**—दो दो दिन प्रत्येक; **एक एक-दिन**—एक एक दिन; **एक एक जने**—एक व्यक्ति; **पूर्ण**—पूर्ण होगा; **हइल**—होगा; **मासे**—मास।

अनुवाद

"अन्य आठ संन्यासी दो-दो दिन का निमन्त्रण स्वीकार करेंगे। इस तरह पूरे महीने प्रतिदिन के लिए कार्यक्रम रहेगा।

तात्पर्य

महीने के तीस दिनों में श्री चैतन्य महाप्रभु सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पाँच दिन, परमानन्द पुरी गोस्वामी पाँच दिन, स्वरूप दामोदर चार दिन तथा आठ अन्य संन्यासी दो-दो दिन निमन्त्रण स्वीकार करेंगे। इस तरह तीस दिन पूरे हो जायेंगे।

বহুত সন্ন্যাসী যদি আইসে এক ঠাঞি ।
সম্মান করিতে নারি, অপরাধ পাই ॥ ১৯৭ ॥

बहुत सन्न्यासी यदि आइसे एक ठाञि ।
सम्मान करिते नारि, अपराध पाइ ॥ १९७ ॥

बहुत सन्न्यासी—बहुत से संन्यासी; **यदि**—यदि; **आइसे**—आते हैं; **एक ठाञि**—इकट्ठे; **सम्मान करिते नारि**—मैं उनका उचित सम्मान नहीं कर सकता; **अपराध पाइ**—मैं अपराधी बनूँगा।

अनुवाद

"यदि सारे संन्यासी एकसाथ आयेंगे, तो मैं उनका समुचित सत्कार नहीं कर पाऊँगा और मैं अपराधी बनूँगा।

তুমিহ নিজ-ছায়ে আসিবে মোর ঘর ।
কভু সঙ্গে আসিবেন স্বরূপ-দামোদর ॥ ১৯৮ ॥

तुमिह निज-छाये आसिबे मोर घर ।
कभु सङ्गे आसिबेन स्वरूप-दामोदर ॥ १९८ ॥

तुमिह—आप; **निज-छाये**—अकेले; **आसिबे**—आयें; **मोर घर**—मेरे घर पर; **कभु**—कभी-कभी; **सङ्गे**—आपके साथ; **आसिबेन**—आयेंगे; **स्वरूप-दामोदर**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी।

अनुवाद

"कभी आप अकेले मेरे घर आयेंगे और कभी स्वरूप दामोदर के साथ।"

प्रभुर इङ्गित पाञा आनन्दित मन ।
सेइ दिन महाप्रभुर कैल निमन्त्रण ॥ १९९॥

प्रभुर इङ्गित पाञा आनन्दित मन ।
सेइ दिन महाप्रभुर कैल निमन्त्रण ॥ १९९॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **इङ्गित**—स्वीकृति; **पाञा**—पाकर; **आनन्दित**—अत्यन्त आनन्दित; **मन**—मन; **सेइ दिन**—उसी दिन; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **कैल**—किया; **दिया**; **निमन्त्रण**—निमंत्रण।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने इस प्रबन्ध की पुष्टि कर दी, तो भट्टाचार्य अत्यन्त प्रसन्न हुए और तुरन्त उसी दिन महाप्रभु को अपने घर आने को निमन्त्रित किया।

'षाठीर माता' नाम, भट्टाचार्येर गृहिणी ।
प्रभुर महा-भक्त तेँहो, स्नेहेते जननी ॥२००॥

'षाठीर माता' नाम, भट्टाचार्येर गृहिणी ।
प्रभुर महा-भक्त तेंहो, स्नेहेते जननी ॥ २००॥

षाठीर माता—षाठी की माता; **नाम**—नामक; **भट्टाचार्येर गृहिणी**—सार्वभौम भट्टाचार्य की पत्नी; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **महा-भक्त**—एक महान् भक्त; **तेंहो**—वह; **स्नेहेते**—स्नेह-वश; **जननी**—एक माता की भाँति।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य की पत्नी षाठी की माता कहलाती थीं। वे श्री चैतन्य महाप्रभु की महान् भक्तिन थीं। वे माता के समान स्नेहिल थीं।

घरे आसि' भट्टाचार्य ताँरे आज्ञा दिल ।
आनन्दे षाठीर माता पाक चड़ाइल ॥२०१॥

घरे आसि' भट्टाचार्य्य ताँरे आज्ञा दिल ।
आनन्दे षाठीर माता पाक चड़ाइल ॥ २०१ ॥

घरे आसि'—घर आकर; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **ताँरे**—उनको; **आज्ञा दिल**—आज्ञा दी; **आनन्दे**—पूर्ण सन्तोष सहित; **षाठीर माता**—षाठी की माता; **पाक चड़ाइल**—पकाने लगी।

अनुवाद

घर लौटकर सार्वभौम भट्टाचार्य ने अपनी पत्नी को आदेश दिया, तो उनकी पत्नी षाठीर माता बड़े ही आनन्द से भोजन पकाने लगीं।

भट्टाचार्यर गृहे सब द्रव्य आछे भरि' ।
येबा शाक-फलादिक, आनाइल आहरि' ॥२०२॥

भट्टाचार्य्यर गृहे सब द्रव्य आछे भरि' ।
येबा शाक-फलादिक, आनाइल आहरि' ॥ २०२ ॥

भट्टाचार्य्यर गृहे—सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर; **सब द्रव्य**—सब प्रकार की सामग्री; **आछे**—थी; **भरि'**—भरपूर; **येबा**—जो कुछ; **शाक**—पालक; **फल-आदिक**—फल आदि; **आनाइल**—वे लाये; **आहरि'**—इकट्ठे करके।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य के घर में खाद्य पदार्थ का सदैव संग्रह रहता था। जितनी पालक, तरकारियाँ, फल इत्यादि की आवश्यकता थी, उतनी लाकर संग्रह कर दिया गया।

आपनि भट्टाचार्य करे पाकेर सब कर्म ।
षाठीर माता—विचक्षणा, जाने पाक-मर्म ॥२०३॥

आपनि भट्टाचार्य्य करे पाकेर सब कर्म ।
षाठीर माता—विचक्षणा, जाने पाक-मर्म ॥ २०३ ॥

आपनि—स्वयं; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **करे**—व्यवस्था की; **पाकेर**—पकाने

के; **सब कर्म**—सब काम की; **षाठीर माता**—षाठी की माता; **विचक्षणा**—अति अनुभवी; **जाने**—जानती थीं; **पाक-मर्म**—पकाने की कला।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य भोजन पकाने में अपनी पत्नी की सहायता करने लगे। उनकी पत्नी षाठीर माता अत्यन्त अनुभवी थीं और वे अच्छा भोजन बनाना जानती थीं।

পাক-শালার দক্ষিণে——দুই ভোগালয় ।
এক-ঘরে শালগ্রামের ভোগ-সেবা হয় ॥২০৪॥

पाक-शालार दक्षिणे——दुइ भोगालय ।
एक-घरे शालग्रामेर भोग-सेवा हय ॥ २०४॥

पाक-शालार दक्षिणे—रसोई के दक्षिण की ओर; **दुइ भोग-आलय**—भोग लगाने के दो कमरे; **एक-घरे**—एक कमरे में; **शालग्रामेर**—भगवान् शालग्राम के; **भोग-सेवा**—भोग लगाने का; **हय**—था।

अनुवाद

रसोई-घर के दक्षिण की ओर भोजन अर्पण करने के दो कमरे थे, जिनमें से एक में शालग्राम नारायण को भोग लगाया जाता था।

तात्पर्य

वैदिक अनुयायी एक पत्थर की बटिया के रूप में शालग्राम शिला अर्थात् नारायण-विग्रह की पूजा करते हैं। आज भी भारत में हर ब्राह्मण अपने घर में शालग्राम शिला की पूजा करता है। वैश्य तथा क्षत्रियगण भी ऐसी पूजा करते हैं, लेकिन ब्राह्मण के घर में यह अनिवार्य है।

আর ঘর মহাপ্রভুর ভিক্ষার লাগিয়া ।
নিভৃতে করিয়াছে ভট্ট নূতন করিয়া ॥২০৫॥

आर घर महाप्रभुर भिक्षार लागिया ।
निभृते करियाछे भट्ट नूतन करिया ॥ २०५॥

आर घर—दूसरा कमरा; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **भिक्षार लागिया**—भोजन

कराने के लिए; **निभृते करियाछे**—एकान्त स्थान में बना; **भट्ट**—सार्वभौम भट्टाचार्य द्वारा; **नूतन करिया**—अभी अभी बनाया गया।

अनुवाद

दूसरा कमरा श्री चैतन्य महाप्रभु को भोजन कराने के लिए था। यह कमरा एकान्त में था और इसे भट्टाचार्य ने अभी नया नया बनवाया था।

বাহ্যে এক দ্বার তার, প্রভু প্রবেশিতে ।
পাক-শালার এক দ্বার অন্ন পরিবেশিতে ॥২০৬॥

বাহ্যে এক দ্বার তার, প্রভু প্রবেশিতে ।
পাক-শালার এক দ্বার অন্ন পরিবেশিতে ॥ ২০৬ ॥

বাহ্যে—बाहर; **এক দ্বার**—एक द्वार; **তার**—इस कमरे का; **প্রভু প্রবেশিতে**—श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रवेश के लिए; **পাক-শালার**—रसोई का; **এক দ্বার**—एक दूसरा द्वार; **অন্ন**—अन्न, भोजन; **পরিবেশিতে**—परोसने के लिए।

अनुवाद

यह कमरा इस तरह बना था कि श्री चैतन्य महाप्रभु के लिए बाहर से जाने के लिए केवल एक दरवाजा था, जो बाहर की ओर खुलता था। दूसरा दरवाजा रसोई-घर के साथ लगा था, जिससे भोजन लाया जाता था।

বত্তিশা-আঠিয়া কলার আঙ্গটিয়া পাতে ।
তিন-মান তণ্ডুলের উভারিল ভাতে ॥২০৭॥

বত্তিশা-আঠিয়া কলার আঙ্গটিয়া পাতে ।
তিন-মান তণ্ডুলের উভারিল ভাতে ॥ ২০৭ ॥

বত্তিশা-আঠিয়া—बत्तिशा आठिया नामक; **কলার**—केले के वृक्ष का; **আঙ্গটিয়া**—विभाजित किए बिना; **পাতে**—पत्ते पर; **তিন**—तीन; **মান**—मान (एक निश्चित वजन); **তণ্ডুলের**—चावल के; **উভারিল**—डाल दिये; **ভাতে**—पकाया हुआ भात।

अनुवाद

सर्वप्रथम केले के बड़े पत्ते पर तीन मान (लगभग ६ पौंड) पकाया चावल परोसा गया।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु के लिए जो भोजन तैयार किया गया, उसका वर्णन यहाँ से शुरू होता है। कविराज गोस्वामी द्वारा दिया गया यह वर्णन बतलाता है कि वे अवश्य ही भोजन बनाने और परोसने में दक्ष रहे होंगे।

पीत-सुगन्धि-घृते अन्न सिक्त कैल ।
चारि-दिके पाते घृत वहिया चलिल ॥२०८॥

पीत-सुगन्धि-घृते अन्न सिक्त कैल ।
चारि-दिके पाते घृत वहिया चलिल ॥ २०८ ॥

पीत—पीले; **सु-गन्धि**—सुगन्धित; **घृते**—घी के साथ; **अन्न**—भात; **सिक्त**—मिला हुआ; **कैल**—किया; **चारि-दिके**—चारों ओर; **पाते**—पत्ते (पत्र); **घृत**—घी; **वहिया चलिल**—चूने तथा बहने लगा।

अनुवाद

तब पूरे चावल में इतना पीला सुगन्धित घी डाला गया कि वह पत्ते से बाहर बह चला।

केयापत्र-कलाखोला-डोङ्गा सारि सारि ।
चारि-दिके धरियाछे नाना व्यञ्जन भरि' ॥२०९॥

केयापत्र-कलाखोला-डोङ्गा सारि सारि ।
चारि-दिके धरियाछे नाना व्यञ्जन भरि' ॥ २०९ ॥

केया-पत्र—केया पौधे का पत्ता; **कला-खोला**—केले के वृक्ष का पत्ता; **डोङ्गा**—डोंगे; **सारि सारि**—एक के बाद एक; **चारि-दिके**—चारों दिशा में; **धरियाछे**—रखे थे; **नाना**—नाना प्रकार के; **व्यञ्जन**—पकवान; **भरि'**—भरकर।

अनुवाद

केले की छाल तथा केया की पत्तियों के बने अनेक दोने थे। इन्हें विविध तरकारियों से भरकर पत्तल के चारों ओर रख दिया गया।

दश-प्रकार शाक, निम्ब-तिक्त-सुख्त-झोल ।
मरिचेर झाल, छाना-बड़ा, बड़ि घोल ॥२१०॥

दश-प्रकार शाक, निम्ब-तिक्त-सुख्त-झोल ।
मरिचेर झाल, छाना-बड़ा, बड़ि घोल ॥ २१० ॥

दश-प्रकार शाक—दस प्रकार के साग; **निम्ब-तिक्त-सुख्त-झोल**—नीम की कड़वी पत्तियाँ मिलाकर बनाया गया सुख्त नाम का 'सूप'; **मरिचेर झाल**—काली मिर्च से बना तीखा पकवान; **छाना-बड़ा**—भुने दही से बना नर्म 'केक'; **बड़ि घोल**—तली दाल के टुकड़ों का मट्ठा।

अनुवाद

व्यंजनों में दस प्रकार की पालक, कड़वी नीम की पत्तियों का बना शोरबा (सुख्त), काली मिर्च का बना तीखा व्यंजन, छाना-बड़ा, बड़ी घोल थे।

दुग्ध-तुम्बी, दुग्ध-कुष्माण्ड, वेसर, लाफ़ा ।
मोचा-घण्ट, मोचा-भाजा, विविध शाक्रा ॥ २११ ॥

दुग्ध-तुम्बी, दुग्ध-कुष्माण्ड, वेसर, लाफ़ा ।
मोचा-घण्ट, मोचा-भाजा, विविध शाक्रा ॥ २११ ॥

दुग्ध-तुम्बी—दूध में पकाया गया सीताफल; **दुग्ध-कुष्माण्ड**—दूध में पकाया हुआ कद्दू; **वेसर**—बेसन से बना पकवान; **लाफ़ा**—कई सब्जियों का मिश्रण; **मोचा-घण्ट**—उबले हुए केले के फूल; **मोचा-भाजा**—तले हुए केले के फूल; **विविध**—नाना प्रकार की; **शाक्रा**—तरकारियाँ।

अनुवाद

व्यंजनों में दुग्ध-तुम्बी, दुग्ध-कुष्माण्ड, वेसर, लाफ़ा, मोचा-घण्टा, मोचा-भाजा तथा अन्य तरकारियाँ थीं।

वृद्ध-कुष्माण्ड-वड़ीर व्यञ्जन अपार ।
फुलवड़ी-फल-मूल विविध प्रकार ॥ २१२ ॥

वृद्ध-कुष्माण्ड-बड़ीर व्यञ्जन अपार ।
फुलबड़ी-फल-मूल विविध प्रकार ॥ २१२ ॥

वृद्ध-कुष्माण्ड-बड़ीर—पके कद्दू में मिश्रित तली दाल के छोटे टुकड़े; **व्यञ्जन**—पकवान; **अपार**—असीम; **फुल-बड़ी**—एक अन्य प्रकार की दाल से मिश्रित छोटे टुकड़े; **फल**—फल; **मूल**—जड़ें; **विविध प्रकार**—विविध प्रकार के।

अनुवाद

अनेक प्रकार की वृद्धकुष्माण्ड बड़ी, फुलबड़ी, फल तथा विविध कन्द थे।

নব-নিম্বপত্র-সহ ভৃষ্ট-বার্তাকী ।
ফুল-বড়ী পটোল-ভাজা, কুষ্মাণ্ড-মান-চাকী ॥২১৩॥

नव-निम्बपत्र-सह भृष्ट-वार्ताकी ।
फुल-बड़ी पटोल-भाजा, कुष्माण्ड-मान-चाकी ॥ २१३॥

नव—नए उगे हुए; **निम्ब-पत्र**—नीम के पत्ते; **सह**—के साथ; **भृष्ट-वार्ताकी**—भुना हुआ बैंगन; **फुल-बड़ी**—हल्की बड़ी; **पटोल-भाजा**—तली हुई पटोल सब्जी; **कुष्माण्ड**—कद्दू के; **मान**—सीताफल के; **चाकी**—गोल टुकड़े ।

अनुवाद

अन्य व्यंजनों में नीम की नई सुखाई पत्तियों से मिला बैंगन, हल्की बड़ी, सूखा पटोल तथा कुम्हड़े के बने पेठे थे।

ভৃষ্ট-মাষ-মুদ্গ-সূপ অমৃত নিন্দয় ।
মধুরাম্ল, বড়াম্লাদি অম্ল পাঁচ ছয় ॥২১৪॥

भृष्ट-माष-मुद्‌ग-सूप अमृत निन्दय ।
मधुराम्ल, बड़ाम्लादि अम्ल पाँच छय ॥ २१४॥

भृष्ट—तली हुई; **माष**—उड़द की दाल; **मुद्‌ग**—मूँग की दाल; **सूप**—सूप; **अमृत**—अमृत को; **निन्दय**—मात करके; **मधुर-अम्ल**—मीठी चटनी; **बड़-अम्ल**—तली दाल से तैयार किया खट्टा पकवान; **आदि**—आदि; **अम्ल**—खट्टा; **पाँच छय**—पाँच-छः प्रकार का।

अनुवाद

तली उड़द की दाल तथा मूँग की दाल का शोरबा अमृत से भी बढ़कर था। मीठी चटनी के साथ ही पाँच-छः प्रकार के खट्टे व्यंजन थे, जिनमें बड़ाम्ल मुख्य था।

মুদগ-বড়া, মাষ-বড়া, কলা-বড়া মিষ্ট ।
ক্ষীর-পুলি, নারিকেল-পুলি আর যত পিষ্ট ॥২১৫॥

मुद्‌ग-बड़ा, माष-बड़ा, कला-बड़ा मिष्ट ।
क्षीर-पुलि, नारिकेल-पुलि आर ग्रत पिष्ट ॥ २१५ ॥

मुद्‌ग-बड़ा—मूँग दाल से बना तला हुआ वड़ा; **माष-बड़ा**—उड़द दाल से बना तला हुआ वड़ा; **कला-बड़ा**—केले से बना तला हुआ वड़ा; **मिष्ट**—अति मधुर; **क्षीर-पुलि**—खीर से बनी मिठाई; **नारिकेल-पुलि**—नारियल बर्फी; **आर**—और; **ग्रत**—प्रकार; **पिष्ट**—बर्फियाँ ।

अनुवाद

मूँग की दाल, उड़द की दाल तथा मीठे केले के बड़े बने थे और मीठे चावल की बर्फी, नारिकेल की बर्फी तथा अन्य अनेक बर्फियाँ थीं।

काँजि-वड़ा, दुग्ध-चिड़ा, दुग्ध-लक्लकी ।
आर यत पिठा कैल, कहिते ना शकि ॥२१६॥

काँजि-बड़ा, दुग्ध-चिड़ा, दुग्ध-लक्लकी ।
आर ग्रत पिठा कैल, कहिते ना शकि ॥ २१६ ॥

काँजि-बड़ा—खट्टे चावल के जल से बने वड़े; **दुग्ध-चिड़ा**—दूध में मिश्रित मीठे चावल; **दुग्ध-लक्लकी**—दूध और वड़े से बना एक अन्य चाटने वाला पदार्थ; **आर**—और; **ग्रत**—नाना प्रकार की; **पिठा**—मिठाईयाँ; **कैल**—बनाए; **कहिते**—वर्णन करने में; **ना शकि**—मैं अक्षम हूँ।

अनुवाद

कांजी बड़ा, दुग्ध-चिड़ा, दुग्ध लक्लकी तथा विविध मिठाईयाँ थीं, जिनका वर्णन करने में मैं अक्षम हूँ।

घृत-सिक्त परमान्न, मृत्कुण्डिका भरि' ।
चाँपाकला-घनदुग्ध-आम्र ताहा धरि ॥२१७॥

घृत-सिक्त परम-अन्न—घी से मिश्रित मीठे चावल; **मृत्-कुण्डिका भरि'**—मिट्टी की हांडी भरकर; **चाँपा-कला**—एक प्रकार का केला; **घन-दुग्ध**—गाढ़ा दूध; **आम्र**—आम का गूदा; **ताहा**—वह; **धरि**—शामिल करके; उसके समेत।

अनुवाद

घी मिलाकर मीठे चावल को मिट्टी के पात्र में डाला गया और उसमें चाँपाकला, औंटाया दूध तथा आम मिला दिया गया।

रसाला-मथित दधि, सन्देश अपार ।
गौड़े उत्कले यत भक्ष्येर प्रकार ॥२१८॥

रसाला-मथित दधि, सन्देश अपार ।
गौड़े उत्कले यत भक्ष्येर प्रकार ॥ २१८ ॥

रसाला—स्वादिष्ट; **मथित**—मथा हुआ; **दधि**—दही; **सन्देश**—सन्देश मिठाई; **अपार**—असीम; **गौड़े**—बंगाल में; **उत्कले**—उड़ीसा में; **यत**—सभी; **भक्ष्येर**—खाद्य; **प्रकार**—प्रकार।

अनुवाद

अन्य व्यंजन थे—अत्यन्त स्वादिष्ट लस्सी तथा तरह-तरह की सन्देश मिठाइयाँ। वास्तव में बंगाल तथा उड़ीसा में उपलब्ध सभी विभिन्न खाद्यों को तैयार किया गया था।

श्रद्धा करि' भट्टाचार्य सब कराइल ।
शुभ्र-पीठोपरि सूक्ष्म वसन पातिल ॥२१९॥

श्रद्धा करि' भट्टाचार्य्य सब कराइल ।
शुभ्र-पीठोपरि सूक्ष्म वसन पातिल ॥ २१९ ॥

श्रद्धा करि'—अत्यन्त श्रद्धा सहित; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **सब कराइल**—सब तैयार करवाईं; **शुभ्र**—सफेद; **पीठ**—लकड़ी की एक चौकी; **उपरि**—ऊपर; **सूक्ष्म**—महीन; **वसन**—कपड़ा; **पातिल**—बिछाया।

अनुवाद

इस तरह भट्टाचार्य ने अनेक प्रकार के व्यंजन तैयार किये और तब उन्होंने श्वेत काठ की चौकी पर महीन वस्त्र बिछा दिया।

दुई पाशे सुगन्धि शीतल जल-झारी ।
अन्न-व्यञ्जनोपरि दिल तुलसी-मञ्जरी ॥२२०॥

दुइ पाशे सुगन्धि शीतल जल-झारी ।
अन्न-व्यञ्जनोपरि दिल तुलसी-मञ्जरी ॥ २२० ॥

दुइ पाशे—दोनों ओर; **सु-गन्धि**—सुगन्धित; **शीतल**—शीतल; **जल-झारि**—जल के घड़े; **अन्न-व्यञ्जन-उपरि**—भात और तरकारियों के ऊपर; **दिल**—रखी; **तुलसी-मञ्जरी**—तुलसी मंजरी।

अनुवाद

भोजन की थाली के दोनों ओर सुगन्धित शीतल जल से भरे घड़े थे। चावल के ढेर के ऊपर तुलसी की मंजरियाँ रखी गई थीं।

अमृत-गुटिका, पिठा-पाना आनाइल ।
जगन्नाथ-प्रसाद सब पृथक्धरिल ॥ २२१ ॥

अमृत-गुटिका, पिठा-पाना आनाइल ।
जगन्नाथ-प्रसाद सब पृथक्धरिल ॥ २२१ ॥

अमृत-गुटिका—अमृत गुटिका मिठाई; **पिठा-पाना**—खीर तथा वड़े; **आनाइल**—लाये; **जगन्नाथ-प्रसाद**—भगवान् जगन्नाथ का प्रसाद; **सब**—सब; **पृथक् धरिल**—अलग रखी।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने भगवान् जगन्नाथ पर अर्पित किये गये कई प्रकार के व्यंजनों को भी सम्मिलित कर लिया था। इनमें अमृत गुटिका, खीर तथा केक सम्मिलित थे। इन्हें अलग रखा गया था।

तात्पर्य

यद्यपि जगन्नाथजी का अवशिष्ट भोजन भी भट्टाचार्य के घर आया था, किन्तु उसे घर पर बनाये गये व्यंजनों से पृथक् रखा गया था। कभी-कभी ऐसा होता है कि प्रसाद को पर्याप्त भोजन में मिलाकर वितरित किया जाता है, किन्तु सार्वभौम भट्टाचार्य ने जगन्नाथजी के प्रसाद को पृथक् ही रखा। उन्होंने विशेषत: महाप्रभु की तुष्टि के लिए ही ऐसा किया।

हेन-काले महाप्रभु मध्याह्न करिया ।
एकले आइल ताँर हृदय जानिया ॥ २२२ ॥

हेन-काले महाप्रभु मध्याह्न करिया ।
एकले आइल ताँर हृदय जानिया ॥ २२२ ॥

हेन-काले—इस समय; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मध्याह्न करिया**—दोपहर का नियत कर्म समाप्त करके; **एकले**—अकेले; **आइल**—आये; **ताँर**—सार्वभौम भट्टाचार्य का; **हृदय**—हृदय; **जानिया**—जानकर।

अनुवाद

जब सारी वस्तुएँ तैयार हो गईं, तो श्री चैतन्य महाप्रभु दोपहर का कार्य समाप्त करने के बाद वहाँ अकेले ही आये। वे सार्वभौम भट्टाचार्य के हृदय की बात जानते थे।

ভট্টাচার্য কৈল তবে পাদ প্রক্ষালন ।
ঘরের ভিতরে গেলা করিতে ভোজন ॥২২৩॥

भट्टाचार्य्य कैल तबे पाद प्रक्षालन ।
घरेर भितरे गेला करिते भोजन ॥ २२३ ॥

भट्टाचार्य्य—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **कैल**—किया; **तबे**—उसके पश्चात्; **पाद प्रक्षालन**—चरणों को धोकर; **घरेर भितरे**—कमरे के भीतर; **गेला**—प्रविष्ट हुए; **करिते भोजन**—भोजन करने के लिए।

अनुवाद

जब सार्वभौम भट्टाचार्य महाप्रभु के पाँव धो चुके, तो महाप्रभु दोपहर का भोजन करने कमरे में प्रविष्ट हुए।

অন্নাদি দেখিয়া প্রভু বিস্মিত হঞা ।
ভট্টাচার্যে কহে কিছু ভঙ্গি করিয়া ॥২২৪॥

अन्नादि देखिया प्रभु विस्मित हञा ।
भट्टाचार्य्ये कहे किछु भङ्गि करिया ॥ २२४ ॥

अन्न-आदि देखिया—अन्न की व्यवस्था देखकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **विस्मित हञा**—चकित होकर; **भट्टाचार्य्ये कहे**—भट्टाचार्य को कहा; **किछु**—कुछ; **भङ्गि**—संकेत; **करिया**—करके।

अनुवाद

इतना बृहत आयोजन देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु कुछ विस्मित थे, अतः वे कुछ संकेत करके सार्वभौम भट्टाचार्य से कुछ बोले।

अलौकिक एই সব অন্ন-ব্যঞ্জন ।
দুই প্রহর ভিতরে কৈছে হইল রন্ধন? ॥২২৫॥

অলৌকিক এই সব অন্ন-ব্যঞ্জন ।
দুই প্রহর ভিতরে কৈছে হইল রন্ধন? ॥ ২২৫ ॥

अलौकिक—असामान्य; **एइ**—यह; **सब**—सब; **अन्न-व्यञ्जन**—भात एवं सब्जियाँ; **दुइ प्रहर भितरे**—छः घण्टे के भीतर; **कैछे**—कैसे; **हइल रन्धन**—पकाने का काम समाप्त किया गया।

अनुवाद

"यह अत्यन्त असामान्य है! चावल तथा तरकारियों को छह घंटे के भीतर किस तरह पका लिया गया?

শত চুলায় শত জন পাক যদি করে ।
তবু শীঘ্র এত দ্রব্য রান্ধিতে না পারে ॥২২৬॥

শত চুলায় শত জন পাক যদি করে ।
তবু শীঘ্র এত দ্রব্য রান্ধিতে না পারে ॥ ২২৬ ॥

शत चुलाय—एक सौ चूल्हों पर; **शत जन**—एक सौ लोग; **पाक यदि करे**—यदि पकाने लगे; **तबु**—फिर भी; **शीघ्र**—इतनी जल्दी; **एत द्रव्य**—इतने व्यंजन; **रान्धिते ना पारे**—नहीं पकाए जा सकते।

अनुवाद

"यदि सौ आदमी सौ चूल्हों में भोजन पकाते, तो भी इतने सारे व्यंजनों को इतने कम समय में न बना पाते।

কৃষ্ণের ভোগ লাগাঞাছ,—অনুমান করি ।
উপরে দেখিয়ে যাতে তুলসী-মঞ্জরী ॥২২৭॥

कृष्णेर भोग लागाञाछ,——अनुमान करि ।
उपरे देखिये ग्राते तुलसी-मञ्जरी ॥ २२७॥

कृष्णेर भोग लागाञाछ—आपने कृष्ण को भोग लगा दिया है; **अनुमान करि**—मैं आशा करता हूँ; **उपरे**—भोजन के ऊपर; **देखिये**—मैं देखता हूँ; **ग्राते**—क्योंकि; **तुलसी-मञ्जरी**—तुलसी के फूल।

अनुवाद

"मेरा अनुमान है कि कृष्ण को पहले ही भोजन अर्पित किया जा चुका है, क्योंकि थालों के ऊपर मुझे तुलसी मंजरियाँ दिखती हैं।

ভাগ্যবান্তুমি, সফল তোমার উদ্যোগ ।
রাধা-কৃষ্ণে লাগাঞাছ এতাদৃশ ভোগ ॥২২৮॥

भाग्यवान्तुमि, सफल तोमार उद्योग ।
राधा-कृष्णे लागाञाछ एताद्दश भोग ॥ २२८॥

भाग्यवान् तुमि—आप भाग्यशाली हैं; **स-फल**—सफल; **तोमार**—आपको; **उद्योग**—प्रयास; **राधा-कृष्णे**—राधा और कृष्ण को; **लागाञाछ**—लगाया है; **एताद्दश**—ऐसा; **भोग**—भोग।

अनुवाद

"आप अत्यन्त भाग्यवान हैं और आपका परिश्रम सफल है, क्योंकि आपने राधा-कृष्ण को इतना अद्भुत भोजन प्रदान किया है।

অন্নের সৌরভ্য, বর্ণ——অতি মনোরম ।
রাধা-কৃষ্ণ সাক্ষাতিহাঁ করিয়াছেন ভোজন ॥২২৯॥

अन्नेर सौरभ्य, वर्ण——अति मनोरम ।
राधा-कृष्ण साक्षातिहाँ करियाछेन भोजन ॥ २२९॥

अन्नेर सौरभ्य—पके भात की सुगन्धि; **वर्ण**—रंग; **अति मनोरम**—अत्यन्त आकर्षक; **राधा-कृष्ण**—राधा और कृष्ण; **साक्षात्**—साक्षात्; **इहाँ**—यह सब; **करियाछेन भोजन**—भोजन कर लिया है।

अनुवाद

"चावल का रंग इतना आकर्षक है और इसकी सुगन्ध इतनी उत्तम है, मानो राधा तथा कृष्ण ने साक्षात् इसे ग्रहण किया है।

তোমার বহুত ভাগ্য কত প্রশংসিব ।
আমি—ভাগ্যবান্, ইহার অবশেষ পাব ॥২৩০॥

তোমার বহুত ভাগ্য কত প্রশংসিব ।
আমি—ভাগ্যবান্, ইহার অবশেষ পাব ॥ ২৩০ ॥

তোমার—आपका; **বহুত**—बहुत; **ভাগ্য**—सौभाग्य; **কত**—कितनी; **প্রশংসিব**—प्रशंसा करूँ; **আমি**—मैं; **ভাগ্যবান্**—भाग्यशाली; **ইহার**—इसके; **অবশেষ**—अवशेष; **পাব**—पाऊँगा।

अनुवाद

"हे प्रिय भट्टाचार्य, आप बड़े भाग्यशाली हो। मैं आपकी कितनी प्रशंसा करूँ? मैं भी अत्यन्त भाग्यशाली हूँ कि इस भोजन का अवशिष्ट ग्रहण कर रहा हूँ।

কৃষ্ণের আসন-পীঠ রাখহ উঠাঞা ।
মোরে প্রসাদ দেহ' ভিন্ন পাত্রেতে করিয়া ॥২৩১॥

কৃষ্ণের আসন-পীঠ রাখহ উঠাঞা ।
মোরে প্রসাদ দেহ' ভিন্ন পাত্রেতে করিয়া ॥ ২৩১ ॥

কৃষ্ণের—भगवान् कृष्ण के; **আসন-পীঠ**—बैठने का स्थान; **রাখহ**—अलग रखो; **উঠাঞা**—उठाकर; **মোরে**—मुझे; **প্রসাদ**—प्रसाद; **দেহ'**—दो; **ভিন্ন**—भिन्न; **পাত্রেতে**—पत्तल में; **করিয়া**—परोसकर।

अनुवाद

"कृष्ण का आसन उठाकर एक ओर रख दो; तब मुझे एक अलग पत्तल में प्रसाद दो।"

ভট্টাচার্য বলে—প্রভু না করহ বিস্ময় ।
যেই খাবে, তাঁহার শক্ত্যে ভোগ সিদ্ধ হয় ॥২৩২॥

ভট্টাচার্য্য বলে—প্রভু না করহ বিস্ময় ।
যেই খাবে, তাঁহার শক্ত্যে ভোগ সিদ্ধ হয় ॥ ২৩২ ॥

ভট্টাচার্য্য বলে—भट्टाचार्य ने कहा; **প্রভু**—मेरे प्रभु; **না করহ বিস্ময়**—आप चकित न

हों; **येइ खाबे**—जो कोई खाएगा; **ताँहार शक्त्ये**—उनकी कृपा से; **भोग**—भोग; **सिद्ध हय**—बनाया गया है।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "हे प्रभु, यह उतना आश्चर्यजनक नहीं है। यह सब उनकी शक्ति तथा दया से ही सम्भव हो सका है, जिन्हें यह भोजन करना है।

उद्योग ना छिल मोर गृहिणीर रन्धने ।
याँर शक्त्ये भोग सिद्ध, सेइ ताहा जाने ॥२३३॥

उद्योग ना छिल मोर गृहिणीर रन्धने ।
याँर शक्त्ये भोग सिद्ध, सेइ ताहा जाने ॥ २३३॥

उद्योग—परिश्रम; **ना छिल**—नहीं किया; **मोर**—मेरी; **गृहिणीर**—मेरी पत्नी का; **रन्धने**—पकाने में; **याँर शक्त्ये**—जिनकी शक्ति से; **भोग सिद्ध**—भोजन पकाया गया है; **सेइ**—वे; **ताहा जाने**—इसे जानते हैं।

अनुवाद

"मेरी पत्नी तथा मैंने भोजन बनाने में कोई विशेष प्रयास नहीं किया। जिनकी शक्ति से यह भोजन तैयार हुआ है, वे सब कुछ जानते हैं।

एइत आसने वसि' करह भोजन ।
प्रभु कहे,—पूज्य एई कृष्णेर आसन ॥२३४॥

एइत आसने वसि' करह भोजन ।
प्रभु कहे,—पूज्य एइ कृष्णेर आसन ॥ २३४॥

एइत आसने—इसी आसन पर; **वसि'**—बैठकर; **करह भोजन**—आप भोजन करें; **प्रभु कहे**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **पूज्य**—पूज्य; **एइ**—यह; **कृष्णेर आसन**—कृष्ण का आसन।

अनुवाद

"अब कृपा करके इस स्थान पर बैठें और भोजन करें।" चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "यह स्थान पूजनीय है, क्योंकि इसका उपयोग कृष्ण द्वारा हो चुका है।"

तात्पर्य

शिष्टाचार के अनुसार जो वस्तुएँ कृष्ण द्वारा उपयोग में लाई गई होती हैं, उनका उपयोग अन्य किसी द्वारा नहीं किया जाना चाहिए। इसी तरह गुरु द्वारा उपयोग में लाई गई वस्तुओं का भी अन्य द्वारा उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। यह शिष्टाचार है। कृष्ण या गुरु द्वारा उपयोग में लाई गई वस्तुएँ पूज्य हैं। विशेषतया उनके बैठने या भोजन करने के स्थान का प्रयोग अन्य किसी द्वारा नहीं किया जाना चाहिए। भक्त को चाहिए कि सावधानी से इसका पालन करे।

ভট্ট কহে,—অন্ন, পীঠ,—সমান প্রসাদ ।
অন্ন খাবে, পীঠে বসিতে কাহাঁ অপরাধ? ॥২৩৫॥

भट्ट कहे,—अन्न, पीठ,—समान प्रसाद ।
अन्न खाबे, पीठे वसिते काहाँ अपराध? ॥ २३५॥

भट्ट कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **अन्न**—अन्न; **भोजन**; **पीठ**—आसन के; **समान**—समान; **प्रसाद**—भगवान् का प्रसाद; **अन्न खाबे**—आप भोजन करेंगे; **पीठे वसिते**—उस आसन पर बैठने में; **काहाँ अपराध**—अपराध कहाँ है ?

अनुवाद

भट्टाचार्य ने कहा, "भोजन तथा बैठने का स्थान—दोनों ही भगवान् की कृपा के तुल्य हैं। यदि आप उच्छिष्ट भोजन कर सकते हैं, तो इस स्थान पर आपके बैठने में कौन-सा अपराध है?"

প্রভু কহে,—ভাল কৈলে, শাস্ত্র-আজ্ঞা হয় ।
কৃষ্ণের সকল শেষ ভৃত্য আস্বাদয় ॥২৩৬॥

प्रभु कहे,—भाल कैले, शास्त्र-आज्ञा हय ।
कृष्णेर सकल शेष भृत्य आस्वादय ॥ २३६॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **भाल कैले**—आपने ठीक कहा है; **शास्त्र-आज्ञा हय**—शास्त्रों का आदेश है; **कृष्णेर सकल शेष**—कृष्ण द्वारा छोड़ा हुआ सब कुछ; **भृत्य**—सेवक; **आस्वादय**—ले सकता है।

अनुवाद

तब चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "हाँ, आपने ठीक कहा है। शास्त्रों का

आदेश है कि भक्त कृष्ण द्वारा छोड़ी गई किसी भी वस्तु का आस्वादन कर सकता है।

त्वयोपयुक्त-स्रग्गन्ध-वासोऽलङ्कार-चर्चिताः ।
उच्छिष्ट-भोजिनो दासास्तव मायां जयेम हि ॥ २३७॥

त्वयोपयुक्त-स्रग्गन्ध-वासोऽलङ्कार-चर्चिताः ।
उच्छिष्ट-भोजिनो दासास्तव मायां जयेम हि ॥ २३७॥

त्वया—आप द्वारा; **उपयुक्त**—उपयोग में लाई गईं; **स्रक्**—फूलों की मालाएँ; **गन्ध**—चन्दन लेप जैसे सुगन्धित पदार्थ; **वासः**—वस्त्र; **अलङ्कार**—आभूषण; **चर्चिताः**—से सजाए गये; **उच्छिष्ट**—उच्छिष्ट भोजन (प्रसादी); **भोजिनः**—खाने से; **दासाः**—सेवक गण; **तव**—आपकी; **मायाम्**—माया को; **जयेम**—जीत सकते हैं; **हि**—निश्चय ही।

अनुवाद

"'हे प्रभु, आपको अर्पित की गईं मालाएँ, सुगन्धित पदार्थ, वस्त्र, गहने तथा अन्य वस्तुएँ बाद में आपके सेवकों द्वारा काम में लाई जा सकती हैं। इन वस्तुओं को ग्रहण करने तथा आपका उच्छिष्ट भोजन खाने से हम माया को जीत सकेंगे।'"

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (११.६.४६) का है। हरे कृष्ण आन्दोलन में हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन, भावावेश में नाचना तथा भगवान् को भोग लगाए गये भोजन का आस्वादन करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। कोई भले ही निरक्षर अथवा सिद्धान्त समझने में असमर्थ क्यों न हो, किन्तु यदि वह ये तीनों बातें करता है, तो निश्चित रूप से बिना किसी देरी के वह मुक्त हो जाता है।

यह श्लोक उद्धव ने भगवान् कृष्ण से कहा था। यह *उद्धव गीता* प्रवचन के समय की बात है। उस समय द्वारका में कुछ उत्पात हुआ था, जिससे भगवान् कृष्ण ने इस भौतिक जगत् छोड़कर वैकुण्ठ जाने का निर्णय किया। उद्धव इस परिस्थिति को समझ गये थे और वे पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् से बातें कर रहे थे। उपर्युक्त श्लोक इसी बातचीत का एक अंश है। इस जगत् में कृष्ण की लीलाएँ *प्रकट लीलाएँ* कहलाती हैं और वैकुण्ठ लोक में उनकी लीलाएँ

अप्रकट लीलाएँ कहलाती हैं। "अप्रकट" से हमारा अभिप्राय यह है कि वे हमारी आँखों के समक्ष प्रकट नहीं होती हैं। ऐसा नहीं है कि भगवान् की लीलाओं का अस्तित्व नहीं होता। जिस तरह सूर्य निरन्तर प्रकाशित होता रहता है, उसी तरह ये लीलाएँ भी निरन्तर चलती रहती हैं, किन्तु जब सूर्य हमारी आँखों के सामने होता है, तो हम दिन (प्रकट) कहते हैं और जब सामने नहीं होता, तो रात (अप्रकट) कहते हैं। जो लोग रात की सीमाओं से ऊपर हैं, वे सदैव वैकुण्ठ लोक में रहते हैं, जहाँ उनके लिए भगवान् की लीलाएँ निरन्तर प्रकट रहती हैं। *ब्रह्म-संहिता* द्वारा (५.३७-३८) इसकी पुष्टि होती है :

आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभि-
स्ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः।
गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥
प्रेमाञ्जनच्छुरितभक्तिविलोचनेन
सन्तः सदैव हृदयेषु विलोकयन्ति।
यं श्यामसुन्दरमचिन्त्यगुणस्वरूपं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥

"मैं उन आदि भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ, जो अपने धाम गोलोक में राधा के साथ निवास करते हैं, जो उनके आध्यात्मिक स्वरूप के सदृश हैं और साक्षात् ह्लादिनी शक्ति हैं। उनकी संगिनी उनकी सखियाँ हैं, जो साक्षात् उनके शरीरस्वरूप हैं और सदैव आनन्दमय आध्यात्मिक रस से ओतप्रोत रहती हैं। मैं उन आदि भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ, जो श्यामसुन्दर हैं—अचिन्त्य असंख्य गुणों से युक्त साक्षात् कृष्ण हैं, जिनका दर्शन शुद्ध भक्तगण अपनी आँखों में प्रेम का अंजन लगाकर अपने-अपने हृदयों के भीतर करते हैं।"

তথাপি এতেক অন্ন খাওন না যায় ।
ভট্ট কহে,—জানি, খাও যতেক যুয়ায় ॥২৩৮॥

तथापि एतेक अन्न खाओन ना ग्राय ।
भट्ट कहे,—जानि, खाओ ग्रतेक ग्रुयाय ॥ २३८॥

तथापि—तथापि; **एतेक**—इतना अधिक; **अन्न**—भोजन; **खाओन**—खाना; **ना य्राय**—सम्भव नहीं है; **भट्ट कहे**—भट्टाचार्य ने कहा; **जानि**—मैं जानता हूँ; **खाओ**—आप खा सकते हो; **य्रतेक**—कितना अधिक; **य्रुयाय**—सम्भव है।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "यहाँ इतना भोजन है कि उसे खा पाना असम्भव है।" भट्टाचार्य ने उत्तर दिया, "मैं जानता हूँ कि आप कितना खा सकते हैं।

नीलाचले भोजन तुमि कर बाय्रान्न बार ।
एक एक भोगेर अन्न शत शत भार ॥२३९॥
नीलाचले भोजन तुमि कर बायान्न बार ।
एक एक भोगेर अन्न शत शत भार ॥ २३९॥

नीलाचले—जगन्नाथ पुरी में; **भोजन**—भोजन ग्रहण; **तुमि**—आप; **कर**—करते हो; **बायान्न बार**—बावन बार; **एक एक भोगेर**—प्रत्येक भोग का; **अन्न**—पकवान; **शत शत भार**—सैंकड़ों बाल्टियाँ।

अनुवाद

"जगन्नाथ पुरी में दिन-भर में आप कम-से-कम ५२ बार भोजन करते हैं और एक-एक बार में आप प्रसाद से भरी सैंकड़ों बाल्टियाँ ग्रहण करते हैं।

द्वारकाते षोल-सहस्र महिषी-मन्दिरे ।
अष्टादश माता, आर यादवेर घरे ॥२४०॥
द्वारकाते षोल-सहस्र महिषी-मन्दिरे ।
अष्टादश माता, आर य्रादवेर घरे ॥ २४०॥

द्वारकाते—द्वारका धाम में; **षोल-सहस्र**—सोलह हजार; **महिषी**—रानियाँ; **मन्दिरे**—महलों में; **अष्टादश माता**—अठारह माताएँ; **आर**—और; **य्रादवेर घरे**—यदु कुल के घर में।

अनुवाद

"द्वारका में आपके सोलह हजार महलों में सोलह हजार रानियाँ हैं। वहाँ अठारह माताएँ, अनेक मित्र तथा यदुवंश के अनेक सम्बन्धी भी हैं।

ব্রজে জ্যেঠা, খুড়া, মামা, পিসাদি গোপ-গণ ।
সখা-বৃন্দ সবার ঘরে দ্বিসন্ধ্যা-ভোজন ॥ ২৪১ ॥

व्रजे ज्येठा, खुड़ा, मामा, पिसादि गोप-गण ।
सखा-वृन्द सबार घरे द्विसन्ध्या-भोजन ॥ २४१ ॥

व्रजे—वृन्दावन में; **ज्येठा**—पिता के बड़े भाई; **खुड़ा**—पिताजी के छोटे भाई; **मामा**—माताजी के भाई; **पिसा**—मौसियों के पति; **आदि**—आदि; **गोप-गण**—गोप-गण; **सखा-वृन्द**—सैंकड़ों सखा-मित्र; **सबार**—उन सबके; **घरे**—घरों में; **द्वि-सन्ध्या**—दिन में दो बार; **भोजन**—भोजन।

अनुवाद

"वृन्दावन में भी आपके ताऊ, चाचा, मामा, फूफा तथा अनेक ग्वाले हैं। वहाँ गोप-मित्र भी हैं और आप उन सबके घरों में प्रातः और सांयकाल दो बार भोजन करते हैं।

तात्पर्य

द्वारका में भगवान् कृष्ण की अठारह माताएँ थीं—यथा देवकी, रोहिणी आदि। इसके अतिरिक्त वृन्दावन में उनकी पालक माता यशोदा थीं। भगवान् कृष्ण के दो चाचा भी थे, जो नन्द महाराज के भाई थे। जैसाकि *बृहत् श्री श्री-राधा-कृष्णगणोद्देश दीपिका* (३२) में श्रील रूप गोस्वामी ने कहा है—*उपनन्दोऽभिनन्दश्च पितृव्यौ पूर्वजौ पितुः*—"नन्द महाराज के ज्येष्ठ भाई उपनन्द तथा अभिनन्द थे।" इसी तरह उसी श्लोक में नन्द महाराज के छोटे भाइयों के भी नाम दिये हुए हैं। *पितृव्यौ तु कनीयांसौ स्यातां सन्नन्द-नन्दनौ*—"सन्नन्द तथा नन्दन (अथवा सुनन्द और पाण्डव) कृष्ण के पिता नन्द महाराज के छोटे भाई थे।" इस पुस्तक में श्रीकृष्ण के मामाओं के नामों का भी वर्णन मिलता है (श्लोक ४६) : *यशोधर-यशोदेवसुदेवाद्यास्तु मातुलाः*—"यशोधर, यशोदेव तथा सुदेव—ये कृष्ण के मामा थे।" *"राधा-कृष्णगणोद्देश दीपिका* (३८)में कृष्ण के फूफाओं के भी नामों का उल्लेख हुआ है, जो नन्द महाराज की बहिनों के पति थे—*महानीलः सुनीलश्च रमणावेतयोः क्रमात्*—महानील तथा सुनील कृष्ण के फूफा थे।"

গোবর্ধন-যজ্ঞে অন্ন খাইলা রাশি রাশি ।
তার লেখায় এই অন্ন নহে এক গ্রাসী ॥২৪২॥

गोवर्धन-यज्ञे अन्न खाइला राशि राशि ।
तार लेखाय एइ अन्न नहे एक ग्रासी ॥ २४२ ॥

गोवर्धन-यज्ञे—गोवर्धन पूजा उत्सव में; **अन्न**—अन्न; **खाइला**—आपने खाया; **राशि राशि**—ढेरों; **तार**—उसकी; **लेखाय**—तुलना में; **एइ**—यह; **अन्न**—भोजन; **नहे**—नहीं; **एक ग्रासी**—एक ग्रास भी।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "आपने गोवर्धन पूजा के अवसर पर जितने ढेरों चावल खाया था, उसकी तुलना में यह अल्पमात्र एक कौर भी नहीं है।

তুমি ত' ঈশ্বর, মুঞি——ক্ষুদ্র জীব ছার ।
এক-গ্রাস মাধুকরী করহ অঙ্গীকার ॥২৪৩॥

तुमि त' ईश्वर, मुञि——क्षुद्र जीव छार ।
एक-ग्रास माधुकरी करह अङ्गीकार ॥ २४३ ॥

तुमि—आप; **त'**—निस्सन्देह; **ईश्वर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **मुञि**—मैं; **क्षुद्र जीव**—एक तुच्छ जीव; **छार**—बेकार; **एक-ग्रास**—एक ग्रास; **माधु-करी**—जैसे मधु-मक्खियाँ इकट्ठा करती हैं; **करह**—कृपया करो; **अङ्गीकार**—स्वीकार।

अनुवाद

"कहाँ आप पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्, और कहाँ मैं एक क्षुद्रतम जीव! अतएव आप मेरे घर में अल्प मात्रा में भोजन ग्रहण कीजिए।"

तात्पर्य

संन्यासी से आशा की जाती है कि वह प्रत्येक गृहस्थ के यहाँ से थोड़ा-थोड़ा भोजन संग्रह करे अर्थात् उसे खाने के लिए जितना चाहिए उतना ही ले। यह प्रथा *माधुकरी* कहलाती है। *माधुकरी* शब्द *माधुकर* से बना है, जिसका अर्थ है "मधु संग्रह करने वाली मक्खी।" मक्खियाँ हर फूल से थोड़ा-थोड़ा मधु एकत्र करती हैं और यह मधु एकत्र होकर छत्ता बन जाता है। संन्यासियों को चाहिए कि हर गृहस्थ के यहाँ से थोड़ा-थोड़ा लें और उतना ही खाएँ,

जिससे शरीर का पोषण हो सके। संन्यासी होने के कारण श्री चैतन्य महाप्रभु सार्वभौम भट्टाचार्य के घर से थोड़ा भोजन ले सकते थे और भट्टाचार्य यही अनुनय-विनय कर रहे थे। अन्य अवसरों पर महाप्रभु ने जितना भोजन किया था, उसकी तुलना में भट्टाचार्य का भोजन एक कौर भी नहीं था। भट्टाचार्य यही बात महाप्रभु से कहना चाह रहे थे।

এত শুনি' হাসি' প্রভু বসিলা ভোজনে ।
জগন্নাথের প্রসাদ ভট্ট দেন হর্ষ-মনে ॥২৪৪॥

एत शुनि' हासि' प्रभु वसिला भोजने ।
जगन्नाथेर प्रसाद भट्ट देन हर्ष-मने ॥ २४४॥

एत शुनि'—यह सुनकर; **हासि'**—मुस्कुराकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **वसिला भोजने**—भोजन करने बैठ गये; **जगन्नाथेर**—भगवान् जगन्नाथ का; **प्रसाद**—प्रसाद; **भट्ट**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **देन हर्ष-मने**—अति प्रसन्न होकर दिया।

अनुवाद

यह सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु हँसने लगे और खाने के लिए बैठ गये। भट्टाचार्य ने अति प्रसन्न होकर सबसे पहले उन्हें जगन्नाथजी का प्रसाद दिया।

হেন-কালে 'অমোঘ,'—ভট্টাচার্যের জামাতা ।
কুলীন, নিন্দক তেঁহো ষাঠী-কন্যার ভর্তা ॥২৪৫॥

हेन-काले 'अमोघ,'—भट्टाचार्य्येर जामाता ।
कुलीन, निन्दक तेंहो षाठी-कन्यार भर्ता ॥ २४५॥

हेन-काले—ठीक उसी समय; **अमोघ**—अमोघ; **भट्टाचार्य्येर जामाता**—भट्टाचार्य का दामाद; **कुलीन**—कुलीन वंश में जन्मा; **निन्दक**—निन्दक; **तेंहो**—वह; **षाठी-कन्यार भर्ता**—सार्वभौम भट्टाचार्य की पुत्री षाठी का पति।

अनुवाद

उसी समय भट्टाचार्य की पुत्री षाठी का पति अर्थात् उनका जामाता अमोघ आया। यद्यपि वह उच्च ब्राह्मण कुल में जन्मा था, किन्तु वह निन्दक था।

ভোজন দেখিতে চাহে, আসিতে না পারে ।
লাঠি-হাতে ভট্টাচার্য আছেন দুয়ারে ॥২৪৬॥

भोजन देखिते चाहे, आसिते ना पारे ।
लाठि-हाते भट्टाचार्य्य आछेन दुयारे ॥ २४६ ॥

भोजन—भोजन; **देखिते चाहे**—वह देखना चाहता था; **आसिते ना पारे**—न आ सका; **लाठि-हाते**—हाथ में छड़ी लेकर; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **आछेन**—थे; **दुयारे**—द्वार पर।

अनुवाद

अमोघ चाहता था कि महाप्रभु को भोजन करते देखे, किन्तु उसे अन्दर जाने नहीं दिया गया। भट्टाचार्य दरवाजे पर लाठी लेकर अपने घर की रखवाली करते रहे।

তেঁহো যদি প্রসাদ দিতে হৈলা আন-মন ।
অমোঘ আসি' অন্ন দেখি' করয়ে নিন্দন ॥২৪৭॥

तेंहो यदि प्रसाद दिते हैला आन-मन ।
अमोघ आसि' अन्न देखि' करये निन्दन ॥ २४७॥

तेंहो—वे (भट्टाचार्य); **यदि**—जब; **प्रसाद दिते**—प्रसाद दे रहे थे; **हैला**—हो गये; **आन-मन**—असावधान; **अमोघ**—अमोघ; **आसि'**—आकर; **अन्न देखि'**—भोजन देखकर; **करये निन्दन**—निन्दा करने लगा।

अनुवाद

किन्तु ज्योंही भट्टाचार्य प्रसाद वितरण करने लगे और थोड़े असावधान हुए, त्योंही अमोघ भीतर आ गया। भोजन की मात्रा देखकर वह निन्दा करने लगा।

এই অন্নে তৃপ্ত হয় দশ বার জন ।
একেলা সন্ন্যাসী করে এতেক ভক্ষণ! ॥২৪৮॥

एइ अन्ने तृप्त हय दश बार जन ।
एकेला सन्न्यासी करे एतेक भक्षण! ॥ २४८ ॥

एइ अन्ने—इतने भोजन के साथ; **तृप्त हय**—सन्तुष्ट हो सकते हैं; **दश बार जन**—कम से कम दस से बारह लोग; **एकेला**—अकेले; **सन्न्यासी**—यह संन्यासी; **करे**—करता है; **एतेक**—इतना; **भक्षण**—भोजन।

अनुवाद

"इतना भोजन तो दस-बारह लोगों को तुष्ट कर सकता है, लेकिन यह संन्यासी तो अकेले ही इतना सारा खा रहा है!"

শুনিতেই ভট্টাচার্য উলটি' চাহিল ।
তাঁর অবধান দেখি' অমোঘ পলাইল ॥২৪৯॥

शुनितेइ भट्टाचार्य्य उलटि' चाहिल ।
ताँर अवधान देखि' अमोघ पलाइल ॥ २४९ ॥

शुनितेइ—सुनकर; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **उलटि' चाहिल**—अपनी दृष्टि उसकी ओर डाली; **ताँर**—उनका; **अवधान**—ध्यान; **देखि'**—देखकर; **अमोघ**—अमोघ; **पलाइल**—भाग गया।

अनुवाद

जब अमोघ ने यह कहा, तो सार्वभौम भट्टाचार्य ने उसकी ओर घूरकर देखा। भट्टाचार्य का रुख देखकर अमोघ तुरन्त भाग गया।

ভট্টাচার্য লাঠি লঞা মারিতে ধাইল ।
পলাইল অমোঘ, তার লাগ না পাইল ॥২৫০॥

भट्टाचार्य्ये लाठि लञा मारिते धाइल ।
पलाइल अमोघ, तार लाग ना पाइल ॥ २५० ॥

भट्टाचार्य्य—सार्वभौम भट्टाचार्य; **लाठि लञा**—लाठी लेकर; **मारिते**—मारने के लिए; **धाइल**—दौड़े; **पलाइल**—भाग गया; **अमोघ**—अमोघ; **तार**—उसको; **लाग ना पाइल**—पकड़ न सके।

अनुवाद

भट्टाचार्य लाठी लिए उसके पीछे-पीछे उसे मारने के लिए दौड़े, किन्तु अमोघ इतनी तेजी से निकल भागा कि भट्टाचार्य उसे पकड़ न पाये।

তবে গালি, শাপ দিতে ভট্টাচার্য আইলা ।
নিন্দা শুনি' মহাপ্রভু হাসিতে লাগিলা ॥২৫১॥

तबे गालि, शाप दिते भट्टाचार्य्य आइला ।
निन्दा शुनि' महाप्रभु हासिते लागिला ॥ २५१ ॥

तबे—उस समय; **गालि**—गाली देते हुए; **शाप दिते**—शाप देते हुए; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **आइला**—लौट आये; **निन्दा शुनि'**—निन्दा सुनकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हासिते लागिला**—हँसने लगे।

अनुवाद

तब भट्टाचार्य अपने दामाद को गाली देने लगे और शाप देने लगे। जब भट्टाचार्य लौटे, तो उन्होंने देखा कि श्री चैतन्य महाप्रभु उनके द्वारा की गई अमोघ की आलोचना सुनकर हँस रहे थे।

শুনি' ষাঠীর মাতা শিরে-বুকে ঘাত মারে ।
'ষাঠী রাণ্ডী হউক'—ইহা বলে বারে বারে ॥২৫২॥

शुनि' षाठीर माता शिरे-बुके घात मारे ।
'षाठी राण्डी हउक'—इहा बले बारे बारे ॥ २५२ ॥

शुनि'—यह सुनकर; **षाठीर माता**—षाठी की माता; **शिरे**—सिर पर; **बुके**—वक्षस्थल पर; **घात मारे**—हाथ मारने लगी; **षाठी राण्डी हउक**—शाठी को विधवा होने दो; **इहा बले**—यह कहने लगी; **बारे बारे**—बारम्बार।

अनुवाद

जब भट्टाचार्य की पत्नी षाठी की माता ने इस घटना को सुनी, तो वह यह कहकर तुरन्त अपना सिर तथा छाती पीटने लगी, "यह षाठी को राँड (विधवा) हो जाने दो!"

দুঁহার দুঃখ দেখি' প্রভু দুঁহা প্রবোধিয়া ।
দুঁহার ইচ্ছাতে ভোজন কৈল তুষ্ট হঞা ॥২৫৩॥

दुँहार दुःख देखि' प्रभु दुँहा प्रबोधिया ।
दुँहार इच्छाते भोजन कैल तुष्ट हञा ॥ २५३ ॥

दुँहार दुःख देखि'—दोनों का दुःख देखकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **दुँहा प्रबोधिया**—दोनों को शान्त करके; **दुँहार इच्छाते**—उन दोनों की मर्जी से; **भोजन कैल**—भोजन किया; **तुष्ट हञा**—पूर्णतया तुष्ट होकर।

अनुवाद

पति-पत्नी दोनों के शोक को देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें सान्त्वना दिलाने का प्रयास किया। महाप्रभु ने उन दोनों की इच्छापूर्ति के लिए प्रसाद ग्रहण किया और वे अत्यन्त तुष्ट हुए।

आचमन कराञा भट्ट दिल मुख-वास ।
तुलसी-मञ्जरी, लवङ्ग, एलाचि रस-वास ॥२५४॥
आचमन कराञा भट्ट दिल मुख-वास ।
तुलसी-मञ्जरी, लवङ्ग, एलाचि रस-वास ॥ २५४॥

आचमन कराञा—मुख, हाथ और पैर धोने के लिए श्री चैतन्य महाप्रभु को जल देकर; **भट्ट**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **दिल मुख-वास**—कुछ सुगन्धित मसाले दिये; **तुलसी-मञ्जरी**—तुलसी के फूल (मंजरी); **लवङ्ग**—लौंग; **एलाचि**—इलायची; **रस-वास**—जिस से लार टपकने लगती है।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु खा चुके, तो भट्टाचार्य ने उनके मुँह, हाथ तथा पाँव धुलाये और उन्हें सुगन्धित मसाले, तुलसी-मंजरियाँ, लवंग तथा इलायची खाने को दी।

सर्वाङ्गे पराइल प्रभुर माल्य-चन्दन ।
दण्डवत् हञा बले सदैन्य वचन ॥२५५॥
सर्वाङ्गे पराइल प्रभुर माल्य-चन्दन ।
दण्डवत् हञा बले सदैन्य वचन ॥ २५५॥

सर्व-अङ्गे—सारे शरीर पर; **पराइल**—लगाया; **प्रभुर**—महाप्रभु के; **माल्य-चन्दन**—फूलों की माला तथा चन्दन का लेप; **दण्डवत् हञा**—दण्डवत् प्रणाम करके; **बले**—कहा; **स-दैन्य**—विनम्रता सहित; **वचन**—शब्द।

अनुवाद

फिर भट्टाचार्य ने श्री चैतन्य महाप्रभु को फूल-माला पहनाई और

उनके शरीर पर चन्दन का लेप किया। नमस्कार करने के बाद भट्टाचार्य ने विनयपूर्वक इस प्रकार निवेदन किया।

নিন্দা করাইতে তোমা আনিনু নিজ-ঘরে ।
এই অপরাধ, প্রভু, ক্ষমা কর মোরে ॥২৫৬॥

निन्दा कराइते तोमा आनिनु निज-घरे ।
एइ अपराध, प्रभु, क्षमा कर मोरे ॥ २५६ ॥

निन्दा कराइते—मात्र निन्दा कराने के लिए; **तोमा**—आपको; **आनिनु**—मैं लाया; **निज-घरे**—अपने घर पर; **एइ अपराध**—यह अपराध; **प्रभु**—मेरे प्रभु; **क्षमा कर**—कृपया क्षमा करें; **मोरे**—मेरा।

अनुवाद

"मैं आपको अपने घर आपकी निन्दा कराने के लिए ही लाया। यह बहुत बड़ा अपराध है। मैं इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।"

প্রভু কহে,—নিন্দা নহে, 'সহজ' কহিল ।
ইহাতে তোমার কিবা অপরাধ হৈল? ॥২৫৭॥

प्रभु कहे,—निन्दा नहे, 'सहज' कहिल ।
इहाते तोमार किबा अपराध हैल? ॥ २५७॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **निन्दा नहे**—निन्दा नहीं; **सहज**—ठीक; **कहिल**—उसने कहा; **इहाते**—इसमें; **तोमार**—आपका; **किबा**—क्या; **अपराध**—अपराध; **हैल**—था।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "अमोघ ने जो कुछ कहा है, वह सही है, अतएव यह निन्दा नहीं है। इसमें आपका क्या अपराध है?"

এত বলি' মহাপ্রভু চলিলা ভবনে ।
ভট্টাচার্য তাঁর ঘরে গেলা তাঁর সনে ॥২৫৮॥

एत बलि' महाप्रभु चलिला भवने ।
भट्टाचार्य्य ताँर घरे गेला ताँर सने ॥ २५८॥

एत बलि'—यह कहकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **चलिला भवने**—अपने निवासस्थान पर लौट गये; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **ताँर घरे**—उनके घर; **गेला**—गये; **ताँर सने**—उनके साथ।

अनुवाद

यह कहकर श्री चैतन्य महाप्रभु वहाँ से चलकर अपने घर वापस आये। सार्वभौम भट्टाचार्य भी उनके साथ-साथ गये।

प्रभु-पदे पड़ि' बहु आत्म-निन्दा कैल ।
ताँरे शान्त करि' प्रभु घरे पाठाइल ॥ २५९॥

प्रभु-पदे पड़ि' बहु आत्म-निन्दा कैल ।
ताँरे शान्त करि' प्रभु घरे पाठाइल ॥ २५९॥

प्रभु-पदे—श्री चैतन्य महाप्रभु के पाँव में; **पड़ि'**—गिरकर; **बहु**—बहुत; **आत्म-निन्दा कैल**—अपनी निन्दा की; **ताँरे**—उनको; **शान्त करि'**—शान्त करके; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **घरे पाठाइल**—घर वापस भेज दिया।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने महाप्रभु के चरणों पर गिरकर आत्म-निन्दा में अनेक बातें कहीं। तब महाप्रभु ने उन्हें शान्त किया और उन्हें घर वापस भेज दिया।

घरे आसि' भट्टाचार्य षाठीर माता-सने ।
आपना निन्दिया किछु बलेन वचने ॥ २६०॥

घरे आसि' भट्टाचार्य्य षाठीर माता-सने ।
आपना निन्दिया किछु बलेन वचने ॥ २६०॥

घरे आसि'—घर लौटकर; **भट्टाचार्य्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **षाठीर माता-सने**—षाठी की माता के साथ; **आपना निन्दिया**—अपने आपको कोसते हुए; **किछु**—कुछ; **बलेन वचने**—शब्द कहे।

अनुवाद

अपने घर लौटकर सार्वभौम भट्टाचार्य ने षाठी की माता से परामर्श किया। फिर अपनी निन्दा करते हुए वे इस प्रकार बोले।

चैतन्य-गोसाञिर निन्दा शुनिल याहा हैते ।
तारे वध कैले हय पाप-प्रायश्चित्ते ॥ २६१ ॥

चैतन्य-गोसाञिर निन्दा शुनिल याहा हैते ।
तारे वध कैले हय पाप-प्रायश्चित्ते ॥ २६१ ॥

चैतन्य-गोसाञिर—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **निन्दा**—निन्दा; **शुनिल**—मैंने सुनी; **याहा हैते**—जिससे; **तारे वध कैले**—उसका यदि वध किया जाए; **हय**—हो जाए; **पाप-प्रायश्चित्ते**—पाप-पूर्ण कर्म का प्रायश्चित्त है।

अनुवाद

"जिस व्यक्ति ने श्री चैतन्य महाप्रभु की निन्दा की, यदि उसका वध कर दिया जाए, तो उससे पापकर्म का प्रायश्चित्त हो सकता है।"

तात्पर्य

वैष्णव की निन्दा के विषय में *स्कन्द पुराण* का निम्नलिखित उद्धरण *हरिभक्ति-विलास* में प्राप्त होता है :

यो हि भागवतं लोकमुपहासं नृपोत्तम।
करोति तस्य नश्यति अर्थधर्मयशः सुताः ॥
निन्दां कुर्वन्ति ये मूढा वैष्णवानां महात्मनाम्।
पतन्ति पितृभिः सार्धं महारौरव संज्ञिते॥
हन्ति निन्दति वै द्वेष्टि वैष्णवान्नाभिनन्दति।
क्रुध्यते याति नो हर्षं दर्शने पतनानि षट्॥

मार्कण्डेय तथा भगीरथ की इस वार्ता में कहा गया है, "हे राजन्, जो महाभागवत का उपहास करता है, उसके पुण्यकर्मों का फल, उसका ऐश्वर्य, उसका यश तथा उसके पुत्र नष्ट हो जाते हैं। सारे वैष्णव महान् आत्मा होते हैं। जो भी उनकी निन्दा करता है, वह महारौरव नामक नरक में जा पड़ता है। उसके साथ उसके पूर्वज भी आते हैं। जो कोई वैष्णव का वध करता है या उसकी निन्दा करता है और जो कोई वैष्णव से ईर्ष्या करता है या उस पर क्रुद्ध होता है अथवा जो कोई वैष्णव को देखकर नमस्कार नहीं करता या हर्ष का अनुभव नहीं करता, वह निश्चित रूप से नरक में गिरता है।"

हरिभक्ति-विलास (१०.३१४) में *द्वारका माहात्म्य* का निम्नलिखित श्लोक प्राप्त होता है :

करपत्रैश्च फाल्यन्ते सुतीव्रैर्यमशासनैः।
निन्दां कुर्वन्ति ये पापा वैष्णवानां महात्मनाम्॥

प्रह्लाद महाराज तथा बलि महाराज की वार्ता में यह कहा गया है, "जो पापी लोग महान् आत्मा ऐसे वैष्णवों की निन्दा करते हैं, उन्हें यमराज अत्यन्त कठोर दण्ड देते हैं।"

भक्ति-सन्दर्भ (३१३) में भगवान् विष्णु की निन्दा करने के विषय में जीव गोस्वामी ने निम्नलिखित कथन दिया है :

ये निन्दन्ति हृषीकेशं तद्भक्तं पुण्यरूपिणम्।
शतजन्मार्जितं पुण्यं तेषां नश्यति निश्चितम्॥
ते पच्यन्ते महाघोरे कुम्भीपाके भयानके।
भक्षिताः कीटसङ्घेन यावच्चन्द्रदिवाकरौ।
श्रीविष्णोरवमाननाद् गुरुतरं श्रीवैष्णवोल्लङ्घनम्॥
तदीयदूषकजनान्न पश्येत् पुरुषाधमान्।
तैः सार्धं वञ्चकजनैः सहवासं न कारयेत्॥

"'जो भगवान् विष्णु तथा उनके भक्तों की निन्दा करता है, वह अपने सौ जन्मों में अर्जित पुण्य को खो देता है। ऐसा व्यक्ति कुम्भीपाक नरक में सड़ता है और जब तक सूर्य तथा चाँद का अस्तित्व रहता है, तब तक कीड़ों द्वारा काटा जाता है। अतएव भगवान् विष्णु तथा उनके भक्तों की निन्दा करने वाले व्यक्ति का मुँह तक नहीं देखना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों का संग करने का कभी भी प्रयास नहीं करना चाहिए।'"

आगे भी जीव गोस्वामी अपने *भक्ति-सन्दर्भ* (२६५) में *श्रीमद्भागवत* (१०.७४.४०) का प्रमाण देते हैं :

निन्दां भगवतः शृण्वंस् तत्परस्य जनस्य वा।
ततो नापैति यः सोऽपि यात्यधः सुकृताच्च्युतः॥

"'यदि भगवान् या भगवान् के भक्त की निन्दा सुनकर मनुष्य वहाँ से तुरन्त हट

नहीं जाता, तो वह अपनी भक्ति से पतित हो जाता है।'" इसी प्रकार शिवजी की पत्नी सती *श्रीमद्भागवत* (४.४.१७) में कहती हैं :

कर्णौपिधाय निरयाद्यदकल्प ईशे
धर्मावितर्यसृणिभिर्नृभिरास्यमाने ।
छिन्द्यात् प्रसह्य रुशतीमसतीं प्रभुश्चे-
ज्जिह्वामसूनपि ततो विसृजेत् स धर्मः ॥

"यदि कोई किसी गैरजिम्मेदार व्यक्ति द्वारा धर्म के स्वामी तथा नियन्ता की निन्दा होते सुनता है, तो उसे चाहिए कि वह अपने कान बन्द कर ले और यदि उसको दण्ड नहीं दे सकता, तो वहाँ से चला जाये। किन्तु यदि वह उसका वध कर सकता हो, तो उसे चाहिए कि बलपूर्वक उसकी जीभ काट ले और अपराध करने वाले को मारने के बाद अपना भी प्राण त्याग दे।"

কিম্বা নিজ-প্রাণ যদি করি বিমোচন ।
দুই যোগ্য নহে, দুই শরীর ব্রাহ্মণ ॥২৬২॥

किम्वा निज-प्राण यदि करि विमोचन ।
दुइ योग्य नहे, दुइ शरीर ब्राह्मण ॥ २६२॥

किम्वा—अथवा; **निज-प्राण**—मैं अपने प्राण; **यदि**—यदि; **करि विमोचन**—त्याग दूँ; **दुइ**—ये दोनों कर्म; **योग्य नहे**—योग्य नहीं; **दुइ शरीर**—दोनों शरीर; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण के हैं।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने आगे कहा, "अथवा यदि मैं अपने प्राण त्याग दूँ, तो इस पापकर्म का प्रायश्चित्त हो सकता है। किन्तु इनमें से दोनों विचार उपयुक्त नहीं हैं, क्योंकि दोनों शरीर ब्राह्मणों के हैं।

পুনঃ সেই নিন্দকের মুখ না দেখিব ।
পরিত্যাগ কৈলুঁ, তার নাম না লইব ॥২৬৩॥

पुनः सेइ निन्दकेर मुख ना देखिब ।
परित्याग कैलुँ, तार नाम ना लइब ॥ २६३॥

पुनः—दोबारा; **सेइ**—उस; **निन्दकेर**—निन्दक का; **मुख**—मुख; **ना**—नहीं; **देखिब**—देखूँगा; **परित्याग**—त्याग; **कैलुँ**—मैं करता हूँ; **तार**—उसका; **नाम**—नाम; **ना**—नहीं; **लइब**—लूँगा।

अनुवाद

"इसके बजाए, मैं उस निन्दक का अब फिर कभी मुँह तक नहीं देखूँगा। मैं उसका परित्याग कर रहा हूँ और उससे सम्बन्ध तोड़ रहा हूँ। अब मैं उसका नाम तक नहीं लूँगा।

ষাঠীরে কহ—তারে ছাড়ুক, সে হইল 'পতিত' ।
'পতিত' হইলে ভর্তা ত্যজিতে উচিত ॥২৬৪॥

षाठीरे कह—तारे छाडुक, से हइल 'पतित' ।
'पतित' हइले भर्ता त्यजिते उचित ॥ २६४॥

षाठीरे कह—षाठी को कह दो; **तारे छाडुक**—उसे छोड़ दे; **से हइल**—वह हो गया है; **पतित**—पतित; **पतित हइले**—जब कोई पतित हो जाता है; **भर्ता**—ऐसे पति को; **त्यजिते**—त्याग देना; **उचित**—कर्तव्य होता है।

अनुवाद

"मेरी पुत्री षाठी से कहो कि वह अपने पति से सम्बन्ध तोड़ ले, क्योंकि वह पतित हो चुका है। जब पति पतित हो जाय, तो पत्नी का कर्तव्य है कि वह उससे सम्बन्ध-विच्छेद कर ले।

तात्पर्य

श्रील सार्वभौम भट्टाचार्य ने विचार किया कि यदि अमोघ को मार डाला जाए, तो ब्राह्मण का वध करने का पापफल भोगना पड़ेगा। उसी कारण से भट्टाचार्य के लिए आत्महत्या भी करना उचित नहीं था, क्योंकि वे भी ब्राह्मण थे। चूँकि इन दोनों में से भट्टाचार्य कुछ भी स्वीकार नहीं कर सकते थे, इसीलिए उन्होंने अमोघ से अपना सम्बन्ध तोड़ देने और उसका मुख कभी न देखने का निश्चय किया।

जहाँ तक ब्राह्मण के शरीर का वध करने की बात है, ब्रह्म-बन्धु जो ब्राह्मण पिता से जन्मा है, किन्तु ब्राह्मण-गुणों से विहीन है, उसके बारे में *श्रीमद्भागवत* (१.७.५३) का निम्नलिखित आदेश है :

श्री भगवान् उवाच
ब्रह्मबन्धुर्न हन्तव्य आततायी वधार्हणः ।

"भगवान् कृष्ण ने कहा, 'ब्रह्म-बन्धु का वध नहीं करना चाहिए, किन्तु यदि वह आततायी है, तो उसका वध अवश्य कर देना चाहिए।'"

श्रील श्रीधर स्वामी ने *श्रीमद्भागवत* के इस श्लोक की टीका करते हुए स्मृति से उद्धरण दिया है :

आततायिनमायान्तमपि वेदान्तपारगम् ।
जिघांसन्तं जिघांसीयान्न तेन ब्रह्महा भवेत् ॥

"'यदि आततायी वेदान्त का बहुत बड़ा विद्वान हो, तो भी अन्यों का वध करने की ईर्ष्या के कारण उसका वध कर देना चाहिए। ऐसी दशा में ब्राह्मण का वध करना पाप नहीं है।'"

श्रीमद्भागवत (१.७.५७) में यह भी कहा गया है :

वपनं द्रविणादानं स्थानान्निर्यापणं तथा ।
एष हि ब्रह्मबन्धूनां वधो नान्योऽस्ति दैहिकः ॥

"ब्रह्म-बन्धु के लिए जिन दण्डों की संस्तुति की गई है वे हैं—सिर के बाल मुंड़ा देना, उसकी सम्पत्ति छीन लेना तथा उसे उसके घर से निकाल देना। उसके शरीर का वध करने के लिए कोई आदेश नहीं है।"

सार्वभौम भट्टाचार्य की पुत्री षाठी के लिए यह सलाह दी गई कि वह अपने पति से अपना सम्बन्ध त्याग दे। इसके विषय में *श्रीमद्भागवत* (५.५.१८) का कहना है—*न पतिश्च स स्यान्न मोचयेद्यः समुपेत मृत्युम्*—"जो अटल मृत्यु से अपने आश्रितों को मोक्ष न दिला सके, वह पति नहीं कहला सकता।" यदि मनुष्य कृष्णभावनाभावित नहीं है और आध्यात्मिक शक्ति से विहीन है, तो वह जन्म-मृत्यु के चक्र से अपनी पत्नी की रक्षा नहीं कर सकता। फलतः ऐसा व्यक्ति पति नहीं माना जा सकता। पत्नी को कृष्णभावनामृत में प्रगति करने के लिए अपना जीवन तथा सर्वस्व कृष्ण को अर्पित कर देना चाहिए। यदि वह कृष्णभावनामृत का परित्याग करने वाले पति से अपना सम्बन्ध तोड़ लेती है, तो वह द्विजपत्नियों, अर्थात् यज्ञ सम्पन्न करने में व्यस्त ब्राह्मणों की पत्नियों के पदचिह्नों का अनुसरण करती है। ऐसी पत्नी की अपने पति से सम्बन्ध-विच्छेद

करने के लिए भर्त्सना नहीं की जानी चाहिए। इस प्रसंग में श्रीकृष्ण ने *श्रीमद्भागवत* (१०.२३.३१-३२) में द्विज-पत्नियों को विश्वास दिलाया है :

पतयो नाभ्यसूयेरन् पितृभ्रातृसुतादयः।
लोकाश्च वो मयोपेता देवा अप्यनुमन्वते॥
न प्रीतयेऽनुरागाय ह्यङ्गसङ्गो नृणामिह।
तन्मनो मयि युञ्जाना अचिरान्मामवाप्स्यथ॥

"मेरी प्रिय द्विजपत्नियों, तुम सब विश्वस्त रहो कि तुम्हारे लौटने पर तुम्हारे पति तुम्हारा तिरस्कार नहीं करेंगे, न ही तुम्हारे भाई, पुत्र अथवा पिता तुम्हें स्वीकार करने से इनकार करेंगे। चूँकि तुम मेरी भक्त हो, अतः न केवल तुम्हारे सम्बन्धी प्रत्युत सामान्यजन तथा देवगण भी तुम से सन्तुष्ट रहेंगे। मेरे लिए दिव्य प्रेम शारीरिक सम्बन्ध पर निर्भर नहीं करता, प्रत्युत जिस किसी का मन मुझ में मग्न है, वह अतिशीघ्र, निश्चित् रूप से मेरे शाश्वत संगी के तौर पर मेरे पास आयेगा।"

पतिं च पतितं त्यजेत् ॥ २६५॥

पतिम्—पति को; **च**—और; **पतितम्**—पतित को; **त्यजेत्**—छोड़ देना चाहिए।

अनुवाद

"'यदि पति पतित हो जाए, तो उससे सम्बन्ध तोड़ लेना चाहिए।'"

तात्पर्य

यह उद्धरण *स्मृति शास्त्र* का है। जैसाकि *श्रीमद्भागवत* (७.११.२८) में कहा गया है :

सन्तुष्टालोलुपा दक्षा धर्मज्ञा प्रियसत्यवाक्।
अप्रमत्ता शुचिः स्निग्धा पतिं त्वपतितं भजेत्॥

"जो पत्नी सन्तुष्ट रहती है, जो लालची नहीं होती, जो दक्ष है और धर्म के सिद्धान्त जानती है, जो प्रिय तथा सत्य भाषण करती है और मोहग्रस्त नहीं होती, जो सदैव स्वच्छ रहती है और स्नेहमयी है, उसे अपने उस पति की आज्ञाकारिणी होना चाहिए जो पतित नहीं है।"

সেই রাত্রে অমোঘ কাহাঁ পলাঞা গেল ।
প্রাতঃ-কালে তার বিসূচিকা-ব্যাধি হৈল ॥২৬৬॥

सेइ रात्रे अमोघ काहाँ पलाञा गेल ।
प्रातः-काले तार विसूचिका-व्याधि हैल ॥ २६६ ॥

सेइ रात्रे—उसी रात; **अमोघ**—सार्वभौम भट्टाचार्य का दामाद, अमोघ; **काहाँ**—कहाँ; **पलाञा गेल**—भाग गया; **प्रातः-काले**—प्रातःकाल; **तार**—उसको; **विसूचिका-व्याधि**—हैजे का संक्रामक रोग; **हैल**—हो गया।

अनुवाद

उस रात को सार्वभौम भट्टाचार्य का दामाद अमोघ भाग गया और प्रातः होते ही वह हैजे से ग्रस्त हो गया।

অমোঘ মরেন—শুনি' কহে ভট্টাচার্য ।
সহায় হইয়া দৈব কৈল মোর কার্য ॥২৬৭॥

अमोघ मरेन—शुनि' कहे भट्टाचार्य्य ।
सहाय हइया दैव कैल मोर कार्य्य ॥ २६७ ॥

अमोघ मरेन—अमोघ मरणासन्न है; **शुनि'**—यह सुनकर; **कहे भट्टाचार्य्य**—भट्टाचार्य ने कहा; **सहाय हइया**—सहायक हो रहा है; **दैव**—भाग्य; **कैल**—किया; **मोर**—मेरा; **कार्य्य**—कर्तव्य।

अनुवाद

जब भट्टाचार्य ने सुना कि अमोघ हैजे से मर रहा है, तो उन्होंने सोचा, "यह दैव की कृपा है कि जो मैं करना चाह रहा हूँ वही हो रहा है।

ঈশ্বরে ত' অপরাধ ফলে তত-ক্ষণ ।
এত বলি' পড়ে দুই শাস্ত্রের বচন ॥২৬৮॥

ईश्वरे त' अपराध फले तत-क्षण ।
एत बलि' पड़े दुइ शास्त्रेर वचन ॥ २६८ ॥

ईश्वरे—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् की; **त'**—निस्सन्देह; **अपराध**—अपराध का; **फले**—फल देता है; **तत-क्षण**—तत्काल; **एत बलि'**—यह कहकर; **पड़े**—पढ़े; **दुइ**—दो; **शास्त्रेर वचन**—शास्त्रों के उद्धरण।

अनुवाद

"जब कोई पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के प्रति अपराध करता है, तो कर्म तुरन्त प्रभाव दिखाता है।" यह कहकर उन्होंने शास्त्रों से दो श्लोक सुनाये।

महता हि प्रयत्नेन हस्त्यश्व-रथ-पत्तिभिः ।
अस्माभिर्यदनुष्ठेयं गन्धर्वैस्तदनुष्ठितम् ॥२६९॥

महता हि प्रयत्नेन हस्त्यश्व-रथ-पत्तिभिः ।
अस्माभिर्य्यदनुष्ठेयं गन्धर्वैस्तदनुष्ठितम् ॥ २६९ ॥

महता—बहुत बड़ा; **हि**—निश्चित रूप से; **प्रयत्नेन**—प्रयास से; **हस्ति**—हाथी; **अश्व**—घोड़े; **रथ**—रथ; **पत्तिभिः**—पैदल सैनिकों से; **अस्माभिः**—हम से; **यत्**—जो कुछ; **अनुष्ठेयम्**—प्रबन्ध करना है; **गन्धर्वैः**—गन्धर्वों से; **तत्**—वह; **अनुष्ठितम्**—कर दिया गया है।

अनुवाद

"'जिस कार्य को हाथी, घोड़े, रथ तथा पैदल सैनिकों को एकत्र करके बड़े ही प्रयत्न के साथ हमें करना पड़ता, उसे गन्धर्वों ने पहले ही सम्पन्न कर लिया है।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *महाभारत* (वनपर्व २४१.१५) का है। जब सारे पाण्डव वनवास कर रहे थे, तब भीमसेन ने यह बात कही थी। उस समय कौरवों तथा गन्धर्वों के बीच लड़ाई हुई थी। कौरव सैनिक कर्ण के सेनापतित्व में लड़ रहे थे, किन्तु गन्धर्वों के सेनापति ने अपनी श्रेष्ठ सैनिक शक्ति के कारण सारे कौरवों को बन्दी बना लिया था। उस समय दुर्योधन के मन्त्रियों तथा सेनापतियों ने महाराज युधिष्ठिर से सहायता करने की प्रार्थना की। इस प्रकार की प्रार्थना सुनने पर भीमसेन ने पाण्डवों के प्रति दुर्योधन के पूर्व नृशंस दुष्कृत्यों का स्मरण करके ये वचन कहे थे। भीमसेन को यह उचित लगा कि दुर्योधन अपनी सेना समेत बन्दी बना लिया गया। इसी को यदि पाण्डवों को करना पड़ता, तो उन्हें काफी प्रयत्न करना पड़ता।

आयुः श्रियं यशो धर्मं लोकानाशिष एव च ।
हन्ति श्रेयांसि सर्वाणि पुंसो महदतिक्रमः ॥२७०॥

आयुः श्रियं यशो धर्मं लोकानाशिष एव च ।
हन्ति श्रेयांसि सर्वाणि पुंसो महदतिक्रमः ॥ २७० ॥

आयुः—जीवन की अवधि; **श्रियम्**—ऐश्वर्य; **यशः**—यश; **धर्मम्**—धर्म; **लोकान्**—सम्पत्ति; **आशिषः**—सौभाग्य; **एव**—निश्चय ही; **च**—तथा; **हन्ति**—नाश करता है; **श्रेयांसि**—सौभाग्य; **सर्वाणि**—सब; **पुंसः**—मनुष्य के; **महत्**—महान् आत्माओं के; **अतिक्रमः**—उल्लंघन से।

अनुवाद

"'जब कोई व्यक्ति किसी महापुरुषों के साथ दुर्व्यवहार करता है, तो उसकी आयु, ऐश्वर्य, कीर्ति, धर्म, धन तथा सौभाग्य सभी नष्ट हो जाते हैं।'

तात्पर्य

यह महाराज परीक्षित से शुकदेव गोस्वामी का कथन है (श्रीमद्भागवत १०.४.४६)। इसमें कृष्ण की बहन (योगमाया) को मारने के प्रयास का वर्णन है, जो कृष्ण-जन्म से पूर्व माता यशोदा की पुत्री के रूप में पैदा हुई थी। योगमाया तथा कृष्ण एक समय पैदा हुए थे। वसुदेव योगमाया को ले आये और उसके स्थान पर कृष्ण को रख आये थे। जब वह मथुरा लाई गई और कंस ने उसे मारने का प्रयास किया, तब वह उसके हाथ से छूट गई और उसका वध नहीं हो पाया। तब उसने कंस को बतलाया कि उसके शत्रु कृष्ण का जन्म हो चुका है। इस पर कंस बौखला गया और उसने अपने असुर संगियों से परामर्श किया। जब यह बड़ा षड्यन्त्र चल रहा था, तब शुकदेव गोस्वामी ने यह श्लोक कहा। वे इँगित करते हैं कि असुर अपने दुष्कर्मों के कारण अपना सर्वस्व खो देता है।

महद्-अतिक्रम शब्द का अर्थ है, "भगवान् विष्णु तथा उनके भक्तों से ईर्ष्या।" यह शब्द महत्त्वपूर्ण है। *महत्* शब्द महापुरुष का सूचक है, जो भक्त हो सकता है या स्वयं भगवान् हो सकते हैं। भगवान् की सेवा में निरन्तर लगे रहने के कारण भक्तगण भगवान् के ही तुल्य महान् बन जाते हैं। *भगवद्गीता* (९.१३) में भी भगवान् कृष्ण ने *महत्* शब्द की व्याख्या की है :

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥

"हे पृथा-पुत्र, जो मोहग्रस्त नहीं हैं, ऐसे महापुरुष दैवी प्रकृति के संरक्षण में रहते हैं। वे निरन्तर भक्ति में लगे रहते हैं, क्योंकि वे मुझे आदि अव्यय पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में जानते हैं।"

भगवान् तथा उनके भक्तों से ईर्ष्या करना असुर के लिए शुभ नहीं है। ऐसी ईर्ष्या से वह अपना सर्वस्व, जो उसके लिए हितकारक समझा जाता है, खो देता है।

গোপীনাথাচার্য গেলা প্রভু-দরশনে ।
প্রভু তাঁরে পুছিল ভট্টাচার্য-বিবরণে ॥ ২৭১ ॥

গোপীনাথাচার্য গেলা প্রভু-দরশনে ।
প্রভু তাঁরে পুছিল ভট্টাচার্য-বিবরণে ॥ ২৭১ ॥

গোপীনাথাচার্য—গোপীনাথ আচার্য; **গেলা**—গয়ে; **প্রভু-দরশনে**—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু के दर्शन करने; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **তাঁরে**—उनको; **পুছিল**—पूछा; **ভট্টাচার্য-বিবরণে**—सार्वभौम भट्टाचार्य के घर का हालचाल।

अनुवाद

उसी समय गोपीनाथ आचार्य श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने आये, तो महाप्रभु ने उनसे सार्वभौम भट्टाचार्य के घर में घट रही घटनाओं के बारे में पूछा।

আচার্য কহে,—উপবাস কৈল দুই জন ।
বিসূচিকা-ব্যাধিতে অমোঘ ছাড়িছে জীবন ॥ ২৭২ ॥

আচার্য কহে,—উপবাস কৈল দুই জন ।
বিসূচিকা-ব্যাধিতে অমোঘ ছাড়িছে জীবন ॥ ২৭২ ॥

আচার্য কহে—गोपीनाथ आचार्य ने कहा; **উপবাস**—उपवास; **কৈল**—किया; **দুই জন**—दोनों ने; **বিসূচিকা-ব্যাধিতে**—हैजे के रोग से; **অমোঘ**—अमोघ; **ছাড়িছে জীবন**—मरने वाला है।

अनुवाद

गोपीनाथ आचार्य ने महाप्रभु को बतलाया कि पति-पत्नी दोनों ही उपवास पर हैं और उनका दामाद अमोघ हैजे से मर रहा है।

শুনি' কৃপাময় প্রভু আইলা ধাঞা ।
অমোঘেরে কহে তার বুকে হস্ত দিয়া ॥২৭৩॥

शुनि' कृपामय प्रभु आइला धाञा ।
अमोघेरे कहे तार बुके हस्त दिया ॥ २७३ ॥

शुनि'—यह सुनकर; **कृपा-मय**—कृपालु; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—आये; **धाञा**—दौड़कर; **अमोघेरे**—अमोघ को; **कहे**—कहा; **तार**—उसकी; **बुके**—छाती पर; **हस्त दिया**—अपना हाथ रखकर।

अनुवाद

ज्योहीं महाप्रभु ने सुना कि अमोघ मरणासन्न है, वे तुरन्त जल्दी-जल्दी उसके पास दौड़े गये। फिर अमोघ की छाती पर अपना हाथ रखकर वे इस प्रकार बोले।

সহজে নির্মল এই 'ব্রাহ্মণ'-হৃদয় ।
কৃষ্ণের বসিতে এই যোগ্য-স্থান হয় ॥২৭৪॥

सहजे निर्मल एइ 'ब्राह्मण'-हृदय ।
कृष्णेर वसिते एइ योग्य-स्थान हय ॥ २७४ ॥

सहजे—स्वभाव से; **निर्मल**—निर्मल; **एइ**—यह; **ब्राह्मण-हृदय**—ब्राह्मण का हृदय; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **वसिते**—बैठने के लिए; **एइ**—यह; **योग्य-स्थान**—योग्य स्थान; **हय**—है।

अनुवाद

"ब्राह्मण का हृदय स्वभाव से शुद्ध होता है, अतः कृष्ण के वास करने के लिए यह उपयुक्त स्थान होता है।

'মাৎসর্য'-চণ্ডাল কেনে ইহাঁ বসাইলে ।
পরম পবিত্র স্থান অপবিত্র কৈলে ॥২৭৫॥

'मात्सर्य्य'-चण्डाल केने इहाँ वसाइले ।
परम पवित्र स्थान अपवित्र कैले ॥ २७५ ॥

मात्सर्य्य—द्वेष; **चण्डाल**—चांडाल को; **केने**—क्यों; **इहाँ**—यहाँ; **वसाइले**—बैठने दिया; **परम पवित्र**—परम पवित्र; **स्थान**—स्थान को; **अपवित्र**—अपवित्र; **कैले**—तुमने किया है।

अनुवाद

"उसमें तुमने ईर्ष्या रूपी चण्डाल को भी स्थान क्यों दिया? इसी के कारण तुमने अपने अत्यन्त पवित्र स्थान, हृदय को भी दूषित कर दिया है।

सार्वभौम-सङ्गे तोमार 'कलुष' हैल क्षय ।
'कल्मष' घुचिले जीव 'कृष्ण-नाम' लय ॥ २७६ ॥

सार्वभौम-सङ्गे तोमार 'कलुष' हैल क्षय ।
'कल्मष' घुचिले जीव 'कृष्ण-नाम' लय ॥ २७६ ॥

सार्वभौम-सङ्गे—सार्वभौम की संगति से; **तोमार**—तुम्हारा; **कलुष**—कल्मष; **हैल क्षय**—अब समाप्त हो गया है; **कल्मष**—कल्मष; **घुचिले**—समाप्त होने पर; **जीव**—जीव; **कृष्ण-नाम**—हरे कृष्ण महामंत्र; **लय**—जप सकता है।

अनुवाद

"किन्तु सार्वभौम भट्टाचार्य की संगति से तुम्हारा सारा कल्मष घुल चुका है। जब मनुष्य के हृदय का सारा कल्मष धुल जाता है, तब वह हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन कर सकता है।

उठह, अमोघ, तुमि लओ कृष्ण-नाम ।
अचिरे तोमारे कृपा करिबे भगवान् ॥ २७७ ॥

उठह, अमोघ, तुमि लओ कृष्ण-नाम ।
अचिरे तोमारे कृपा करिबे भगवान् ॥ २७७ ॥

उठह—उठो; **अमोघ**—अमोघ; **तुमि**—तुम; **लओ**—जप करो; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण का पावन नाम; **अचिरे**—अति शीघ्र; **तोमारे**—तुम पर; **कृपा**—कृपा; **करिबे**—करेंगे; **भगवान्**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"अतएव हे अमोघ, तुम उठो और हरे कृष्ण महामन्त्र का जप करो! यदि तुम ऐसा करोगे, तो कृष्ण अवश्य ही तुम पर कृपा करेंगे।"

तात्पर्य

परम सत्य की अनुभूति तीन अवस्थाओं में की जाती है—निर्विशेष ब्रह्म, परमात्मा तथा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्। ये तीनों एक ही सत्य हैं, किन्तु ब्रह्म, परमात्मा तथा भगवान् तीन विभिन्न पहलू हैं। ब्रह्म को जानने वाला ब्राह्मण कहलाता है और जब ब्राह्मण भगवान् की भक्तिमयी सेवा में लग जाता है, तब वह वैष्णव कहलाता है। जब तक मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को नहीं जान लेता, तब तक निर्विशेष ब्रह्म की उसकी अनुभूति अपूर्ण रहती है। भले ही कोई ब्राह्मण *नामाभास* के पद पर हरे कृष्ण मन्त्र का जप करे, किन्तु वह शुद्ध ध्वनि नहीं होती। जब वह ब्राह्मण भगवान् के साथ अपने सनातन सम्बन्ध को समझते हुए उनकी सेवा करता है, तो उसकी भक्ति *अभिधेय* कहलाती है। जब वह इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है, तो वह *भागवत* या वैष्णव कहलाता है। इससे सूचित होता है कि वह कल्मष तथा भौतिक आसक्ति से मुक्त हो चुका है। इसकी पुष्टि *भगवद्गीता* (७.२८) में भगवान् कृष्ण ने की है :

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः॥

"जिन्होंने इस जन्म में तथा पूर्वजन्म में पुण्यकर्म किया है, जिनके पापकर्म समूल नष्ट हो चुके हैं और जो मोह के द्वन्द्व से मुक्त हैं, वे संकल्पपूर्वक मेरी सेवा करते हैं।"

कोई ब्राह्मण कितना ही बड़ा विद्वान क्यों न हो, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह भौतिक कल्मष से मुक्त है। किन्तु ब्राह्मण का कल्मष सत्त्वगुणमय होता है। भौतिक जगत् में तीन गुण हैं—सतो, रजो तथा तमोगुण और ये सभी कल्मष की विभिन्न श्रेणियाँ मात्र हैं। जब तक ब्राह्मण ऐसे कल्मष को लाँघकर शुद्ध भक्ति के पद को प्राप्त नहीं करता, तब तक उसे वैष्णव के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। एक निर्विशेषवादी परम सत्य के निर्विशेष ब्रह्म पहलू से अवगत हो सकता है, किन्तु उसके कार्यकलाप निर्विशेष

धरातल पर होते हैं। कभी-कभी वह भगवान् के रूप (*सगुण उपासना*) की कल्पना करता है, किन्तु ऐसे प्रयास उसे पूर्ण साक्षात्कार प्राप्त करने में सहायता नहीं कर पाते। निर्विशेषवादी अपने आपको ब्राह्मण मान सकता है और वह सत्त्वगुणी भी हो सकता है, किन्तु इतने पर भी वह भौतिक प्रकृति के एक ना एक गुण से बद्ध रहता है। इसका अर्थ यह है कि वह तब भी मुक्त नहीं है, क्योंकि गुणों से पूर्णतया शुद्ध हुए बिना मुक्ति प्राप्त नहीं की जा सकती। किसी भी हालत में मायावाद दर्शन मनुष्य को बद्ध बनाये रखता है। यदि कोई उचित दीक्षा द्वारा वैष्णव बन जाता है, तो वह स्वतः ब्राह्मण बन जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। इसकी पुष्टि *गरुड़ पुराण* से होती है :

ब्राह्मणानां सहस्रेभ्यः सत्रयाजी विशिष्यते।
सत्रयाजीसहस्रेभ्यः सर्ववेदान्तपारगः।
सर्ववेदान्तवित्कोट्या विष्णुभक्तो विशिष्यते॥

"हजारों ब्राह्मणों में से कोई एक यज्ञ करने के योग्य होता है। ऐसे कई हजार योग्य ब्राह्मणों में से कोई एक वेदान्त दर्शन से पूर्णतः अवगत होता है। ऐसे करोड़ों विद्वान वेदान्तियों में कोई एक विष्णु-भक्त हो सकता है। और वही सर्वाधिक पूजनीय है।"

पूर्णतया योग्य ब्राह्मण हुए बिना आध्यात्म-विज्ञान में प्रगति नहीं की जा सकती। असली ब्राह्मण कभी भी वैष्णवों से ईर्ष्या नहीं करता। यदि वह ऐसा करता है, तो वह अपूर्ण नौसिखिया माना जाता है। निर्विशेषवादी ब्राह्मण सदैव वैष्णव सिद्धान्तों का विरोध करते हैं। वे वैष्णवों से ईर्ष्या करते हैं, क्योंकि उन्हें अपने जीवन का लक्ष्य ज्ञात नहीं रहता। *न ते विदुः स्वार्थगतिं हि विष्णुम्।* किन्तु जब एक ब्राह्मण वैष्णव बन जाता है, तो उसका द्वन्द्व समाप्त हो जाता है। यदि वह ब्राह्मण वैष्णव नहीं बनता, तो उसका ब्राह्मण-पद से पतन हो जाता है। इसकी पुष्टि *श्रीमद्भागवत* (११.५.३) द्वारा होती है—*न भजन्ति अवजानन्ति स्थानाद्भ्रष्टाः पतन्त्यधः।*

इस कलियुग में हम वास्तव में देख सकते हैं कि अनेक तथाकथित ब्राह्मण वैष्णवों से ईर्ष्या करते हैं। कलि के कल्मष से ग्रस्त ऐसे ब्राह्मण अर्चाविग्रह पूजा को काल्पनिक मानते हैं—*अर्च्ये विष्णौ शिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवे*

जातिबुद्धिः /ऐसा दूषित ब्राह्मण भगवान् के रूप की ऊपर ऊपर से कल्पना कर सकता है, किन्तु वास्तव में वह मन्दिर के अर्चाविग्रह को पत्थर या काष्ठ का बना मानता है। इसी तरह ऐसा कल्मष-ग्रस्त ब्राह्मण गुरु को सामान्य मनुष्य मानता है और जब कृष्णभावनामृत आन्दोलन किसी को वैष्णव बनाता है, तो वह विरोध करता है। ऐसे अनेकों ब्राह्मण हमसे यह कहकर लड़ने का प्रयास करते हैं, "आप किसी यूरोपियन या अमेरिकन को ब्राह्मण कैसे बना सकते हैं? ब्राह्मण तो केवल ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हो सकता है।" वे इस बात पर विचार ही नहीं करते कि प्रामाणिक शास्त्रों में कहीं भी ऐसा नहीं कहा गया। भगवान् कृष्ण द्वारा *भगवद्गीता* (४.१३) में विशेष रूप से कहा गया है—*चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः*—भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों तथा उनके लिए नियत कर्म के अनुसार ही मानव समाज के चार वर्णों की सृष्टि मेरे द्वारा हुई है।"

इस तरह ब्राह्मण जातिप्रथा की उपज नहीं है। वह तो केवल योग्यता के बल पर ही ब्राह्मण बनता है। इसी तरह वैष्णव भी किसी जाति से सम्बन्धित नहीं होता, प्रत्युत उसकी उपाधि उसके द्वारा की जाने वाली भक्ति से निर्धारित होती है।

শুনি' 'কৃষ্ণ' 'কৃষ্ণ' বলি' অমোঘ উঠিলা ।
প্রেমোন্মাদে মত্ত হঞা নাচিতে লাগিলা ॥২৭৮॥

शुनि' 'कृष्ण' 'कृष्ण' बलि' अमोघ उठिला ।
प्रेमोन्मादे मत्त हञा नाचिते लागिला ॥ २७८ ॥

शुनि'—सुनकर; **कृष्ण कृष्ण**—कृष्ण का पावन नाम; **बलि'**—कहकर; **अमोघ उठिला**—अमोघ उठ खड़ा हुआ; **प्रेमोन्मादे**—कृष्ण के प्रेमावेश में; **मत्त हञा**—उन्मत्त होकर; **नाचिते लागिला**—नाचने लगा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की वाणी सुनकर तथा उनका स्पर्श पाकर, मरणशय्या में पड़ा अमोघ उठ खड़ा हुआ और कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करने लगा। इस तरह वह प्रेमोन्मत्त होकर नाचने लगा।

কম্প, অশ্রু, পুলক, স্তম্ভ, স্বেদ, স্বর-ভঙ্গ ।
প্রভু হাসে দেখি' তার প্রেমের তরঙ্গ ॥২৭৯॥

कम्प, अश्रु, पुलक, स्तम्भ, स्वेद, स्वर-भङ्ग ।
प्रभु हासे देखि' तार प्रेमेर तरङ्ग ॥ २७९ ॥

कम्प—काँपना; **अश्रु**—अश्रु; **पुलक**—रोमांच; **स्तम्भ**—जड़ होकर; **स्वेद**—पसीना; **स्वर-भङ्ग**—स्वर का लड़खड़ाना; **प्रभु हासे**—श्री चैतन्य महाप्रभु हँसने लगे; **देखि'**—देखकर; **तार**—अमोघ की; **प्रेमेर तरङ्ग**—प्रेम की तरंगें।

अनुवाद

प्रेमोन्मत्त होकर नाचते समय अमोघ में सारे भावलक्षण—यथा कम्पन, अश्रु, पुलकित होना, स्तम्भ, स्वेद तथा स्वरभंग प्रकट हो आये। इस प्रेम-तरंगों को देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु हँसने लगे।

প্রভুর চরণে ধরি' করয়ে বিনয় ।
অপরাধ ক্ষম মোরে, প্রভু, দয়াময় ॥২৮০॥

प्रभुर चरणे धरि' करये विनय ।
अपराध क्षम मोरे, प्रभु, दयामय ॥ २८० ॥

प्रभुर चरणे—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल; **धरि'**—पकड़कर; **करये**—किया; **विनय**—निवेदन; **अपराध**—अपराध; **क्षम**—कृपया क्षमा करो; **मोरे**—मेरे; **प्रभु**—हे प्रभु; **दया-मय**—दयामय।

अनुवाद

अमोघ महाप्रभु के चरणकमलों पर गिर पड़ा और विनीत भाव से बोला, "हे दयामय प्रभु, कृपया मेरा अपराध क्षमा करें।"

এই ছার মুখে তোমার করিনু নিন্দনে ।
এত বলি' আপন গালে চড়ায় আপনে ॥২৮১॥

एइ छार मुखे तोमार करिनु निन्दने ।
एत बलि' आपन गाले चड़ाय आपने ॥ २८१ ॥

एइ छार मुखे—इस घृणित मुख से; **तोमार**—आपकी; **करिनु**—मैंने की; **निन्दने**—

निन्दा; **एत बलि'**—यह कहकर; **आपन**—अपनी; **गाले**—गालों पर; **चड़ाय**—थप्पड़ मारा; **आपने**—स्वयं।

अनुवाद

अमोघ ने न केवल महाप्रभु से क्षमा-दान माँगा, अपितु वह यह कहकर अपने गालों पर चपत लगाने लगा, "मैंने इसी मुँह से आपकी निन्दा की है।"

चड़ाइते चड़ाइते गाल फुलाइल ।
हाते धरि' गोपीनाथाचार्य निषेधिल ॥२८२॥

चड़ाइते चड़ाइते गाल फुलाइल ।
हाते धरि' गोपीनाथाचार्य्य निषेधिल ॥ २८२॥

चड़ाइते चड़ाइते—बारम्बार चपत लगाकर; **गाल**—गाल; **फुलाइल**—सुजा दिया; **हाते धरि'**—उसके हाथ पकड़कर; **गोपीनाथ-आचार्य्य**—गोपीनाथ आचार्य ने ; **निषेधिल**—रोका।

अनुवाद

अमोघ अपने गालों पर तब तक चपत लगाता रहा, जब तक उसके गाल सूज नहीं गये। अन्त में गोपीनाथ आचार्य ने उसके हाथ पकड़कर उसे रोका।

प्रभु आश्वासन करे स्पर्शि' तार गात्र ।
सार्वभौम-सम्बन्धे तुमि मोर स्नेह-पात्र ॥२८३॥

प्रभु आश्वासन करे स्पर्शि' तार गात्र ।
सार्वभौम-सम्बन्धे तुमि मोर स्नेह-पात्र ॥ २८३॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **आश्वासन करे**—आश्वासन दिया; **स्पर्शि'**—स्पर्श करके; **तार**—उसके; **गात्र**—शरीर को; **सार्वभौम-सम्बन्धे**—सार्वभौम भट्टाचार्य के साथ सम्बन्ध होने के कारण; **तुमि**—तुम; **मोर**—मेरे; **स्नेह-पात्र**—स्नेह-पात्र।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने उसके शरीर का स्पर्श करते हुए उसे यह कहकर शान्त किया, "तुम मेरे स्नेह-पात्र हो, क्योंकि तुम सार्वभौम भट्टाचार्य के दामाद हो।

সার্বভৌম-গৃহে দাস-দাসী, যে কুক্কুর ।
সেহ মোর প্রিয়, অন্য জন রহু দূর ॥২৮৪॥

সার্বভৌম-গৃহে দাস-দাসী, যে কুক্কুর ।
সেহ মোর প্রিয়, অন্য জন রহু দূর ॥ ২৮৪॥

সার্বভৌম-গৃহে—সার্বভৌম ভট্টাচার্য के घर के; **দাস-দাসী**—दास-दासियाँ; **যে কুক্কুর**—एक कुत्ता भी; **সেহ**—वे सब; **মোর**—मुझे; **প্রিয়**—अति प्रिय; **অন্য জন**—अन्य लोगों की; **রহু দূর**—क्या बात करें।

अनुवाद

"सार्वभौम भट्टाचार्य के घर का हर प्राणी मुझे अत्यन्त प्रिय है—यहाँ तक कि उनके दास-दासियाँ तथा उनका कुत्ता भी। तो भला उनके सम्बन्धियों के विषय में क्या कहूँ?

অপরাধ' নাহি, সদা লও কৃষ্ণ-নাম ।
এত বলি' প্রভু আইলা সার্বভৌম-স্থান ॥২৮৫॥

অপরাধ' নাহি, সদা লঅো কৃষ্ণ-নাম ।
এত বলি' প্রভু আইলা সার্বভৌম-স্থান ॥ ২৮৫॥

অপরাধ' নাহি—अपराध न करो; **সদা**—सदा; **লঅো**—जपो; **কৃষ্ণ-নাম**—हरे कृष्ण महामंत्र; **এত বলি'**—यह कहकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **আইলা**—आये; **সার্বভৌম-স্থান**—सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर।

अनुवाद

"अरे अमोघ, अब तुम सदैव हरे कृष्ण महामन्त्र का जप करना और आगे कोई अपराध न करना।" अमोघ को इस तरह उपदेश देकर श्री चैतन्य महाप्रभु सार्वभौम के घर गये।

প্রভু দেখি' সার্বভৌম ধরিলা চরণে ।
প্রভু তাঁরে আলিঙ্গিয়া বসিলা আসনে ॥২৮৬॥

প্রভু দেখি' সার্বভৌম ধরিলা চরণে ।
প্রভু তাঁরে আলিঙ্গিয়া বসিলা আসনে ॥ ২৮৬॥

प्रभु देखि'—श्री चैतन्य महाप्रभु को देखकर; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **धरिला चरणे**—उनके चरण पकड़ लिए; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ताँरे**—उनका; **आलिङ्गिया**—आलिंगन करके; **वसिला आसने**—अपने आसन पर बैठ गये।

अनुवाद

महाप्रभु को देखते ही सार्वभौम भट्टाचार्य ने उनके चरणकमल पकड़ लिए। महाप्रभु भी उनका आलिंगन किया और फिर बैठ गये।

प्रभु कहे,—अमोघ शिशु, किबा तार दोष ।
केने उपवास कर, केने कर रोष ॥ २८७॥

प्रभु कहे,—अमोघ शिशु, किबा तार दोष ।
केने उपवास कर, केने कर रोष ॥ २८७॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **अमोघ शिशु**—अमोघ बच्चा है; **किबा**—क्या; **तार दोष**—उसका दोष; **केने**—क्यों; **उपवास कर**—उपवास कर रहे हो; **केने**—क्यों; **कर रोष**—आप क्रुद्ध हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह कहकर सार्वभौम को शान्त किया, "आखिर आपका दामाद अमोघ एक बच्चा है। अतएव इसमें उसका क्या दोष? आप क्यों उपवास कर रहे हो और गुस्सा क्यों कर रहे हो?

उठ, स्नान कर, देख जगन्नाथ-मुख ।
शीघ्र आसि, भोजन कर, तबे मोर सुख ॥ २८८॥

उठ, स्नान कर, देख जगन्नाथ-मुख ।
शीघ्र आसि, भोजन कर, तबे मोर सुख ॥ २८८॥

उठ—उठो; **स्नान कर**—स्नान करो; **देख**—दर्शन करो; **जगन्नाथ-मुख**—भगवान् जगन्नाथ के मुख के; **शीघ्र आसि**—शीघ्र लौटकर; **भोजन कर**—भोजन करो; **तबे मोर सुख**—तभी मुझे खुशी होगी।

अनुवाद

"उठो और स्नान करो। फिर जाकर जगन्नाथजी के मुख का दर्शन करो। तब लौटकर अपना भोजन करो। तभी मैं प्रसन्न होऊँगा।

তাবত্রহিব আমি এথায় বসিয়া ।
যাবন্না খাইবে তুমি প্রসাদ আসিয়া ॥২৮৯॥

तावत्रहिब आमि एथाय वसिया ।
ग्रावत्ना खाइबे तुमि प्रसाद आसिया ॥ २८९ ॥

तावत्—तब तक; **रहिब**—रहूँगा; **आमि**—मैं; **एथाय**—यहाँ; **वसिया**—बैठा; **ग्रावत्**—जब तक; **ना खाइबे**—नहीं खाओगे; **तुमि**—आप; **प्रसाद**—जगन्नाथ भगवान् का प्रसाद; **आसिया**—यहाँ आकर।

अनुवाद

"जब तक आप लौट करके जगन्नाथजी का प्रसाद ग्रहण नहीं कर लेते, तब तक मैं यहीं रुका रहूँगा।"

প্রভু-পদ ধরি' ভট্ট কহিতে লাগিলা ।
মরিত' অমোঘ, তারে কেনে জীয়াইলা ॥২৯০॥

प्रभु-पद धरि' भट्ट कहिते लागिला ।
मरित' अमोघ, तारे केने जीयाइला ॥ २९० ॥

प्रभु-पद—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल; **धरि'**—पकड़कर; **भट्ट**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **कहिते लागिला**—कहने लगे; **मरित' अमोघ**—अमोघ मर गया होता; **तारे**—उसको; **केने**—क्यों; **जीयाइला**—जीवित किया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों को पकड़कर भट्टाचार्य ने कहा, "आपने अमोघ को क्यों जिलाया? यदि वह मर गया होता तो अच्छा हुआ होता।"

প্রভু কহে,—অমোঘ শিশু, তোমার বালক ।
বালক-দোষ না লয় পিতা, তাহাতে পালক ॥২৯১॥

प्रभु कहे,—अमोघ शिशु, तोमार बालक ।
बालक-दोष ना लय पिता, ताहाते पालक ॥ २९१ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **अमोघ शिशु**—अमोघ बच्चा है; **तोमार**

बालक—आपका पुत्र; **बालक-दोष**—बालक का दोष; **ना लय**—नहीं स्वीकार करता; **पिता**—पिता; **ताहाते**—उसका; **पालक**—पालक।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "अमोघ तो बच्चा है और आपका पुत्र है। पिता अपने पुत्र के दोष पर ध्यान नहीं देता, विशेष करके तब जब वह उसका पालक हो।

এবে 'বৈষ্ণব' হৈল, তার গেল 'অপরাধ' ।
তাহার উপরে এবে করহ প্রসাদ ॥২৯২॥

एबे 'वैष्णव' हैल, तार गेल 'अपराध' ।
ताहार उपरे एबे करह प्रसाद ॥ २९२॥

एबे—अब; **वैष्णव हैल**—वैष्णव बन गया है; **तार**—उसका; **गेल**—चला गया है; **अपराध**—अपराध; **ताहार उपरे**—उसके ऊपर; **एबे**—अब; **करह प्रसाद**—दया दिखाओ।

अनुवाद

"अब वैष्णव बन जाने से वह अपराधरहित हो चुका है। अब आप निःसंकोच भाव से उस पर कृपा कर सकते हैं।"

ভট্ট কহে,—চল, প্রভু, ঈশ্বর-দরশনে ।
স্নান করি' তাঁহা মুঞি আসিছোঁ এখনে ॥২৯৩॥

भट्ट कहे,—चल, प्रभु, ईश्वर-दरशने ।
स्नान करि' ताँहा मुञि आसिछों एखने ॥ २९३॥

भट्ट कहे—भट्टाचार्य ने कहा; **चल**—जाओ; **प्रभु**—मेरे पुत्र; **ईश्वर-दरशने**—भगवान् जगन्नाथ का दर्शन करने; **स्नान करि'**—स्नान करके; **ताँहा**—वहाँ; **मुञि**—मैं; **आसिछों**—लौट आऊँगा; **एखने**—यहाँ।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "हे प्रभु, चलिए, जगन्नाथजी का दर्शन करने चलिए। मैं स्नान करने के बाद वहाँ जाऊँगा और तब लौटूँगा।"

প্রভু কহে,——গোপীনাথ, ইহাঞি রহিবা ।
ইঁহো প্রসাদ পাইলে, বার্তা আমাকে কহিবা ॥২৯৪॥

প্রভু কহে,——গোপীনাথ, ইহাঞি রহিবা ।
ইঁহো প্রসাদ পাইলে, বার্তা আমাকে কহিবা ॥ ২৯৪॥

প্রভু কহে—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু ने कहा; **গোপীনাথ**—गोपीनाथ; **ইহাঞি রহিবা**—कृपया यहाँ रहो; **ইঁহো**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **প্রসাদ পাইলে**—जब वे प्रसाद ग्रहण कर ले ; **বার্তা**—समाचार; **আমাকে কহিবা**—मुझे सूचित करो।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने गोपीनाथ से कहा, "तुम यहीं रुको और मुझे सूचित करना जब सार्वभौम भट्टाचार्य प्रसाद ग्रहण कर चुके।"

এত বলি' প্রভু গেলা ঈশ্বর-দরশনে ।
ভট্ট স্নান দর্শন করি' করিলা ভোজনে ॥২৯৫॥

এত বলি' প্রভু গেলা ঈশ্বর-দরশনে ।
ভট্ট স্নান দর্শন করি' করিলা ভোজনে ॥ ২৯৫॥

এত বলি'—यह कहकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **গেলা**—चले गये; **ঈশ্বর-দরশনে**—भगवान् जगन्नाथ का दर्शन करने; **ভট্ট**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **স্নান দর্শন করি'**—स्नान तथा भगवान् जगन्नाथ का दर्शन करके; **করিলা ভোজনে**—भोजन किया।

अनुवाद

यह कहकर श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् जगन्नाथ का दर्शन करने चले गये। सार्वभौम भट्टाचार्य ने स्नान किया, भगवान् जगन्नाथ का दर्शन किया और फिर वे भोजन ग्रहण करने के लिए अपने घर लौट आये।

সেই অমোঘ হৈল প্রভুর ভক্ত 'একান্ত' ।
প্রেমে নাচে, কৃষ্ণ-নাম লয় মহা-শান্ত ॥২৯৬॥

সেই অমোঘ হৈল প্রভুর ভক্ত 'একান্ত' ।
প্রেমে নাচে, কৃষ্ণ-নাম লয় মহা-শান্ত ॥ ২৯৬॥

সেই অমোঘ—वही अमोघ; **হৈল**—हो गया; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **ভক্ত**—भक्त;

एकान्त—दृढ़; **प्रेमे नाचे**—प्रेमावेश में नाचने लगा; **कृष्ण-नाम लय**—हरे कृष्ण महामंत्र जपने लगा; **महा-शान्त**—अति शान्त होकर।

अनुवाद

इसके बाद अमोघ श्री चैतन्य महाप्रभु का शुद्ध भक्त बन गया। वह प्रेम में नाचता और शान्त भाव से भगवान् कृष्ण के नाम का जप करता।

ঐছে চিত্র-লীলা করে শচীর নন্দন ।
যেই দেখে, শুনে, তাঁর বিস্ময় হয় মন ॥২৯৭॥

ऐछे चित्र-लीला करे शचीर नन्दन ।
येइ देखे, शुने, ताँर विस्मय हय मन ॥२९७॥

ऐछे—इस प्रकार; **चित्र-लीला**—विविध लीलाएँ; **करे**—कीं; **शचीर नन्दन**—शची माता के पुत्र; **येइ देखे**—जो कोई देखता है; **शुने**—सुनता है; **ताँर**—उसका; **विस्मय**—चकित; **हय**—हो जाता है; **मन**—मन।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपनी विविध लीलाएँ सम्पन्न कीं। जो भी उन्हें देखता या सुनता है, वह विस्मित हुए बिना नहीं रहता।

ঐছে ভট্ট-গৃহে করে ভোজন-বিলাস ।
তার মধ্যে নানা চিত্র-চরিত্র-প্রকাশ ॥২৯৮॥

ऐछे भट्ट-गृहे करे भोजन-विलास ।
तार मध्ये नाना चित्र-चरित्र-प्रकाश ॥२९८॥

ऐछे—इस प्रकार; **भट्ट-गृहे**—सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर; **करे**—कीं; **भोजन-विलास**—भोजन की लीला; **तार मध्ये**—उस लीला के मध्य; **नाना**—नाना प्रकार की; **चित्र-चरित्र**—लीलाएँ; **प्रकाश**—दिखाई।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य के घर में भोजन करने का आनन्द उठाया। इसी एक लीला के अन्तर्गत अनेक अद्भुत लीलाएँ प्रकट हुईं।

সার্বভৌম-ঘরে এই ভোজন-চরিত ।
সার্বভৌম-প্রেম যাঁহা হইলা বিদিত ॥২৯৯॥

সার্বভৌম-ঘরে এই ভোজন-চরিত ।
সার্বভৌম-প্রেম য্যাঁহা হইলা বিদিত ॥ ২৯৯ ॥

সার্বভৌম-ঘরে—সার্বভৌম ভট্টাচার্য ने घर पर; **এই**—ये; **ভোজন-চরিত**—भोजन-लीलाएँ; **সার্বভৌম-প্রেম**—सार्वभौम भट्टाचार्य का प्रेम; **য্যাঁহা**—जहाँ; **হইলা**—हो गया; **বিদিত**—सर्वज्ञात।

अनुवाद

ये श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के विशिष्ट लक्षण हैं। इस तरह महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर भोजन किया और महाप्रभु के प्रति सार्वभौम का प्रेम विख्यात हुआ।

तात्पर्य

जैसाकि *शाखा निर्णयामृत* में कहा गया है :

अमोघपण्डितं वन्दे श्रीगौरेणात्मसात्कृतम् ।
प्रेमगद्गदसान्द्राङ्गं पुलकाकुलविग्रहम् ॥

"मैं उन अमोघ पण्डित को नमस्कार करता हूँ, जिन्हें श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपना बना लिया। इसके फलस्वरूप वे निरन्तर प्रेम में मग्न रहते थे और गदगद वाणी तथा रोमांच द्वारा भाव लक्षण प्रकट करते थे।"

ষাঠীর মাতার প্রেম, আর প্রভুর প্রসাদ ।
ভক্ত-সম্বন্ধে যাহা ক্ষমিল অপরাধ ॥৩০০॥

ষাঠীর মাতার প্রেম, আর প্রভুর প্রসাদ ।
ভক্ত-সম্বন্ধে য্যাহা ক্ষমিল অপরাধ ॥ ৩০০ ॥

ষাঠীর মাতার প্রেম—षाठी की माता का प्रेम; **আর**—और; **প্রভুর প্রসাদ**—श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा; **ভক্ত-সম্বন্ধে**—भक्त के साथ सम्बन्धित होने के कारण; **য্যাহা**—जहाँ; **ক্ষমিল অপরাধ**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपराध क्षमा कर दिया।

अनुवाद

इस तरह मैंने सार्वभौम की पत्नी षाठी की माता के प्रेम का वर्णन किया है। मैंने श्री चैतन्य महाप्रभु की महान् कृपा का भी वर्णन किया है,

जिसे उन्होंने अमोघ के अपराध को क्षमा करके प्रदर्शित किया। उन्होंने अमोघ का भक्त के साथ सम्बन्ध होने के कारण ऐसा किया।

तात्पर्य

अमोघ अपराधी था, क्योंकि उसने महाप्रभु की निन्दा की थी। फलस्वरूप वह हैजे से मरने ही वाला था। रोगग्रस्त होने के बाद अमोघ को अपने अपराधों से मुक्त होने का अवसर प्राप्त नहीं हो पाया, किन्तु महाप्रभु को सार्वभौम भट्टाचार्य तथा उनकी पत्नी दोनों अत्यन्त प्रिय थे। उनके सम्बन्ध के कारण ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने अमोघ को क्षमा कर दिया। इस तरह वह महाप्रभु से दण्डित होने के बजाय महाप्रभु की दया के कारण बचा लिया गया। यह सब श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति सार्वभौम भट्टाचार्य के अटल प्रेम के कारण हुआ। बाहर से अमोघ सार्वभौम भट्टाचार्य का दामाद था और सार्वभौम उसका पालन कर रहे थे। फलतः यदि अमोघ को क्षमा नहीं किया जाता, तो उसके दण्ड से सार्वभौम सीधे प्रभावित होते। अमोघ की मृत्यु से अप्रत्यक्ष रूप से सार्वभौम भट्टाचार्य की मृत्यु हो गई होती।

श्रद्धा करि' एই লীলা শুনে যেই জন ।
অচিরাত্পায় সেই চৈতন্য-চরণ ॥ ৩০১॥

श्रद्धा करि' एइ लीला शुने येइ जन ।
अचिरात्पाय सेइ चैतन्य-चरण ॥ ३०१॥

श्रद्धा करि'—श्रद्धा तथा प्रेम सहित; **एइ लीला**—यह लीला; **शुने**—सुनता है; **येइ जन**—जो कोई व्यक्ति; **अचिरात्**—अति शीघ्र; **पाय**—पाता है; **सेइ**—वह; **चैतन्य-चरण**—भगवान् चैतन्य के चरणकमल।

अनुवाद

जो कोई श्रद्धा तथा प्रेम से श्री चैतन्य महाप्रभु की इन लीलाओं को सुनता है, उसे तुरन्त ही महाप्रभु के चरणों में शरण मिलेगी।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ৩০২॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे ग्यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ ३०२॥

श्री-रूप—श्री रूप गोस्वामी; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **पदे**—चरणकमलों पर; **ग्यार**—जिसकी ; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* पुस्तक; **कहे**—वर्णन करता है; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की प्रार्थना करते हुए और सदैव उनकी कृपा की इच्छा रखते हुए उन्हीं के पदचिह्नों पर चलते हुए मैं कृष्णदास श्री चैतन्य-चरितामृत कह रहा हूँ।

इस तरह श्रीचैतन्य-चरितामृत मध्यलीला के पन्द्रहवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ जिसमें सार्वभौम भट्टाचार्य के घर पर महाप्रभु के भोजन करने का वर्णन हुआ है ।